

Peer reviewed Journal

Impact Factor: 7.265

ISSN-2230-9578

Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Referred Journal

August 2022 Volume-14 Issue-12

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

*'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot
No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.)*



Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Referred and Peer Reviewed Journal

August -2022 Volume-14 Issue-12

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

EDITORIAL BOARD

<i>Nguyen Kim Anh [Hanoi] Vietnam</i>	<i>Prof. Andrew Cherepanow Detroit, Michigan [USA]</i>	<i>Prof. S. N. Bharambe Jalgaon[M.S]</i>
<i>Dr. R. K. Narkhede Nanded [M.S]</i>	<i>Prof. B. P. Mishra, Aizawal [Mizoram]</i>	<i>Prin. L. N. Varma Raipur [C. G.]</i>
<i>Dr. C. V. Rajeshwari Pottikona [AP]</i>	<i>Prof. R. J. Varma Bhavnagar [Guj]</i>	<i>Dr. D. D. Sharma Shimla [H.P.]</i>
<i>Dr. AbhinandanNagraj Benglore[Karnataka]</i>	<i>Dr. VenuTrivedi Indore[M.P.]</i>	<i>Dr. ChitraRamanan Navi ,Mumbai[M.S]</i>
<i>Dr. S. T. Bhukan Khiroda[M.S]</i>	<i>Prin. A. S. KolheBhalod [M.S]</i>	<i>Prof.KaveriDabholkar Bilaspur [C.G]</i>

Published by-Chief Editor, Dr. R. V. Bhole, (Maharashtra)

The Editors shall not be responsible for originality and thought expressed in the papers. The author shall be solely held responsible for the originality and thoughts expressed in their papers.

© All rights reserved with the Editors

CONTENTS

Sr. No.	Paper Title	Page No.
1	जितेंद्र निर्मोही के साहित्य मे पर्यावरण चेतना राजाराम धाकड	1-2
2	हिंदी मे अनुदित सर्जनात्मक मराठी पौराणिक उपन्यास'ययाति' एक अध्ययन प्रा. डॉ. वनिता त्र्यंबक पवार - निकम	3-7
3	भारतीय स्वातंत्र्याचा अमृत महोत्सव: लोकशाहीची वाटचाल आणि सद्यस्थिती डॉ दत्ताजी हुलप्पा मेहत्रे	8-11
4	कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे राजकीय योगदान श्री उमेश जयराम पाटील, प्रा.डॉक्टर संभाजी संतोष पाटील	12-14
5	1970 च्या दशकातील दलित स्वकथनाचे स्वरूप प्रा. डॉ. सुरेश व्यंकटराव कदम	15-20
6	मराठी बालकथा : एक अभ्यास (१९६० ते १९८०) प्रा.अजित जयराम जाधव	21-24
7	बालकांच्या सुदृढ आरोग्याकरीता लसीकरणाची भूमिका संगिता गंगाराम मेश्राम	25-28
8	सातपुडा क्षेत्र में कृषी विकास के स्तर का भू- वैज्ञानिक प्रतिरूप: एक भौगोलिक विश्लेषण डॉ. अजय तिवारी	29-33
9	मध्ययुगिन भारताच्या इतिहासातील अहिल्यादेवी होळकर यांचे कर्तृत्व आणि कार्य प्रा. विजय वाकोडे	34-38
10	कोविड-19 संकट के दौरान बैंकिंग क्षेत्र का भारतीय कृषी में योगदान अलोक कुमार श्रीवास्तव, डॉ. आनंद कुमार सिंह	39-42
11	उषा प्रियवदा के "नदी" उपन्यास में प्रवासी स्त्री जीवन का यथार्थ डॉ .आर .एन .वाकले, प्रा.आर.पी.ठाकरे	43-46
12	राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 2020 एक विश्लेषणात्मक अभ्यास Dr.Satish baburao Donge	47-50
13	भारतीय तत्त्वज्ञान और संत कबीर का योगदान प्रा.डॉ.मानीतकुमार अमृतराव वाकळे	51-54
14	स्त्री भ्रूण हत्या एक सामाजिक समस्या डॉ. मधु प्रभाकर खोब्रागडे	55-58
15	शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन डॉ. रीना मेश्राम	59-60
16	कोविड-19 काल में ऑनलाइन शिक्षण एक चुनौती : उच्च शिक्षा उत्तराखण्ड के दुर्गम पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों के संदर्भ में एक तुलनात्मक अध्ययन Dr. Nirmala Lohani, Dr. Namita Misra	61-64
17	"मुलगी झाली हो" इस नाट्य द्वारा नारीमुक्ती का परामर्श डॉ. वैशाली केशव बोदेले	65-68
18	भारतातील सामुदायिक आरोग्य विकास डॉ. राजू के. माटे	69-71
19	बदलत्या हवामानाचा भारतातील तांदूळ उत्पादनावरील परिणाम प्रा. सुकुमार दत्ता पाटील, डॉ . एल.एच .पाटील	72-74

जितेन्द्र निर्मोही के साहित्य में पर्यावरण चेतना

राजाराम धाकड़

(कोटा विश्वविद्यालय कोटा) सहायक आचार्य (हिन्दी विषय) अ.रा.व.जैन विश्व भारती स्नातकोत्तर महाविद्यालय छबड़ा जिला बारां (राज.)।
शोधार्थी:- हिन्दी विभाग राजकीय कन्या कला महाविद्यालय कोटा (राज.) ।

DOI- 10.5281/zenodo.7053320

Abstract:-

जितेन्द्र निर्मोही एक मात्र ऐसे साहित्यकार हैं जिनके साहित्य में हाड़ौती क्षेत्र का साहित्य, यहाँ की संस्कृति, यहाँ के साहित्यकार, यहाँ की पुरा सम्पदा, यहाँ का इतिहास, यहाँ की भूगोल, यहाँ की प्रकृति के बारे में प्रचुर सामग्री मिलती है।" वो इस क्षेत्र की विविध साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, पर्यावरणीय समस्याओं से सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं तथा उनके इन संस्थाओं के पदाधिकारियों से भी सीधे सम्बन्ध है। "हाड़ौती अंचल के आधुनिक राजस्थानी काव्य" में उन्होंने यहाँ के राजस्थानी कवियों के काव्य को आधोपात अध्ययन कर काव्य की विविध विधाओं में उनके काव्यांश उद्धरित किये हैं। इस समीक्षक कृति में आजादी के बाद का हाड़ौती काव्य जगत प्रस्तुत करने का प्रयास किया। कृति के प्रारम्भ में सूर्यमल्ल मिश्रण के काव्य जगत के बारे में बताया गया। इस प्रकार जितेन्द्र निर्मोही के साहित्य में विविध चेतना के स्वरों का समागम है। जिसमें प्रमुख है प्रकृति के प्रति प्यार, रिश्ते का तादात्म्य, सामाजिक सरोकार, बदलते मानवीय मूल्य, शोषण के विरुद्ध आवाज, सूफी दर्शन, जीजिविषा आदि। सच कहा जाए तो जितेन्द्र निर्मोही का साहित्य विविध चेतना के स्वरों का पुंज है। एक कवि गीतकार, कहानीकार, निबन्धकार, समीक्षक वर्तमान कविता में सृजनरत पीढ़ी के कवियों में जितेन्द्र निर्मोही को पढ़ने का अलग ही अनुभव है। वे अपने समय की विभिन्नताएँ प्रतिक्रियाएँ और उनके बीच बनती-बिगड़ती तमाम मानवीय सम्भावनाओं, आकांक्षाओं की सहज अभिव्यक्ति करते हैं। वर्तमान जीवन ममें व्याप्त त्रासदी के प्रति गहरे सृजनात्मक विरोध के साथ-साथ एक बड़े परिवर्तन की और इंगित करने की व्याकुलता का आवेश उनकी कविता बन गया है। यही कारण है कि देश की प्रतिनिधी पत्र-पत्रिकाओं में वे प्रकाशित होते रहते हैं उनकी सृजनयात्रा गीतों से प्रारम्भ होती है। जो साहित्य की विविध विधाओं से गुजरती है। जितेन्द्र निर्मोही जी के साहित्य में सामाजिक परिवेश की विपुल सामग्री है, कहीं-कहीं तो राजस्थानी साहित्य के शब्द लड़ी-तूमा की तरह एक दूसरे पारजेब के घुंघरुओं की तरह जुड़े हुए और ध्वनित करते दिखाई देते हैं। इस प्रकार जितेन्द्र निर्मोही के काव्य दर्शन की बहुलताएँ हैं, उनका गीत गजल है रुबाई है, नई कविता काव्य सौन्दर्य के साथ-साथ दर्शन का गहन भाव लिए हुए है।

व्यवित्त:-

एक साहित्यकार कवि साहित्यकार निबन्धकार समीक्षक वर्तमान कविता में सृजनरत पीढ़ी के कवियों में जितेन्द्र निर्मोही को पढ़ने का अलग ही अनुभव है, वे अपने समय की विभिन्नताएँ प्रतिक्रियाएँ और उनके बीच बनती बिगड़ती तमाम मानवीय संभावनाओं, आकांक्षाओं की सहज आर्थ व्यक्त करते हैं। जितेन्द्र निर्मोही का जन्म ७ अप्रैल १९५३ को जालावाड़ में हुआ, उनके पिता का नाम रमेश चन्द्र शर्मा है, जो अध्यापक थे। निर्मोही जी ने बी.एस. सी. (गणित) कर बाद में एम.ए. (हिन्दी) में किया तथा विद्यावाचस्पति की उपाधि प्राप्त की। निर्मोही जी का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ, आपके सभी परिजन साहित्य प्रेमी रहे हैं। हाड़ौती अंचल के लिए यह गौरव का विषय है कि आपकी प्रत्येक साहित्यिक कृति का मूल्यांकन भ्जी हुआ है और चर्चा भी हुई है।

पेपर:-

जितेन्द्र निर्मोही द्वारा पद्य हो या गद्य पर्यावरण चेतना पर व्यापक ध्यान दिया गया है। उनकी सम्पूर्ण देश में चर्चित प्रकृति काव्य संकलन "जंगल से गुजरते हुए" इसका उदाहरण है। इस रचना में चेतना एवं सरोकारों के बिंब उक्रे गये हैं। प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर मनुष्य विराट रूप हो जाता है कवि का कहना सच है "मेरी दृष्टि जब विस्तृत हो जाती है तब अरावली पर्वत श्रंखलाएँ छेटी दिखने में आती हैं।

मैं एक वृक्ष हिमालय सा दिखाई देता हूँ जो समष्टि को व्यष्टि में निहित करता है, और व्यष्टि को समष्टि में समाहित करता है। उस वक्त सचमुच मुझे वृक्ष होने का अहसास नहीं होता है, 'दृष्टि' शीर्षक इस अंश में निर्मोही जी ने पर्यावरण चेतना को मानवीय चेतना के रूप में जीवन्त चित्रित किया है। कवि का कहना सच ही है "न भाग्यो मोटर के संग, वृक्ष के साथ खड़े होकर बात करो।"

इस संकलन की सम्पूर्ण कविताएँ पर्यावरण चेतना से ओत प्रोत हैं, जिन्हे से लेकर राष्ट्रपति भवन तक पढ़ा गया है। पाठक को ये कविताएँ पर्यावरण संरक्षण के प्रति सचेत भी करती हैं। "न दिखाई दिए महुआ खेड़ा में महुए, बाँसखेड़ी में बाँस, पीपल खूँट में पीपल नीमशूरे में नीम बड़लावदा में बड़ा" इसका कारण और पर्यावरण के प्रति उदासीन मनुष्य समाज का चित्रण उनके द्वारा रचित कविता इक्कीसवीं सदी में दिखाई देता है- कटजे गये पेड़, घटता गया जल स्तर, बढ़ता गया प्रदूषण, फिर न जाने क्यों खुश है, इक्कीसवीं सदी में जाने वाला आदमी।"

यह वाक्य सही सन्दर्भ में मनुष्य को दोहन प्रवृत्ति प्रदूषण के प्रति चेतना जागृत करने का कारक है इस कृति पर स्वतंत्रता सेनानी नवनीत दास वैष्णव को सम्मान प्राप्त हुआ है। यह चेतना की अनूठी व अद्भुत कृति है। इस कृति में कवि ने अपने सचमुच

जंगल का अस्तित्व खतरे में है जैसे- अभ्यारण्य शीर्षक इस अंश में कवि ने लिखा है- अभ्यारण्य अभय-अरण्य हुआ फिर भी दहशत में भरे हैं शेर, भालू, हिरण, खरगोशादि सभी प्राणी, प्रत्येक वन्य प्राणी बन्दूक की आवाज पहचानता है, अपना अस्तित्व खतरे में मानता है।"

"प्रकृति से प्यार" शीर्षक अंश में वे लिखते हैं कि तपती है जब धरती उमड़ पड़ता है आसमान, प्रकृति आसमान नहीं होती वह सम्पूरक है। कवि ने यहाँ पर्यावरण चेतना को मानवीय चेतना के रूप में दर्शाया है। आज विश्व पर्यावरण की गम्भीर समस्या से घिरा हुआ है, जनसंख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि बढ़ती हुई निर्धनता एवं प्रदूषण की निरन्तर वृद्धि से समूचा विश्व चिंतित है। वातावरण में निरन्तर वृद्धि से समूचा विश्व चिंतित है, वातावरण में निरन्तर बढ़ता हुआ प्रदूषण पर्यावरण का खतरा बन गया है, विकास के बढ़ते हुए चरण औद्योगिकरण विज्ञान की तकनीक की प्रगति प्रकृति का असंतुलित दोहन वरम उपभोक्तावाद आदि ऐसे घटक हैं जो पर्यावरण प्रदूषण के लिए उत्तरदायी हैं।

वृक्षारोपण शीर्षक इस अंश में कवि ने कहा भी है "इस उम्मीद से रोजी कलम कि यहाँ

यादगार वृक्ष उग आये।" सचमुच पर्यावरण प्रदूषण व वरम उपभोक्तावाद आदि के परिणाम मनुष्य और शेष प्राणी के लिए भयंकर हो सकते हैं। रोग, भूखमरी, बाढ़, और सर्वनाश कुछ भी हो सकता है। निर्मोही जी ने 'वृक्ष अब उरने लगा है' शीर्षक अंश में यह लिखा है वृक्ष को अब अक्षय नहीं लगता शोर वाहनों का घुँआ पतपन से, ब्रे. वाली गर्मी! उसे नहीं सुहाती। प्रकृति तत्व नदी वनस्पतियां जीव-जन्तु प्राणी, यहाँ तक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पर्यावरण के अन्तर्गत अन्त में श्रद्धांजलि शीर्षक अंश में वे लिखते हैं कि जंगल की रक्षा हेतु सैकड़ों लोगों ने अपने प्राणों की बलि दी थी। और वे सदा के लिए अमर हो गए।

"वे जिन्हेने सर कटाया पर वृक्ष न कटने दिया। जिनका बलिदान अपना अलग ही रखता है स्थान।" कवि का मानना है कि प्राकृतिक संसाधनों का दोहन मनुष्य आरम्भ से ही अपनी आवश्यकताओं को कर की पूर्ति के लिए करता आ रहा है, लेकिन तब और आज की स्थिति में बुनियादी अन्तर आ गया है। पुरानी दृष्टि आवश्यकता से प्रेरित उपयोग की दृष्टि भी वही आधुनिक दृष्टि लोभ और विलास भाव से प्रेरित उपयोग की दृष्टि है

सन्दर्भ-सूची

रचना- जंगल से गुजरते हुए : जितेन्द्र निर्मोही

१. मेरी दृष्टि जब विस्तृत हो जाती है। पेज नं.-७
२. अभ्यारण्य अभय-अरण्य हुआ। पेज नं.- १३

- | | |
|--|---|
| 3. तपती है जब धरती तपती है जब धरती उमड़ पड़ता है आसमान।
पेज नं.- १४ | ७. कटते गये पेड़/घटता गया जल स्तर (इक्कीसवीं सदी में)।
पेज नं.- ३२ |
| ४. इस उम्मीद से रोपी कलम।
पेज नं.- १७ | ८. न भागो मोटर के संग/वृक्षा के साथ/खड़े होकर बात करो।
पेज नं.- ७७ |
| ५. वृक्षा अब डरने लगा है।
पेज नं.- २७ | ९. वे जिन्होंने सर कटाया पर वृक्षा न कटने दिया।
पेज नं.- ६१ |
| ६. न दिखाई दिये ।
पेज नं.- ३० | |

हिंदी में अनुदित सर्जनात्मक मराठी पौराणिक उपन्यास 'ययाति' एक अध्ययन

प्रा. डॉ. वनिता त्र्यंबक पवार - निकम

हिंदी विभागाध्यक्ष एवं शोध – निर्देशिका स्व. अण्णासाहेब आर. डी. देवरे कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, म्हसदी,
तह.- साक्री, जि.- धुलियाँ

E-mail: vanitapawar27@yahoo.in

DOI- 10.5281/zenodo.7053410

सारांश- 'ययाति' वि.स.खांडेकर रचित मूल मराठी उपन्यास है। जिसका हिंदी अनुवाद मोरेश्वर तपस्वी ने किया है। यह एक रचनात्मक, सर्जनात्मक मराठी पौराणिक उपन्यास है। यह उपन्यास ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित है। यह उपन्यास ययाति की कामकथा है, देवयानी की संस्कार कथा है, शर्मिष्ठा की प्रेम कथा है और कच की अलग-अलग भक्तीगाथा है। इन चार प्रमुख पात्रों के आगे पीछे चलने वाली, फिसलने वाली, हल होती और व्यापक बनती ययाति की कथा में मनुष्य के अंतर मन के राग, द्वेष, लोभ और मोह आदि किसी भी प्रकार के आवरण बिना वर्णित कथा है। मूल रूपसे ययाति की कथा वेध व्यास रचित श्री महाभारत के आदिपर्व में आलेखित है। हस्तीनापुर के पराक्रमी राजा नहुष का पुत्र ययाति शापित होने के कारण जीवन पर्यंत कामेच्छाओं की तृप्ति नहीं कर सकता। दासी शर्मिष्ठा के साथ उसके अवैध संबंधों का पता देवयानी के पिता, दानवों के गुरु शुक्राचार्य को चलता है, जिससे वे क्रोधित हो ययाति को शाप देते हैं की, हे महाराज आपने धर्मराज होकर भी अधर्म का चयन किया है। अतः कठोर वृद्धत्व आपको अविलंब घेर लेगा। सदा ही यौवन में समान रहने की इच्छावाले ययाति पर मानो आसमान टूट पड़ता है। वह विवेकहीन बनकर स्वयं के ही पुत्र पुरु से यौवन उदार माँगता है और अपना वार्धक्य उसे निःसंकोच बक्षता है।

प्रस्तावना-

भूमंडलीकरण के दौर में सर्जनात्मक साहित्य और उनका अनुवाद का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है। हर क्षेत्र में विभिन्न देशों के बीच आदान-प्रदान बढ़ा है। व्यापारिक ही नहीं सांस्कृतिक आदान-प्रदान भी जाहीर है। जब हर क्षेत्र में यह आदान-प्रदान बढ़ा है तो साहित्य का क्षेत्र कैसे अछूता रह सकता है। इस दौर में रचनात्मक लेखन के क्षेत्र में अनुवाद के माध्यम से साहित्य के अध्ययन की संभावना पहले से कहीं अधिक बढ़ी है। आज अनुवाद के माध्यम से बहुत सी भाषाओं का साहित्य आसानी से सुलभ है। वास्तव में साहित्य का अनुवाद अपने आप में एक रचनात्मक विधा है। क्योंकि किसी भी रचना की आत्मा में उतर कर उसे एक नयी भाषा की काया में पुनर्जीवित करना अपने आप में किसी चुनौती से कम नहीं है। एक ओर तो रचना की मूल प्रवृत्तियाँ जीवित रहे और दूसरी ओर नई भाषा में रूपांतरित करते हुए रचना का प्रवाह रोचकता बनी रहें। इस दृष्टि से अनुवादक को दोनों

भाषाओं की गहरी जानकारी होना आवश्यक है। रचनात्मक लेखन के अंतर्गत साहित्य की सभी विधाएँ आ जाती हैं। रचनात्मक साहित्य की एक व्यापक अवधारणा है और अनुवाद के माध्यम से हर तरह का रचनात्मक लेखन व्यापक पाठक समुदाय तक पहुँचता है। मैंने इस शोध आलेख में हिंदी में अनुदित सर्जनात्मक मराठी पौराणिक उपन्यास 'ययाति' का अध्ययन करने का प्रयास किया है। 'ययाति' वि.स.खांडेकर रचित मूल मराठी उपन्यास है। जिसका हिंदी अनुवाद मोरेश्वर तपस्वी ने किया है। यह एक रचनात्मक, सर्जनात्मक मराठी पौराणिक उपन्यास है। यह उपन्यास ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित है। यह उपन्यास ययाति की कामकथा है, देवयानी की संस्कार कथा है, शर्मिष्ठा की प्रेम कथा है और कच की अलग-अलग भक्तीगाथा है। इन चार प्रमुख पात्रों के आगे पीछे चलने वाली, फिसलने वाली, हल होती और व्यापक बनती ययाति की कथा में मनुष्य के अंतर मन के राग, द्वेष, लोभ और मोह आदि किसी भी प्रकार के

आवरण बिना वर्णित कथा है। अर्थात विषय भोग के सेवन से कामेच्छा दबती नहीं अपितु आहुति द्वारा ज्वाला प्रज्वलित होने से अग्नि की तरह ज्वाला लपकती है। विषय भोग के अति सेवन से अनर्थ निर्मित करता, पुत्र पूरु को यौवन प्राप्त करता, उसके बाद आँख खुलने पर सत्यदर्शन से तपस्या द्वारा स्वर्ग प्राप्त करता ययाति का चरित्र अधः पतन की खाई में गिरने के बाद उर्ध्वगमन की प्रक्रिया से पसार होता है और उपदेशक बनता है। इस ययाति उपन्यास की कथावस्तु को बोधात्मक सरलता के लिए निम्न तीन बिंदुओं में विभक्त कर सरलता से बोधगम्य की जा सकती है।

- 1) ययाति के बचपन से युवावस्था तक की कथा
- 2) विवाह से लेकर शर्मिष्ठा के अज्ञातवास की कथा
- 3) ययाति के अशोक वन निवास असे वानप्रस्थाश्रम की कथा

उपयुक्त तीन प्रमुख बिंदुओं के आधार पर खांडेकर जी रचित 'ययाति' उपन्यास की कथावस्तु क्रमशः देखेंगे।

'ययाति' के बचपन से युवावस्था तक की कथा:-

'ययाति' उपन्यास में ययाति नायक है। इस उपन्यास में ययाति अपनी बाल्य अवस्था से लेकर वानप्रस्थाश्रम तक छाया हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास आत्मनिवेदन शैली में लिखा गया है। ययाति हस्तीनापुर के महाराजा नहुष का पुत्र है। ययाति बाल्यावस्था में बहुत ही शरारती था। ययाति को फुल बहुत ही अच्छे लगते थे। थपकी देकर सुलाने वाली दासी को बहुत तंग किया करता था। उसके पिताजी उससे अपने पराक्रम और राजवंश की परंपरा की बातें किया करते थे। "महाराजा नहुष ययाति को उद्देशित कर अपनी महारानी से कहते हैं कि क्या कहा, कवि? भई कवि बनकर क्या मिलने वाला है ययू को? कवि का काम तो दुनिया की सुंदरता का वर्णन करना मात्र है। लेकिन उन सभी सुंदरताओं का जी भर उपभोग केवल सुरमा ही कर सकते हैं। मैं चाहता हूँ कि हमारा ययू एक शूरवीर, सुरमा बने।"¹ उसी समय एक राज उसे मालूम होता है कि उसका बड़ा भाई है, जिसका नाम यति है। ययाति के जन्म के साल-डेढ

साल पहले ही बिलकुल अकेला कुछ भी बताये बगैर चला गया था। धीरे-धीरे फुलों, कलियों, भँवरों के गुंजन आदि के साथ ययाति बड़ा होता है और चौदह वर्ष में पदार्पण कर लेता है। अतः माँ उसके विवाह के बारे में कहती हैं। ययाति अभी विवाह करना नहीं चाहता। यह माँ से कहता है कि अभी मुझे प्रणय की नहीं, पराक्रम की प्यास लगी है।"² इस वर्ष उत्सव में सेनापति ने एक नये खेल का समावेश किया था। ऐसा जोशीला खेल चल रहा था। कोई खिलाड़ी उन घोड़ों पर सवार होने में सफल नहीं हो रहा था। तब जोश में आकर ययाति किसी की सुने बिना मैदान में जाकर घोड़ों पर सवार हो जाता है। चार चक्कर काटता है किंतु पाँचवे चक्कर में वह अपने शयनकक्ष के अंधेरे कमरे में अलका के सामने पाता है। अलका के अधर पट का अमृत प्राणण करता है। कुछ समय बाद ययाति बिलकुल ठीक हो जाता है। पुनः पिताजी ने नगर देवताओं के उत्सव में अश्वमेध की घोषणा कर दी। अश्वमेध के उस घोड़े को लेकर ययाति डेढ साल तक पूरे आर्यव्रत में घुमा। ऐसे में रात्री को हाथी के शिकार की चाह जगी और किसी को कुछ बताये बगैर जंगल में शिकार के लिए निकला। यति से क्षमा-याचना करते हुए उसकी गुफा के भीतर तक जाता है। तब वह यति को ठीक से देख पाता है। संन्यासी बन जाने का कारण पूछने पर यति बताता है की हमारे परिवार पर ऋषि का शाप है की नहुष राजा की संतान सुखी नहीं होगी। यह सारी बात वापस लौटकर ययाति हस्तीनापुर में अपनी माता को बताता है। वह बहुत ही दुःखी होती है। अश्वमेध की समाप्ती होते ही महर्षि अंगीरस ने देव-दानवों के युद्ध को रोकने के लिए शांती-यज्ञ का आयोजन किया था, उस यज्ञ की रक्षा हेतु उसे जाना था। इस यज्ञ में मुख्य ऋषी तक अंगिरस का प्रिय शिष्य कच बनने वाला था। कच देवताओं के गुरु बृहस्पति का पुत्र था। आश्रम के कच और ययाति के बीच काफी कनिष्ठ मैत्री स्थापित होती है। यज्ञ का मुख्य भाग समाप्त हुआ ही था। हस्तीनापुर के अमात्य का दूत संदेश लेकर आता है कि ययाति के पिता का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। अतः ययाति को आश्रम से विदा लेकर हस्तीनापुर जाना पडता है। पिताजी का स्वास्थ्य बिलकुल खराब था,

कुछ ही दिनों के मेहमान थे। इस परिस्थिति से अपने आपको स्वस्थ रखे, इस उद्देश्य से अमात्य ने नगर से दो कोस दूर अशोक वन में ययाति के विश्राम का प्रबंध किया था। आवश्यकता पड़ने पर पिता के पास बुलाने की गुप्त मार्ग से व्यवस्था थी। अशोक वन में नई दासी मुकुलिका ययाति की विशेष रूप से सेवा करती है। उसने रात को ययाति के लिये प्रियसी की भूमिका और दिन में दासी की भूमिका अदा करने में कोई कसर न छोड़ी। ययाति अशोक वन में मुकुलिका का रसास्वादन करता रहता था, उसी अरसे में पिता की मृत्यु हुई। पिता की मृत्यु के साथ ही ययाति की माता राजमाता की हैसियत से सारी व्यवस्था संभालने लगती है। कुछ समय बाद ययाति के विवाह की बात रखी जाती है क्योंकि मा को लगता था कि वह युवा हो गया है। मुकुलिका के पंजे से छुड़ाना भी चाहती थी।

विवाह से लेकर शर्मिष्ठा के अज्ञात वास की कथा -

ययाति की माता ययाति का राज्याभिषेक करना चाहती है किंतु बीच ही में माता के कहने पर वह पुन्हा यती को खोजने गोपनीय तरीके से जाना चाहता था। यती को खोजने जाते समय रास्ते में अंगीरस ऋषि का आश्रम पड़ता है। ऋषि के दर्शन करने वहाँ पहुँचने पर ययाति को पता चलता है कि कच जीवित है क्यों की कच देव दानव के युद्ध को रोकने के लिए शुक्राचार्य से संजीवनी विद्या प्राप्त करे गया था। अंगीरस के आश्रम से निकल कर पूर्व आर्याव्रत पहुँचता है। जहाँ उसकी मुलाकात ययाति से होती है। वहाँ से पता चलता है कि वह जादू-टोना करने लगा था। बड़े बड़े जादूगर भी उसका लोहा मानने लगे थे। अपनी अभिष्ट सिद्धि की आवश्यकता को जानकर यती कुछ महिने पहले ही राक्षस राज्य में चला गया था। यह जानकर उसे खोजना दुष्कर हो गया। अंततः वापस लौटते समय नदी किनारे के विश्राम स्थान पर ययाति की मुलाकात अलका से होती है। अलका ययाती को रास्ते से अपने साथ लेती है, वहाँ से अशोक वन तक उसका अच्छी तरह ख्याल रखती है। महाराणी अलका को तह खाने में डालकर विष दे देती है। जिससे अपनी माता से ययाति उखड़ा-उखड़ा

रहने लगता है। साथ ही ययाति का राज्याभिषेक भी हो जाता है। थोड़े समय बाद दस्युओं का पराजय कर वापस लौटते समय जंगल में ययाति की भेट देवयानी से होती है। देवयानी दानव गुरु शुक्राचार्य की कन्या है, पर वह दानव नहीं है। देवयानी वैसी ही घमंडी और इर्ष्याग्रस्त नारी थी। देवयानी वहाँ से भागती है और कूँए में गिर जाती है। शर्मिष्ठा और उसकी दासियाँ राजमहल चली जाती है। उसी कूँए के पास से ययाति निकल रहा था। कूँए से किसी की आवाज सुन धनुर्विद्या से बाहर निकालता है। तभी देवयानी ययाति से विवाह करने का फैसला कर लेती है। जब तक शर्मिष्ठा उसकी बचपन की सखी थी और उससे वह जलती रहती थी। अतः उससे भी बदला लेना था। शुक्राचार्य के बल पर ययाति से अपना विवाह और शर्मिष्ठा को अपनी दासी बनाकर वह हस्तिनापुर आती है। वक्त के चलते देवयानी और ययाती का शारीरिक और मानसिक दुराव बढ़ता जा रहा था। कुछ समय के लिये शुक्राचार्य तपस्या से बाहर आने वाले थे। तभी देवयानी गर्भवती थी। पिता से मिलने जाती है बाद में स्वास्थ्य खराब होने के कारण कुछ जादा ही पिता के पास रुकती है। इधर अशोक वन में रहने वाली और देवयानी की दासी शर्मिष्ठा अब उसकी सौत बन गई थी। शर्मिष्ठा मा बनती है। लेकिन शर्मिष्ठा अपने पुत्र पुरू को पिता का नाम नहीं बताती। उसे पूरू, ययाति का पुत्र होने का अंदाजा लगता है। शर्मिष्ठा को वह तहखाने में उसके पुत्र समित डाल देती है। ययाति परिस्थिति को भाँपकर वहाँ से शर्मिष्ठा को निकाल अपने मित्र माधव के जरीये अज्ञात स्थान पर पहुँचा देता है। इस प्रकार अठारह वर्ष तक शर्मिष्ठा अज्ञात वास भुगतती है।

ययाति के अशोक वन निवास से वानप्रस्थाश्रम की कथा -

इधर हस्तिनापुर के राजमहल में शर्मिष्ठा के अज्ञातवासी हो जाने पर ययाति बहुत ही बेचैन हो जाता है। इस बेचैनी में ययाति अत्याधिक मदिरा का सेवन कर देवयानी के शयनकक्ष में जाता है। देवयानी को मद्यपान पसंद नहीं था। मद्यपान कर शयनकक्ष में न आने का वचन महाराज से देवयानीने अपनी विवाह की प्रथम रात्री से ही लिया था। किंतु फिर भी वह मद्यपान कर वहाँ जाता है। वहाँ

देवयानी के साथ काफी कहा सुनी भी होती है और देवयानी उसे शपथ दिलाती है कि आप अब से आगे मुझे स्पर्श तक नहीं करेंगे और ययाति वहाँ से चला जाता है सीधा अशोक वन में वह अठारह वर्षों तक रहा। सारा राजकाज देवयानी ही चलाने लगी थी। “शुक्राचार्य, हस्तिनापुर आकर देवयानी की शिकायत सून अशोकवन में ययाति को शाप देते हैं कि, तुम्हारी यह जवानी क्षण नष्ट हो जाए। भगवान महेश्वर की कृपा से प्राप्त नई विद्या का स्मरण कर, शुक्राचार्य केवल यही इच्छा करता है कि मेरे सामने खड़ा यह पापी ययाति इसी क्षण जर्जर बुढ़ा हो जाए।”³ “लेकिन ययाति द्वारा बिनती करने पर पुनः उपशाप भी देते हैं की तुम्हारे ही परिवार का, तुम्हारे ही रक्त का, कोई तरुण तुम्हारा यह बुढ़ापा लेने के लिए सानंद तयार हो गया तो तुम चाहोगे उस क्षण यह बुढ़ापा उसे आ जाएगा... यह यौवन तुम्हारी मृत्यु के बाद ही उस युवक को वापस मिल सकेगी।”⁴ उसी समय युद्ध से जीतकर, नगर प्रवेश करके यदु- पुरु अशोकवन तक आते हैं। यदु से ययाति अपनी जवानी देने की बात रखती है। पर यदु देवयानी के कहने पर मना कर देता है। क्योंकि ययाति की काम-वासना अभी शेष थी। तभी अशोकवन में शर्मिष्ठा का आगमन होता है। वह अपने पुत्र की अवस्था देखकर बेचैन हो जाती है। तभी ययाति के भीतर पुत्र-प्रेम जागता है और अपने पुत्र को वापस उसकी जवानी लौटाने के लिए शुक्राचार्य द्वारा बताया गया। तभी अंतिम वाक्य बोलते समय उसके कानों में कच के आगमन की खबर पड़ती है और बेहोश हो जाता है। कच ने भी शुक्राचार्य की तरह तपस्या लगा रखी थी। उसकी यह तपस्या भी पूर्ण हो गयी थी। ययाति के अधःपतन की खबर मिलते ही कच सिधा हस्तिनापुर के अशोकवन में आ गया था। उसने भी शुक्राचार्य से भी बड़ी विद्या प्राप्त की थी। अतः अपने विद्या से कच ने ययाति की मृत्यु टाल दी और पुरु को उसका यौवन लौटा दिया। पुरु का राज्याभिषेक कर दिया गया। पुरु का राज्याभिषेक जिस दिन हुआ, उसी दिन शर्मिष्ठा, देवयानी और कच वानप्रस्थी हो गए। अब शर्मिष्ठा के प्रति

देवयानी की कोई शिकायत न थी। अंततः ययाति उपदेशक बन जाता है। राजा का पद प्राप्त कर पुरु आशीर्वाद लेने आता है, तब ययाति कहता है तेरे नाम से ही वंश प्रसिद्ध है। तेरे पराक्रम की तरह तेरा त्याग भी बढ़ता रहे।

“और क्या महाराज?

अब मैं महाराज नहीं हूँ।

और क्या पिताजी?

अब मैं गृहस्थी वाला भी नहीं हूँ।

और क्या....

सुख में, दुःख में, हमेशा... काम और धर्म महान पुरुषार्थ है। बहुत ही प्रेरणा प्रेरक पुरुषार्थ है... यह पुरुषार्थ कब अंधे हो जाएंगे। कोई भरोसा नहीं। उनकी लगाम हमेशा धर्म के साथ रहने दो।”⁵

इस प्रकार कहा जा सकता है कि, विष्णू सखाराम खांडेकर रचित ‘ययाति’ उपन्यास आत्मनिवेदन शैली में लिखा गया है। इस उपन्यास के ‘ययाति’, देवयानी और शर्मिष्ठा तीन प्रमुख चरित्र हैं। इन्हीं तीन चरित्रों के माध्यम से कथा वस्तु की अभिव्यक्ति की गई है।

निष्कर्ष-

अंततः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है, वास्तव में साहित्य का अनुवाद अपने आप में एक रचनात्मक विधा है। क्योंकि किसी भी रचना की आत्मा में उतर कर उसे एक नई भाषा की काया में पुनर्जीवित करना अपने आप में किसी चुनौती से कम नहीं। इस दृष्टि से अनुवादक को दोनों भाषाओं की गहरी जानकारी होना आवश्यक है। रचनात्मक साहित्य एक व्यापक अवधारणा है। सर्जनात्मक उपन्यास ‘ययाति’ का हिंदी में अनुवाद मोरेश्वर तपस्वीजी ने किया है। रचनात्मक साहित्य को एक व्यापक अवधारणा को उन्होंने अनुवाद करने का प्रयास किया है। सचमुच आज के मनुष्य की यात्रा फिर से ययाति की दिशा से शुरू हो गई है। आज उपभोग के विविध साधन प्राप्त हुए हैं। इन साधनों में भी जानलेवी स्पर्धा शुरू है। काम और प्रेमभावना बढ़ती जा रही है। यह कहना संगत है की, ययाति अपने जीवन की सार्थकता भोग के प्रदर्शन में ही

अनुभव कर रहा था। इस अर्थ में ययाति आज की पिढी का प्रतिनिधित्व करता है। आज की पिढी जीवन के किसी भी क्षेत्र में बंधनों में रहकर जीना नहीं चाहती। ययाति सुखवादी भोगवादी होने के कारण पाठक पुरी सहानुभूती नहीं दे पाते। अंततः कहा जा सकता है कि ययाति भोगवादी समाज का प्रतिनिधी पात्र है। जिसके आधार पर

संदर्भ ग्रंथ सूची-

मूल्य और आदर्शों के खंडन की बात की गई है। इस तरह भोग और योग के स्थापन के माध्यम से खांडेकर जी ने उखड़े मूल्यों के साथ बने रहकर उसके स्थापन की बात की है। इसी कारण सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद और उसका अध्ययन इसका भविष्य उज्वल ही है।

1. ययाति - वि. स. खांडेकर, राजपाल अँड सन्स, दिल्ली. पृष्ठ - 13, संस्करण - 2012
2. वही, पृष्ठ - 25
3. वही, पृष्ठ - 320
4. वही, पृष्ठ - 321
5. वही, पृष्ठ - 336

भारतीय स्वातंत्र्याचा अमृत महोत्सव: लोकशाहीची वाटचाल आणि सद्यस्थिती

डॉ दत्ताजी हुलप्पा मेहत्रे

राज्यशास्त्र विभागप्रमुख राजीव गांधी महाविद्यालय मुदखेड

DOI- 10.5281/zenodo.7053422

सारांश भारतीय स्वातंत्र्याला पंच्याहत्तर वर्ष पूर्ण झाले आहेत. मानवी जीवनाचा विचार केल्यास पंच्याहत्तर वर्ष हे प्रौढत्व, निर्णायक भूमिका आणि अनुभवात्मक प्रगल्भतेचा आधार घेत येणार्या पिढीला दीपस्तंभाप्रमाणे मार्गदर्शन करण्याची अपेक्षा मानवाकडून केली जाते. तसेच लोकशाहीकडूनही केली जाते. परंतु भारतीय लोकशाही पाच, सात वर्षांच्या मुलाप्रमाणे 'बोबडे' बोलते. लोकशाही मूल्ये पायदळी तुडवत बेभानपणे स्वतःच्या श्रेष्ठत्वाची पाठ थोपटत काटे किंवा खड्ड्यांची पर्वा न करत धावत आहे. ही चिंतेची बाब म्हणता येईल. भारताला लोकशाही तत्त्वज्ञानाची ओळख गौतम बुद्ध, महावीरांचा तात्त्विक विचारातून झालेली आहे. लोकशाहीचा व्यावहारिक दृष्टिकोन ब्रिटिश शासन व्यवस्थेकडून प्राप्त झाला आणि प्रत्यक्ष अंमलबजावणी भारतीय संविधानाच्या निर्मितीनंतर सुरू झाली. इ.स. 1952 ला लोकसभेच्या पहिल्याच सार्वत्रिक निवडणुकीत जात, धर्म, संप्रदाय, संपत्ती, वर्ग असा भेदभाव न करता प्रौढत्वाच्या आधारे एकवीस वर्षे पूर्ण केलेल्या स्त्री पुरुषांना मतदानाचा समान अधिकार देऊन समानतेचा सामाजिक मूल्ये रुजविण्याचा यशस्वी प्रयत्न झाला. पंतप्रधान राजीव गांधी यांनी 86 वी घटनादुरुस्ती करून मतदानासाठीची एकवीस वर्षांची अट शिथिल करून ती अठरा वर्षे करण्यात आली. जास्तीत जास्त तरुण वर्गाला लोकशाहीच्या महाकुंभात सहभागी करून घेऊन भारताच्या भावी आधारस्तंभांना राजकीय अनुभव देण्याचा प्रयत्न होता. कारण राजकीय सहभागिता हा लोकशाहीसाठी आवश्यक घटक आहे. म्हणूनच अब्राहम लिंकनने 'लोकांनी लोकांसाठी लोकांवर चालवलेले शासन पद्धती म्हणजे लोकशाही' अशी व्याख्या केली आहे. परंतु लोकांचा राजकीय सहभाग म्हणजे मतदानातील सहभाग असा होत नाही. तर प्रत्यक्ष राजकीय निर्णय प्रक्रियेत लोकांचा किती प्रमाणात सहभाग आहे. यावर लोकशाहीचा दर्जा ठरत असतो. सत्ताधारी पक्षातील पक्षश्रेष्ठी म्हणवून घेणाऱ्या दोन तीन लोकांनी निर्णय घेणे व ते देशावर लादणे यास लोकशाही म्हणता येत नाही. लोकांचे प्रतिनिधी मात्र योग्य भूमिका घेण्याऐवजी हवा आल्यानंतर शेतातील बुजगावणे डोके हलवावे तसे प्रतिनिधी पक्षशिस्तीच्या नावाखाली डोके हलवून मूकसंमती देताना दिसत आहेत.

प्रास्ताविक:

लोकशाहीत राजकीय सहभागाबरोबरच स्वातंत्र्य, समता, बंधुता, न्याय आणि मानवाची प्रतिष्ठा जोपासली गेली पाहिजे. लोकशाहीचा विकास हा विरोध आणि समन्वयातून होतो. विरोधात बोलणार्यांवर राष्ट्रद्रोह लावल्यामुळे नाही. हे शासनकर्त्यांना लक्षात आले पाहिजे. प्रसिद्ध राज्यशास्त्र विचारवंत व्हॉल्टेर म्हणतात, 'समोरच्याचे मत माझ्याविरोधात असले तरी त्याचे मत मांडण्याचा अधिकार अबाधित राहिले पाहिजे' अशा प्रकारचे अभिव्यक्ती स्वातंत्र्याचे सर्वोच्च मूल्ये शासन व्यवस्थेकडून जोपासले पाहिजे हे श्रेष्ठ दर्जाचा लोकशाहीचे लक्षण आहे. या 75 वर्षांत भारतात लोकशाही आहे मात्र श्रेष्ठ दर्जाचे लोकशाही आपण रूजू शकलो नाही. हे सत्य नाकारता येणार नाही. कायदेमंडळ, कार्यकारी मंडळ, न्यायमंडळ आणि प्रसारमाध्यमे ही लोकशाहीचे आधारस्तंभ आहेत. संविधानानुसार प्रत्येकाची भूमिका भिन्न आणि स्वतंत्र असली तरी देशातील सर्व माणसे सारखे आहेत आणि

त्यांना व्यवस्थेचे सारखे फायदे मिळाले पाहिजे, हे लोकशाही समोरील गृहीतक आहे. परंतु तसे होताना दिसत नाही. लोकशाही ही उच्चवर्णीयांच्या आणि धर्म, सामाजिक बंधनांच्या दावणीला बांधलेली गाय बनली आहे. ज्या गाईला उपाशी मरू दिलं जात नाही आणि पोटभर अन्नही मिळत नाही. दाव्याच्या आकारानुसार तिला फक्त हलता येते, मुक्त होण्याचे, बंड करण्याचे संविधानानुसार शक्ती मिळाली नाही. किंबहुना मिळू दिली जात नाही. मतदानरूपी दुधावर गुळगुळीत होऊन समाजमाध्यमांवर उड्या मारणाऱ्या राजकीय जमाती धर्म, जातीच्या टोप्या घालून धर्मनिरपेक्षतेचे बेगडी ढोल वाजवताना दिसत आहेत. चौकीदार म्हणून घराला लागलेली आग भूजविण्यापेक्षा जाती, संप्रदाय आणि धर्माचे संघर्ष निर्माण करून आगीत तेल ओतण्याचे कार्य देशातील सर्वोच्च संविधानिक पदावर बसलेल्या शासनकर्त्यांकडून होत असेल तर लोकशाही संरक्षणाची अपेक्षा कोणाकडून केली जावी? महात्मा गांधीजी म्हणतात, 'अशी कोणतीही मानवी संस्था नाही ज्यात

दोष नाही. एखादी संस्था जितकी मोठी असते तितका तिचा दुरुपयोग होण्याची शक्यता वाढतात. लोकशाही ही एक व्यापक संस्था आहे आणि म्हणूनच तिचा मोठ्या प्रमाणात दुरुपयोग केला जाऊ शकतो. पण त्यामुळे लोकशाहीच नाकारणे हा उपाय नव्हे तर तिचा दुरुपयोग होण्याची शक्यता कमीत कमी ठेवून लोकशाही टिकवून ठेवता येईल' वरील विधानाचा आशावाद गृहीत धरला तर भारताच्या लोकशाही प्रक्रियेत आमूलाग्र परिवर्तनची आवश्यकता जाणवते. हे मात्र निश्चित .

गृहितक: भारतीय स्वातंत्र्याच्या 75 वर्षांनंतर भारतातील शोषित वंचित समुदायाला मुख्य प्रवाहात आणण्यात

व लोकशाही मूल्ये रुजविण्यात आलेले अपयश हे लोकशाहीचे नसून अंमलबजावणी यंत्रणेचे आहे .

उद्देश : 1) भारतातील लोकशाहीच्या आधारस्तंभाचा अभ्यास करणे.

2) स्वातंत्र्यानंतर लोकशाहीच्या यशापयशाचे अध्ययन करणे.

निवडणूक यंत्रणा आणि लोकशाहीचे स्वरूप :

नियमित आणि कालबद्ध निवडणुका या लोकशाहीचे महत्त्वपूर्ण वैशिष्ट्य आहे. लोकशाहीत निवडणुकीच्या माध्यमातून शांततापूर्ण आणि सनदशीर मार्गाने सत्ता परिवर्तन होत असतात. भारतीय संविधानाने निवडणूक यंत्रणा यशस्वीपणे हाताळण्यासाठी कलम 324 नुसार राष्ट्रीय निवडणूक आयोगाची स्थापना केली. भारतीय लोकशाहीत टिकविणे आणि तिची वृद्धी होणे याचे श्रेय मूलतः भारत निवडणूक आयोग या स्वायत्त संवैधानिक संस्थेला द्यावे लागेल. सात दशकांपासून मुक्त आणि न्याय वातावरणात कालबद्ध पद्धतीने निवडणुका घेऊन लोकशाही मूल्यांना बळकटी दिली आहे . 1952 पासून ते आजतागायत लोकसभा, विधानसभा, राज्यसभा, विधान परिषद, स्थानिक स्वराज्य संस्था या सर्व निवडणुका उत्तम पद्धतीने घेण्याचे श्रेय निवडणूक आयोगाला जाते. स्वातंत्र्यानंतरच्या 75 वर्षात परिस्थितीनुसार आलेल्या समस्या सोडविण्यासाठी आमूलाग्र परिवर्तन मतदान पद्धतीमध्ये करण्यात आले. पहिल्या दोन निवडणुकांमध्ये प्रत्येक उमेदवारासाठी वेगळी मतपेटी होती. त्यानंतर शिक्का मारलेल्या मतपत्रिका एकाच मतपत्रिकेत टाकण्याची पद्धत 1960 च्या दशकात सुरू झाली. त्यामध्ये बदल होऊन 2004 मध्ये ईव्हीएम मतदान यंत्राचे सुरुवात झाली. 2017 मध्ये मत पडताळणी करण्यासाठी व्हीव्हीपॅट चा वापर

सुरू झाला. या बदलामुळे मतदान पद्धतीत अधिक गुप्तता येऊन निवडणूक प्रक्रिया अधिक पारदर्शक आणि मजबूत झाली. आदर्श आचारसंहिता, डिजिटल मतदान ओळखपत्र, उमेदवारांनी संपत्ती आणि गुन्हेगारी पाश्र्वभूमी जाहीर करणे यासारखे महत्त्वपूर्ण बदल निवडणूक आयोगाने केले. थोडक्यात राज्यघटनेचा मसुदा तयार करताना घटना समिती सदस्यांनी सार्वत्रिक प्रौढ मताधिकार देऊन मुक्त व न्यायी वातावरणात निवडणुका घेण्यासाठी स्वतंत्र आणि घटनात्मक संस्था स्वीकारून या देशातील लोकांवर विश्वास ठेवला आहे. फक्त निवडणुका घेणे आणि निवडणुकांच्या माध्यमातून सत्ता हस्तांतरण करणे म्हणजे लोकशाही नव्हे. लोकशाही ही लोकांचा शासनावरील विश्वासाचा दाखला आहे, नव्हे तर तो जीवनमार्ग आहे. ज्यात प्रतिष्ठा, आनंद आणि आपलेपणा राष्ट्राप्रति त्याग, बलिदानाची भावना सामावलेली असते. पंच्याहत्तर वर्षांमध्ये भारतीय जनतेच्या मनात आपण हे साध्य करू शकलो नाही. हे भारतीय निवडणूक आयोगाचे आणि लोकशाहीचे अपयश म्हणता येईल. मतदान प्रक्रियेतील अडचणी आपण अद्यापही पूर्ण करू शकलो नाहीत. त्या काही अडचणी पुढीलप्रमाणे सांगता येतात .

- 1) राजकारणातील गुन्हेगारीचे वाढते प्रमाण
- 2) मतदान प्रक्रियेतील लोकांची उदासीनता
- 3) राजकारणावरील विशिष्ट घराण्याची मक्तेदारी
- 4) जाती धर्मावरील आधारित मतदान
- 5) प्रलोभनांवर आधारित मतदान
- 6) राजकीय पक्षांतर्गत लोकशाहीचा अभाव
- 7) वाढत जाणारी राष्ट्रीय सौदेबाजी
- 8) सततचे होणारे पक्षांतर आणि फोडाफोडीचे राजकारण
- 9) निवडणूक आयोगाकडे स्थायी कर्मचार्यांचा अभाव वरील समस्या या निवडणूक आयोगासमोर स्वातंत्र्यापासून आहेत. निवडणूक आयोगाला आणि शासन व्यवस्थेला या समस्यांवर पुरेसे कार्य करता आले नाही. याचे मुख्य कारण म्हणजे निवडणूक आयोग संविधानिक स्वायत्त संस्था असली तरी ती राजकीय हस्तक्षेपापासून दूर आहे असे म्हणणे म्हणजे सूर्यपेक्षा चंद्राचा प्रकाश जास्त आहे हे मान्य करणे होय. स्वतंत्र आणि निःपक्षपाती निवडणूक आयोगाने कार्य करावे अशी अपेक्षा असेल तर निवडणूक आयोगाच्या

स्वायत्ततेचे संरक्षण झाले पाहिजे. यासाठी निवडणूक आयोगातील रचनात्मक बदल अपेक्षित आहेत.

वंचित घटकांच्या लोकशाहीतील सहभाग :

पारंपारिक भारतीय सामाजिक व्यवस्थेत वर्णव्यवस्था होती. वर्णव्यवस्थेत शूद्रांना अतिशय निम्न स्वरूपाचे स्थान होते. समाजात अनेक अनिष्ट रूढी प्रथा परंपरा आणि अस्पृश्यता होती. माणूस आणि मानवतेचा दर्जा मिळत नव्हता. भारतीय संविधान निर्मितीनंतर अनेक अनिष्ट रूढी प्रथा परंपरा नष्ट करून अस्पृश्यता कायद्याने गुन्हा ठरविण्यात आला. सामाजिक राजकीय आणि आर्थिक समानता आणि व्यक्तीची प्रतिष्ठा जोपासण्याचे आश्वासन संविधानाने भारतीय नागरिकाला दिले. त्या दृष्टीने स्वातंत्र्याच्या पंच्याहत्तर वर्षांत वेगवेगळ्या स्वरूपाचे प्रयत्न वंचित समुदायास मुख्य प्रवाहात आणण्यासाठी करण्यात आले. त्यात प्रामुख्याने अनुसूचित जाती जमातींना राजकीय आरक्षण देऊन राष्ट्रीय निर्णयप्रक्रियेत सामावून घेण्याचा प्रयत्न करण्यात आला. पंतप्रधान विश्वनाथ प्रताप सिंग यांनी मंडल आयोगाची अंमलबजावणी केल्यामुळे इतर मागास प्रवर्गांना त्यांचा सामाजिक आणि आर्थिक दर्जा सुधारण्यासाठी मदत झाली. संसद आणि संविधानाद्वारे समाजातील वंचित समाजघटकांना मुख्य प्रवाहात आणण्यासाठी काही प्रयत्न झाले असले तरी त्यांना पंच्याहत्तर वर्षांत सामाजिक, आर्थिक, राजकीय न्याय प्राप्त झालेला नाही. संविधानिक आरक्षणाचा लाभ घेऊन मोठी झालेली एक स्वतंत्र पांढरपेशी शुन्य भूमिका असणारी जमात निर्माण झालेली आहे. एखाद्या प्रस्थापित राजकीय पक्षाकडून खासदार, आमदार किंवा मंत्रिपदाची भीक मिळाल्यानंतर आयुष्यभर प्रस्थापित नेत्यांचे तळवे चाटणारा हा वर्ग आहे. त्यांच्यात सामाजिक जाण आणि उत्तरदायित्व शिल्लक राहिले नाही. पक्षशिस्तीचे राजकीय मर्यादा असली तरी सामाजिक प्रश्नावर, संसदेत निर्णय निर्धारण प्रक्रियेत योग्य भूमिका न घेणे म्हणजे वैचारिक दिवाळखोरीचे लक्षण आहे. प्रस्थापित नेत्यांकडून विशिष्ट जाती, धर्माचे नेते तयार करून त्यांच्याकडून मतदार 'रोबोट' तयार केले जात आहेत. ज्याला स्वतःची विवेकबुद्धी, चेतना याचा अभाव आहे. फक्त नेत्या रूपी 'रिमोटने' दिलेली आज्ञाप कळते. यानंतर रोबोट जातीवाद, प्रांतवाद, भाषावाद, ब्रह्माने उभा केलेला पोकळ राष्ट्रवादाचा, सामाजिक संघर्षाचा बळी ठरतो. एखादा रोबोट जिवंत मिळाला तर तो माझा नाही हे नेत्यांची उत्तर ठरलेले असते. राजकारणातल्या या खेळाने तरुण पिढी झेंडा

आणि झेंड्यांचे रंग शोधण्यात बरबाद होत आहे. जुगारामध्ये जुगार चालवणार्यांचा नाही तर जुगार खेळणाऱ्यांचा संसार उद्ध्वस्त होतो. तशीच अवस्था आपल्या मतदारांची झाली आहे. जुगार चालवणारे प्रत्येकवेळी नवा डाव टाकतात आणि आपण मूलभूत गोष्टींना अन्न, वस्त्र, निवारा, पाणी, रोजगार, शिक्षण यांना दुय्यम ठरून दुर्लक्ष्य करतो. राजकीय व्यवस्थेत खालील स्वरूपाचे काही दोष आढळून येतात ते दूर होणे आवश्यक आहे.

- 1) अति उपेक्षित जातीत समाजघटकांना आरक्षणाचा लाभ न मिळणे
- 2) इतर मागासवर्गीयांचा लोकसभा आणि राज्यसभा विधानसभेत पुरेसे प्रतिनिधित्व नसणे
- 3) अनुसूचित जाती जमातीच्या प्रतिनिधींची पक्षशिस्तीमुळे आलेली मर्यादा
- 4) राष्ट्रीय धोरण निर्णयप्रक्रियेत जाती जमातीच्या प्रतिनिधित्वाचा अभाव

स्वातंत्र्याच्या पंच्याहत्तर वर्षांत देशातील दारिद्र्य, बेकारी आणि कुपोषण अद्यापही संपलेले नाही त्याचे महत्त्वाचे कारण म्हणजे शासनाची ध्येयधोरण योग्य पध्दतीने लोकांपर्यंत पोहोचत नाहीत किंवा पोचविण्याची राजकीय इच्छाशक्ती दिसत नाही. त्याचे मुख्य कारण म्हणजे धोरण निर्धारण प्रक्रियेत वंचित समाज घटकांचा प्रभाव दिसत नाही. जे काही प्रतिनिधित्व आहे ते विवेकी नाही. त्यांच्या विवेक पक्षश्रेष्ठींच्या पायाशी लोळण घेताना दिसते. तेव्हा देशातील सर्वसामान्य समाजघटकांना राजकीय निर्णयप्रक्रियेत सहभागी करून घेणे आवश्यक आहे. यासाठी लोकसभा आणि विधानसभेत इतर मागासवर्गीयांना राजकीय आरक्षण असावे राज्यसभा विधान परिषद आणि मंत्रिमंडळामध्ये आरक्षणाची तरतूद असली पाहिजे, तरच वंचित समाजाला लोकशाही प्रक्रियेत न्याय मिळू शकेल. काही प्रस्थापित पक्षाकडून संवैधानिक पदांसाठी विशिष्ट जाती जमातींना प्रतिनिधित्व दिलं जात आहे त्यात त्यांचा प्रामाणिकपणा कमी आणि राजकारण जास्त दिसतं.

प्रसारमाध्यमे आणि लोकशाही : प्रसारमाध्यमे हा लोकशाहीचा चौथा स्तंभ असतात लोकशाहीच्या यशस्वीतेसाठी चारही स्तंभांनी आपली भूमिका योग्य आणि न्याय बजावली पाहिजे सरकारची महत्त्वपूर्ण निर्णय जनतेपर्यंत पोहोचविणे आणि जनतेत योग्य जनमत निर्माण करून जनतेच्या मागण्या शासनापर्यंत घेऊन जाणे, ही महत्त्वाची कार्ये प्रसारमाध्यमांची आहेत.

परंतु हे कार्य स्वतंत्र आणि निःपक्षपातीपणे होणे आवश्यक आहे. अलीकडे प्रसारमाध्यमांच्या स्वरूपामध्ये आमूलाग्र परिवर्तन झालेले आहे. व्हॉट्सअप, फेसबुक, ट्विटर या सामाजिक माध्यमांमुळे अनेक लोक जोडले गेले आहेत. हे सत्य असले तरी यामुळे बातमीची विश्वासार्हता कमी झालेली आहे. इंटरनेट हे एक फॅड आहे काही दिवसांत त्याचा उदो उदो करण्याची नशा उतरेल. सोशल मिडीया ही एक वावटळ आहे. सोशल मिडीया आणि प्रत्यक्ष जगण्याचा काहीच संबंध नाही. अशा आशयाच्या बातम्या एकेकाळी आंतरराष्ट्रीय इंग्रजी वृत्तपत्रात जाणकार लिहीत होते. परंतु आजचे वर्तमान वेगळी आहे. इंटरनेट, डिजिटल क्रांती यापाठोपाठ एकेक सोशल मिडीयाची निर्मिती झाली. सोशल मिडीयाचा वापर करून सत्ता मिळविली जाते, टिकविली जाते आणि सत्तेपासून बेदखल देखील केले जाऊ शकते. ही माध्यमे आज प्रभावशाली झाली, आपल्या जगण्याचा अविभाज्य भाग बनले आहेत. त्यामुळे लोकशाही प्रक्रियेवर त्याचा परिणाम होताना दिसून येतो. यात चांगला परिणाम कमी आणि दुरुपयोग जास्तीचा आहे. पेगासस सारखी सॉफ्टवेअर हेरगिरीच्या माध्यमातून व्यक्तीची खाजगी माहिती मिळविली जात आहे. त्यामुळे व्यक्तीचे व्यक्तीस्वातंत्र्य राहिले नाही. समाजमाध्यमांवर प्रत्येक जातीधर्माचे गट तयार होत आहेत. त्यातून काही लोकांकडून इतर जाती धर्मांमध्ये द्वेष निर्माण करून सामाजिक धार्मिक संघर्ष निर्माण केले जात आहेत. समाजमाध्यमांवर राजकीय पक्षाचा खोटा प्रचार केला जात आहे. आणि सामान्य जनतेचा त्यात बळी जातो. बातमीची विश्वासार्हता तपासली जात नाही. समाजमाध्यमांवर विशिष्ट वर्गाचा मालकी हक्क असल्यामुळे त्या वर्गाच्या विरोधात माध्यमे बोलत नाहीत. राष्ट्रीय हित आणि वस्तुनिष्ठ त्यापेक्षा माध्यमाचा टीआरपीवर जास्त भर दिसतो. समाजमाध्यमांवर शासनामार्फत अनेक मर्यादा टाकल्या जात आहेत. माध्यमांवर शासनाच्या विरोधात बोलणार्यांवर फौजदारी गुन्हे दाखल केले जात आहेत. 'पेड न्यूज' चा वापर मोठ्या प्रमाणात होत असून माध्यमे निःपक्षपाती भूमिका न घेता सत्ताधारी पक्षाची सुसंगत भूमिका घेताना दिसत आहेत. माध्यमांवर जनतेच्या प्रश्नांपेक्षा मत मेंदूला उत्तेजित करणारे विचार करावयास कष्ट लावणारे रेडीमेंट विचार तुमच्या मनात आणून बसणारा मिडीया लोकांना आवडतो आहे.

लोकशाहीत निवडणुकीतील आकड्यांचा खेळ म्हणजे लोकशाही. एवढे मर्यादित अपुरे चित्र समाजावर बिंबवण्यात आले आहे. लोकशाही म्हणजे केवळ निवडणुकीतले आकडे नव्हे तर दैनंदिन जगण्याशी संबंधित अशी विचारधारा आहे. थोडक्यात सोशल मिडीया हा दुधारी शस्त्रासारखा आहे पण अगदीच क्वचित चांगल्या गोष्टींसाठी या माध्यमांचा वापर होतो. याकडे लक्ष वेधणे आवश्यक वाटते. खरे तर सरकारचे वृत्तपत्रे एकमेकांचे मित्र असू शकत नाहीत. ते प्रतिस्पर्धी असतात. परंतु अलीकडे प्रतिस्पर्धी मग तो कोणताही असो त्याला शिल्लक ठेवायचे नाही अशी धारणा झाली आहे. त्यास माध्यमही अपवाद नाहीत पंजाबमधील शेतकऱ्यांचे बारा महिने दिल्लीत आंदोलन झाले किती माध्यमांनी आंदोलनाला कव्हेरेज दिला हा प्रश्न आहे

निष्कर्ष:

भारतीय स्वातंत्र्याच्या पंच्याहत्तर वर्षांत न्यायमंडळाची सक्रियता वाढली असून जनतेतील कायदेमंडळाची विश्वासार्हता कमी झालेली आहे. कार्यकारी मंडळाची वाढती हुकूमशाही नियंत्रित करण्यास प्रसारमाध्यमांना अपयश आले आहे. माध्यमांवरील विशिष्ट वर्गाच्या मत्केदारीमुळे माध्यमांमध्ये निःपक्षपातीपणा आणि न्याय्य भूमिका राहिली नाही. लोकशाहीचे चार स्तंभ स्वतःला सद्दृढ करण्याचा प्रयत्न करत असले तरी चारही स्तंभ वेगवेगळ्या दिशांना जाताना दिसत आहेत. लोकशाही स्तंभातील समन्वय, सहकार्य आणि परस्पर नियंत्रण नाहीसे होणे ही लोकशाहीच्या सुदृढतेसाठी घातक ठरू शकते. यावर पर्याय फक्त सज्जान लोकमत जागृती होणे गरजेचे आहे. तसे झाले तरच शोषित वंचित समुदायाला मुख्य प्रवाहात आणण्यास मदत होईल.

संदर्भग्रंथ:

- 1) डॉ. दीपक पवार, लोकशाही समजून घेताना, मुख्य निवडणूक अधिकारी महाराष्ट्र राज्य मंत्रालय, मुंबई, 2022
- 2) प्रा. बी बी पाटील, राजकीय सिद्धांताचे मूलतत्त्वे, फडके प्रकाशन, कोल्हापूर, 2003
- 3) डॉ. डी. एच. म्हेत्रे, प्रा. राजशेखर सोलापुरे, भारतीय शासनान आणि राजकारण , अरुणा प्रकाशन, लातूर, 2013

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे राजकीय योगदान

श्री. उमेश जयराम पाटील^१ प्रा. डॉ. संभाजी संतोष पाटील^२

^१संशोधक उपशिक्षक के. बी. एच. विद्यालय, टाकळी, ता. मालेगाव, जि. नाशिक

^२मार्गदर्शक एस.एस.व्ही. पी. एस. कला व वाणिज्य महाविद्यालय, देवपूर, धुळे

Email-ID : umesh471986@gmail.com

DOI-10.5281/zenodo.7053430

प्रस्तावना :-

प्रस्तुत शोधनिबंधामध्ये कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय नेतृत्वावर तसेच विधीमंडळातील कामकाजावर प्रकाश टाकण्याचा प्रयत्न संशोधकाने केला आहे. भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय नेतृत्वावर व विचारांवर महात्मा गांधी, म. फुले, महाराज सयाजीराव गायकवाड व सत्यशोधक समाजाचा प्रभाव पडलेला दिसून येतो. काकासाहेब वाघ यांच्या सहकार्याने खऱ्या अर्थाने भाऊसाहेब हिरे यांचा राजकीय प्रवासाला सुरुवात झाली. राजकारणामध्ये सक्रीय होण्यापूर्वी त्यांनी विविध स्थानिक स्वराज्य संस्थांच्या निवडणुकीत यश संपादन केले व पुढे काँग्रेस पक्षामध्ये प्रवेश झाल्यानंतर पक्षातील विविध नेत्यांचे त्यांना मार्गदर्शन लाभत गेले. काँग्रेस पक्षातील प्रवेशानंतर विविध पदांवर कार्य करित असतांना अंतर्गत संघटन मजबूत करून लोकोपयोगी कामांकडे भाऊसाहेबांनी कधीही दुर्लक्ष होऊ दिले नाही. भारत छोडो आंदोलनावेळी तुरुंगवास भोगावा लागला ते प्रथमच लोकसभेवर निवडून आले तसेच महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेसची धुरा त्यांच्यावर आली, नाशिक येथील ह्या अखिल भारतीय काँग्रेसचे अधिवेशन त्यांच्या नेतृत्वात पार पडले तसेच १९५३च्या विधानसभेच्या निवडणुकीत भाऊसाहेबांनी यशस्वी असे नेतृत्व केले. भाऊसाहेबांच्या राजकीय जीवनात दोनदा मुख्यमंत्री पदाची चालून आलेली संधी गमवावी लागली, त्यानंतर मात्र त्यांच्या राजकीय जीवनाला उतरती कळा लागली आणि शेवटी भाऊसाहेब हिरे यांनी विधीमंडळातील सदस्यात्वाच्या कार्यकाळात पक्षाचे आदेश व बांधीलकी पाळत, कठोर भूमिका घेत कुळकायदा, करपद्धती, राज्यपुनर्रचना, संयुक्त महाराष्ट्र मुंबई महाराष्ट्रात असणेबाबत धरलेला आग्रह यासारख्या महाराष्ट्राच्या व लोककल्याणाच्या हिताच्या दृष्टीने विधीमंडळामध्ये भाषणांनी आपली उत्कृष्ट अशी छाप पाडलेली दिसून येते.

विषयाचे महत्त्व :

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे स्वातंत्र्यपूर्व व स्वातंत्र्यानंतर महाराष्ट्राच्या राजकारणातील योगदान खूप मोठे आहे. त्यादृष्टीने भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय प्रवासाचा अभ्यास करणे महत्त्वपूर्ण ठरणार आहे. खरे पाहता भाऊसाहेब हिरे धार्मिक विचारांच्या कुटुंबात जन्मास आले होते. त्यांच्या राजकीय नेतृत्वास विद्यार्थी दशेपासून सुरुवात झाल्याचे दिसून येते. येथूनच पुढे त्यांची तालुका व जिल्हा लोकल बोर्डावर नियुक्ती झाली. काँग्रेस पक्षात प्रवेश होऊन भाऊसाहेब हिरे यांची पार्लमेंटरी सेक्रेटरीपदी नियुक्ती झाली. वैयक्तिक सत्याग्रह केल्याने कारागृहाची शिक्षा भोगावी लागली. त्यानंतर स्वतंत्र भारताच्या पहिल्या लोकसभेवर निवडून आले. या यशानंतर ते महाराष्ट्र प्रदेश काँग्रेसचे अध्यक्ष झाले. नाशिक येथील ५६व्या अखिल भारतीय काँग्रेस अधिवेशनाचे ते स्वागताध्यक्ष होते. १९५२ च्या विधानसभा निवडणुका भाऊसाहेबांच्या नेतृत्वात यशस्वीपणे पार पडल्या. महसूल, कृषी व वन मंत्री इत्यादी मंत्रीपदे भूषविलीत. परंतु भाऊसाहेब हिरे यांना मुख्यमंत्री पदापासून मात्र त्यांना दोनवेळा वंचित रहावे लागले. असे असले तरी त्यांनी मंत्रीपदावर कार्यरत असतांना सलामी कुळ रद्द करणे, कुळ कायदा विधेयक मंजूर करणे, सारा व करासंबंधी सवलती देणे, जमिनीच्या किंमती ठरविणे, संरक्षित कुळांना कायद्याने अधिकार मिळवून देणे इत्यादी शेतकरी हिताचे महत्त्वपूर्ण निर्णय तडीस नेले. याचबरोबर महाराष्ट्राच्या अस्मितेचा असलेल्या विषयामध्ये राज्यपुनर्रचना विधेयक, मुंबई महाराष्ट्रातच असण्याचा आग्रह संयुक्त महाराष्ट्राची निर्मिती, डांगचा भाग महाराष्ट्रामध्ये असणे, महाराष्ट्र राज्याचे स्वतंत्र हायकोर्ट असणे, राज्याच्या सरहद्दीबाबतचे विधेयक अशा 1- अनेक विधेयकांवर विधीमंडळामध्ये भाऊसाहेब हिरे यांनी आपली स्पष्ट भूमिका मांडलेली दिसून येते. कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांनी महाराष्ट्राच्या राजकारणामध्ये दिलेले 2- योगदान व त्यांचे राजकारणातील नेतृत्व येणाऱ्या पुढील नव्या पिढीला कसे मार्गदर्शक व दिशादर्शक ठरणारे आहे. यादृष्टीने या प्रस्तुत शोध निबंधातून या विषयाचे महत्त्व पटून येते. 3-

संशोधनाची उद्दिष्टे :-

कोणतेही कार्य करतांना त्या कार्याचे एक निश्चित असे उद्दिष्ट गृहीत धरावे लागत असते. संशोधन कार्याच्या माध्यमातून

चांगल्या प्रकारचे ज्ञान प्राप्त करणे हा हेतू असतो. संशोधन म्हणजे नवनविन ज्ञान प्राप्त करणे होय. गृहित धरलेले हेतू किंवा उद्देश साध्य करण्यासाठी संशोधनाच्या संपूर्ण प्रक्रियेची मांडणी त्या उद्देशांच्या अनुषंगानेच घेणे हे अभ्यासकाला संशोधनाची पुढील दिशा स्पष्ट होत असते. याच अनुषंगाने कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय योगदानाचा अभ्यास करण्यासाठी संशोधकाने पुढील उद्दिष्टे निश्चित केलेली आहेत.

- 1- कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय नेतृत्वाची जडणघडणीचा आढावा घेणे.
- 2- कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे काँग्रेस पक्षातील योगदानाचा अभ्यास करणे.
- 3- कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या विधीमंडळातील कामकाजाची माहिती जाणून घेणे.

संशोधनाची गृहीतके :-

संशोधन करित असतांना संशोधन समस्येचे एक संभाव्य उत्तर वा स्पष्टीकरण म्हणून मांडण्यात आलेले विविध गृहीतकृत्ये असतात. तसेच संशोधक पूर्व ज्ञानाच्या आधारावर संशोधन विषयासंबंधी काही अनुमान मांडतो ते संशोधनाच्या पुढील कार्यासाठी उपयुक्त ठरत असतात. गुड अँड हॅट हे गृहीतकृत्य त्याची मांडणी करतांना म्हणतात की, गृहीतकृत्येक व उपकल्पना म्हणजे अनुमान जेथे तथ्य, निरीक्षणावर अवलंबून असून त्यामुळे काही संशोधन कार्याला चालना मिळते. अर्थात संशोधनाची सुरुवात आणि शेवट गृहीतकृत्यांनीच होत असतो. गृहीतकृत्यांमुळे संशोधनाची दिशा निर्धारित होण्यास मदत होते. म्हणून संशोधनामध्ये गृहीतकृत्याची भूमिका महत्त्वाची आहे..

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांनी तालुका पातळीपासून तर विधीमंडळ तसेच पार्लमेंटरी बोर्डात स्व-राजकीय वर्चस्व निर्माण केले होते.

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे हे तत्कालीन महाराष्ट्र काँग्रेस पक्षामध्ये प्रथम दर्जाचे स्थान निर्माण करण्यात यशस्वी झाले होते.

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांनी विधीमंडळात विविध मंत्रीपदावर कार्यरत राहून आपल्या नेतृत्वाची छाप पाडलेली दिसून येते.

संशोधन पद्धती :-

संशोधन पद्धती म्हणजे संशोधनाचे उद्दिष्टे पूर्ण करण्याचा प्रयत्न होय. संशोधनासाठी शास्त्रीय पद्धतीचे स्वरूप समजून घेतल्याशिवाय संशोधनाचा आशय समजणे कठीण असते. त्याचप्रमाणे संशोधन पद्धतीच्या अभ्यासकांसाठी शास्त्रीय पद्धतीनुसार संशोधन पद्धती समजू घेणे महत्त्वाचे व गरजेचे आहे.. संशोधन म्हणजे वैज्ञानिक पद्धती प्रत्यक्षात कार्यान्वीत करण्याची अधिक नियमबद्ध आकारबद्ध, सुव्यवस्थित व सखोल अशी प्रक्रिया आहे. वेबस्टर यांच्यामते संशोधन म्हणजे, कोणत्याही नविन तत्त्व अथवा तथ्य शोधण्यासाठी आणि जुनी तत्त्वे अथवा तथ्ये यांचे पुनःपुन्हा परीक्षण करण्यासाठी केलेला चिकित्सक व पद्धतशीर अभ्यास होय. या व्याख्येवरून असे लक्षात येते की, एखाद्या समस्येविषयी शास्त्रीय पद्धतीने अभ्यास करून माहिती गोळा करणे, त्यांचे विश्लेषण करणे व त्या आधारे त्यातून अचूक असे निष्कर्ष काढणे म्हणजे संशोधन होय. प्रस्तुत विषयाकरीता आवश्यक असलेल्या संशोधन बाबीचा योग्यप्रकारे वापर करण्यात आलेला आहे. प्रस्तुत अभ्यासासाठी विषयाच्या अनुषंगाने उपलब्ध असलेल्या प्रकाशित व अप्रकाशित साहित्याचा प्रामुख्याने विचारात घेतलेला आहे. त्याचप्रमाणे द्वितीय साधनांचा वापर करण्यात आलेला आहे.

विश्लेषणात्मक अभ्यास :

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय नेतृत्वाची जडणघडण.

भाऊसाहेब हिरे यांचा जन्म धार्मिक विचारांच्या कुटुंबात झाला असल्यामुळे त्यांना नैतिक मूल्य व प्रतिकूल परिस्थितीवर मात करण्याची शिकवण कुटुंबातूनच मिळालेली होती. बालपणापासूनच आधारकपणा, प्रेमळपणा, मितभाषित्व समजून घेण्याची वृत्ती असे सर्व संस्कार भाऊसाहेबांवर घरातूनच घडलेले होते. हीच जडणघडण त्यांच्या राजकारणातील प्रभावी व्यक्तीमत्त्वाला आकार देणारी ठरली. भाऊसाहेब हिरे यांनी त्यांचे श्रेष्ठत्व आपल्या कार्यकर्तृत्वाने सिद्ध करून दाखविले. शिक्षण घेत असतांना त्यांच्यावर महात्मा फुले आणि सत्यशोधक समाजाच्या विचारांचा मोठा प्रभाव होता. हीरे यांच्या राजकीय जीवनाला खरी सुरुवात उदोजी मराठा वसतिगृहातूनच झाली. पुढे वसतिगृहातील हिरेंचे वास्तव्य त्यांच्या संपूर्ण जीवनाला दिशादर्शक ठरले. या वसतिगृहातील वातावरण सत्यशोधकी होता. उदारमतवादी विचारसरणीचा संस्कार भाऊसाहेब हिरे यांच्यावर वसतिगृहातच घडून आला. वसतिगृहात व्यक्तिमत्त्व विकासासाठी पंचमंडळे होती. ह्या पंचमंडळाची नेमणूक निवडणूक पद्धतीने मुलांमधून निवडली जात अभ्यासवृत्ती, मनमिळावू स्वभाव, आदर्श वागणूक या गुणांमुळे भाऊसाहेब शिक्षकप्रिय व असत. विद्यार्थीप्रिय बनले होते. त्यामुळे खेळामध्येही आघाडीवर असलेले भाऊसाहेब हिरे पंचमंडळाच्या नेतृत्वपदावर सातत्याने निवडून येत असत. भाऊसाहेब हिरे यांच्या राजकीय जीवन प्रवासात रावसाहेब थोरात हे हिरे यांचे गुरुच होते भाऊसाहेब हिरे यांच्यावर महात्मा गांधीजींचा प्रभाव पडलेला होता. सुरुवातीला भाऊसाहेब हिरे यांनी सत्यशोधक समाजाचा प्रचार व प्रसार करून आपल्या राजकीय नेतृत्वाची वाटचाल सुरु केली. विविध संघटनांच्या माध्यमातून सत्यशोधक परिषद व ब्राह्मणेतर परिषदांचे आयोजन केले. इ. स. १९२२ मधील महात्मा गांधीजींनी 'यंग इंडिया' या वृत्तपत्रात लेख लिहिला होता. या लेखामुळे गांधीजींना ब्रिटिश शासनाने सहा वर्षांची शिक्षा देण्यात आली. † या घटनेमुळे गांधीजींच्या व्यक्तिमत्त्वाचा प्रभाव संपूर्ण भारतातील तरुणांवर पडला. पुढे भाऊसाहेब हिरे यांनी महाविद्यालयीन शिक्षण पुरोगामी विचार असलेल्या महाराज सयाजीराव गायकवाड यांच्या बडोदा संस्थानातून पूर्ण केले. उदोजी मराठा वसतिगृहाने भाऊसाहेब हिरेंच्या व्यक्तिमत्त्वाला सुसंस्कारीत केले तर बडोदा संस्थानातील उदात्त धोरणाने त्यांच्या विचारांना विधायक दिशा

दिली. त्यानंतर कायद्याचा अभ्यास करण्यासाठी पुणे येथे विधी महाविद्यालयात प्रवेश घेतला. बहुजन समाजाचा विकास हेच ध्येय मानणाऱ्या हिरे यांनी कायद्याची पदवी धारण करून वकीली सुरु केली. वैयक्तिक प्रपंचाला धारा न देता सामाजिक प्रपंचाची बाधिलकी जोपासण्याचे ध्येय उराशी बाळगला. अशाप्रकारे भाऊसाहेब हिरे यांनी पारंपारिक प्रतिष्ठा अथवा आर्थिक बळ नसतांना केवळ स्वतःच्या कर्तृत्वावर नेतृत्वाची उभारणी केली.

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे काँग्रेस पक्षातील योगदान.

इ. स. १९३६ मध्ये प्रांतिक कायदेमंडळाच्या निवडणुकीच्या निमित्ताने मुंबई राज्याचे प्रांतिक काँग्रेस पक्षाचे अध्यक्ष श्री. शंकरराव देव पदयात्रेच्या निमित्ताने मालेगाव येथे आले असता त्यावेळेस श्री. शंकरराव देव यांनी भाऊसाहेब हिरे यांची भेट घेऊन काँग्रेस पक्षाची ध्येय-धोरणांविषयी विस्ताराने चर्चा केली व काँग्रेस पक्षात येण्याचे सूचित केले. भाऊसाहेबांनीही श्री. शंकरराव देव यांच्या या सूचना स्वीकारली. काँग्रेस कार्यकर्त्यांच्या मेळाव्यात अध्यक्षीय भाषण करतांना श्री. शंकरराव देव यांनी वकील भाऊसाहेब हिरे यांनी काँग्रेसमध्ये प्रवेश करण्याचा निर्णय घेतला असून ते काँग्रेसचे सैनिक होण्यास तयार आहेत अशी घोषणा केली. या निवडणुकीत भाऊसाहेब हिरे हे नाशिक जिल्ह्यातील मालेगावमधून निवडून आले होते. बाळासाहेब खेर यांच्या मंत्रीमंडळामध्ये काँग्रेसचे अध्यक्ष श्री. शंकरराव देव यांनी सुचविल्यानुसार मुंबई राज्याच्या कायदेमंडळात भाऊसाहेब हिरे यांची गृहखात्याच्या पार्लमेंटरी सेक्रेटरीपदी नियुक्ती झाली. पुढे त्यांना महसूल खात्याचे पार्लमेंटरी सेक्रेटरीपदही मिळाले आणि भाऊसाहेब हिरे महसूल खात्याचे सेक्रेटरी म्हणून काम पाहू लागले.. इ.स. १९४७ च्या केंद्रीय कायदेमंडळाच्या निवडणुकीमध्ये भाऊसाहेब हिरे नाशिक जिल्ह्यातून काँग्रेस पक्षातर्फे प्रचंड मतांनी निवडून आले. १९४७ ला स्वतंत्र भारताच्या पंडीत नेहरूंच्या पहिल्या मंत्रीमंडळात मंत्री म्हणून संधी असतांनाही भाऊसाहेबांनी काकासाहेब अनुभवी आहेत. मंत्रीमंडळामध्ये त्यांनाच घ्या. काकासाहेबांना माझा पूर्ण पाठींबा व सहकार्य राहिल. मी बाहेर राहूनच जनसेवा करेल. असे म्हणून काकासाहेबांना ती संधी दिली.

२७ मे १९४८ रोजी पुणे येथील सभेमध्ये केशवराव जेधे यांनी काँग्रेस पक्ष सोडल्यामुळे महाराष्ट्रातील काँग्रेसचे अध्यक्षपद रिकामे झाले. तेव्हा पंडीत नेहरू व काँग्रेसमधील ज्येष्ठ नेत्यांनी भाऊसाहेब हिरे एकमेव नेते सर्वाना बरोबर घेऊन जाणारे आहेत हे ओळखून नाशिक येथील खासदार भाऊसाहेब हिरे यांची १३ जून १९४८ रोजी महाराष्ट्र प्रांतिक काँग्रेसच्या अध्यक्षपदी दि. सर्वानुमते निवड केली. १९५० मध्ये अखिल भारतीय काँग्रेसचे ४५ वे अधिवेशन नाशिक येथे भाऊसाहेब हिरे यांच्या अध्यक्षतेखाली यशस्वीपणे पार पडले. या अधिवेशनाचे नियोजन पाहून अधिवेशनाचे अध्यक्ष पुरुषोत्तमदास टंडन यांनी भाऊसाहेबांची प्रशंसाही केली होती. याच अधिवेशनावेळी शेकाप पक्षातर्फे निदर्शने करण्याचे ठरले होते. तेव्हा या निदर्शनाचा कुठलाही परिणाम अधिवेशनावर भाऊसाहेब हिरे यांनी होऊ दिला नव्हता. इ. स. १९५१-५२ मध्ये काँग्रेस पक्षाविरुद्ध शेतकरी कामगार पक्ष व कम्युनिस्ट पक्षाने आघाडीच उघडली होती. १९५२ मध्ये प्रतिकूल परिस्थितीमध्ये महाराष्ट्रातील विधानसभेच्या निवडणुकीमध्ये भाऊसाहेबांच्या नेतृत्वात काँग्रेसपक्षाला बहुमत मिळाले. यावेळी भाऊसाहेबांकडे भावी नेता म्हणून बघितले गेले. परंतु सत्तेसाठी कुठलेही साधन, बळाचा वापर न करता केवळ पक्ष नेतृत्व व पक्षावर कमालीचा विश्वास ठेवून शांततेची व संयमी भूमिका घेतली म्हणून मोरारजी देसाईना मुख्यमंत्री पद मिळाले. यावेळी तुम्ही याल तर तुमच्यासह नाहीतर तुमच्याशिवाय' असा पवित्रा मोरारजी गटाने घेतल्यामुळे नाईलाजास्तव भाऊसाहेब हिरे यांना मंत्रीमंडळामध्ये दुसऱ्या

क्रमांकाचे स्थान देण्यात आले. भाऊसाहेब हिरे यांना महसूल, कृषी व वन खात्याचे मंत्रीपद देण्यात आले. इ. स. १९५६, मध्यमंतीपदाच्या निवडणुकीतही मोरारजी देसाई यांनी मुख्यमंत्रीपदावर एकतर्फी हक्क सांगितल्यामुळे त्यांनी भाऊसाहेबांविरुद्ध यशवंतराव चव्हाणांना उभे केले आणि याही वेळी भाऊसाहेबांचा पराभव झाला. असे असले तरी भाऊसाहेब यांनी हे धाडस दाखविले नसते तर पुन्हा एकदा महाराष्ट्राच्या मानगुटीवर मोरारजी देसाईचेच जोखड बसले असते. भाऊसाहेबांचा पराभव झाला असला तरी काँग्रेसच्या शिस्तीचे पालन करून भाऊसाहेब हिरे हे मोरारजींचे महाराष्ट्राच्या राजकारणावरील पगडा नष्ट करण्यात यशस्वी झाले. १९५७ च्या महाराष्ट्रात विधानसभेच्या निवडणुकीत मालेगाव मतदार संघातून काँग्रेस पक्षाकडून भाऊसाहेब हिरे पुन्हा एकदा प्रचंड मतांनी विजयी झाले. परंतु महाराष्ट्रामध्ये इतर ठिकाणी काँग्रेसला अपयश पत्करावे लागले होते. यावेळेस महाद्विभाषिक मुंबई राज्याच्या मंत्रीमंडळात समावेश झाला नाही. असे असले तरी भाऊसाहेबांनी सतत आमदार म्हणून काँग्रेस पक्ष मजबूतीचे कार्य अविरोधपणे सुरु ठेवले. भाऊसाहेब हिरे यांनी राजकारणाबरोबरच समाजकारण, शैक्षणिक सुधारणा, सहकार क्षेत्रातील सुधारणा आर्थिक सुधारणा या समाज उपयोगी घटकांवर भर दिला.

कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांच्या विधीमंडळातील कामकाजाची माहिती.

इ. स. १९५३ ते इ. स. १९५६ या कालावधीमध्ये भाऊसाहेब हिरे हे महसूल, कृषी व वन मंत्री झाल्यानंतर त्यांनी विधीमंडळामध्ये शेतकरी, कुळ कायदा, जमीन सुधारणा, भाषावर प्रांत पुनर्रचना, राज्याच्या सरहद्दी, कर/ साराबाबत सवलती, जमिनीच्या किमती निश्चित करणे, मुंबई प्रश्न, महाराष्ट्र राज्यास स्वतंत्र हायकोर्ट मिळणे इ. सुधारणेसाठी अनेक विधेयके मांडली गेली. या सर्व विषयांवर झालेल्या चर्चेमध्ये सहभागी होऊन आपले स्पष्ट व परखड मत मांडून त्यांचे कायद्यामध्ये रूपांतर होण्याची मोलाची जबाबदारी पार पाडलेली दिसून येते. भाऊसाहेबांनी आणलेल्या कुळ कायद्याने जमिन कसणारा कूळ हा जमीनीचा मालक बनणार होता. या लोकाभिमुख विधेयकामुळे भाऊसाहेबांना आपल्या सहकाऱ्यांसमवेत मोठ्या जमिनदारांचाही रोष पत्करावा लागला होता. जमिनीचे तुकडे करण्यापेक्षा एकत्रीकरण करावे. भाऊसाहेबांचे विचार काळाच्या पुढेच होते. शेतकरी उत्पादक आणि उद्योजक झाला पाहीजे आणि ते त्यांनी सहकार चळवळीतून सिध्द करून दाखवले. सर्व प्रकारचे वतनदार शेतकरी, कुळे यासंबंधी त्यांचा मोठा अभ्यास होता. धार्मिक वतने, विधवा, अज्ञान मुले यांच्या जमिनीच्या हक्काबाबत ते जागरूक होते. शेतकऱ्याला न्याय सहज, सुलभ व स्वस्त मिळावा अशी त्यांची धारणा होती. विधीमंडळामध्ये झालेल्या विविध विषयांवर भाऊसाहेबांनी सक्रीय भाग घेऊन आपले परखड विचार मांडले. सामान्य जनतेच्या, शेतकरी कष्टकऱ्यांच्या हिताचे निर्णय घेतांना विरोधकांची नाराजीही त्यांनी पत्करली. मात्र ते आपल्या मतावर ठाम राहिले. अनेकवेळा एकाकी पडले तर एकाप्रसंगी तर त्यांनी जीव गेला तरी चालेल परंतु मांडलेले विधेयक मागे घेणार नाही अशीही भूमिका त्यांनी घेतलेली दिसून येते.

निष्कर्ष :

भाऊसाहेब हिरे यांचे व्यक्तिमत्त्व जरी करारी होते तरी त्यांच्यावर झालेल्या अनेक संस्कारातून नेतृत्वाची जडणघडण झाली. आपल्यात असलेल्या नेतृत्व गुणांच्या आधारे त्यांनी राजकारणामध्ये मजबूत पाय रोवले. भाऊसाहेब राजकारणात सक्रीय झाले त्यांनी देशातील सर्वात मोठा असलेल्या काँग्रेस पक्षात राहून समाजसेवा व लोकसेवा केली. पक्षातील विविध पदांवर राहून त्यांनी अनेक कार्यकर्ते घडविले. आपल्या नेतृत्वाचा ठसा उमटवून अनेक प्रश्न त्यांनी सामोपचाराणे

मितविले. इतकेच नव्हे तर विधीमंडळामध्ये झालेल्या विविध विषयांवर भाऊसाहेबांनी सक्रीय भाग घेऊन आपले परखड विचार मांडले. भाऊसाहेबांच्या अंगी असलेल्या यशस्वी नेतृत्व गुणांमुळे ते यशाचा शिखरावर पोहचले होते. पक्षनेतृत्वावरील कमालीचा विश्वास, मनाचा संयम, शांत स्वभाव, दुसऱ्यांचा आदर करणे व सत्तेचा कुठलाही हव्यास नसलेल्या भाऊसाहेबांना मात्र महाराष्ट्राचे मुख्यमंत्री होण्याची संधी दोन वेळा चालून आली होती ती दुदैवाने गमवावी लागली.

संदर्भ साहित्य ग्रंथ :

1. C.R.Fay, *Operation at home and abroad*, Volume I,,-
2. कामत डॉ. गो. स., सहकार तत्त्व, व्यवहार आणि व्यवस्थापन, विद्या प्रकाशन, पुणे, द्वितीय आवृत्ती १९७९, पृ. ६६
3. सोनखासकर डॉ. ज्योत्सना कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे, ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई, प्रथम आवृत्ती, जुलै २०२०, पृ. ५-६:
4. भामरे प्रा. डॉ. राजेंद्र आणि प्रा. डॉ. यशवंत साळुंखे यांनी 'कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे विचार वेध' हा ग्रंथ कर्मवीर भाऊसाहेब जन्मशताब्दी वर्ष, सोमवार दिनांक २८ फेब्रुवारी २००९, गणेश प्रिंटर्स, नाशिक, पृ. ९-१०
5. सोनखासकर डॉ. ज्योत्सना उपरोक्त क्र. ३, पृ. ७
6. पवार प्रा. डॉ. बाबुराव, सोनहिरा, कर्मवीर भाऊसाहेब हिरे यांचे चरित्र, प्रताप प्रकाशन, नाशिक, प्रथम आवृत्ती, मार्च १९९८, पृ. २३
7. किता, पृ. ३६.
8. किता, पृ. ३८ ते ३९
9. किता, पृ. ४६ ते ४७

१९७० च्या दशकातील दलित स्वकथनाचे स्वरूप

प्रा. डॉ. सुरेश व्यंकटराव कदम

मराठी विभाग, राजर्षी शाहू महाविद्यालय, परभणी

DOI-10.5281/zenodo.7053451

सारांश

२४ डिसेंबर साली दया पवारांचे बलुतं हे स्वकथन प्रकाशित झाले व या दलित स्वकथनाच्या खळाळत्या प्रवाहाला सुरुवात झाली. म्हणून १९७१ ते १९८० या दशकात आलेली स्वकथने (आत्मकथने) अशी मांडता येणार आहेत.

१ हकिकत आणि जटायू केशव मेश्राम ऑगस्ट

२ बलुतं दया पवार — डिसेंबर

३ आठवणीचे पक्षी — प्र. ई. सोनकांबळे — जानेवारी,

४ उपरा लक्ष्मण माने डिसेंबर

अशी ही दलित स्वकथने आलेली असून स्वकथनकारांनी स्वतःचे दुःख दारिद्र्य व जातीयतेमुळे येणारी जीवघेणी अवहेलना व्यक्त करण्यासाठी कधी आत्मनिवेदन स्वीकारले आहे. तर कधी डायरीच्या स्वरूपात लिहिले आहे. तर कधी आपले दुःख सांगण्यासाठी वेगवेगळे लेख लिहून हे दुःख वेगवेगळ्या लेखांतून वाटून टाकले आहे. परंतु हे सर्व लेख एकत्र केले की, सलग असा त्यांच्या जीवन दुःखाचा पट तयार झाला. हे सर्व लक्षात घेतले की निश्चितपणे असे जाणवते की, दलित स्वकथनांच्या लेखनशैलीची ही विविधता आहे. तर दलित स्वकथनाला एक साहित्यप्रकार म्हणून रुढ चौकट किंवा मापदंड लावता येणार नाही. असेच स्वकथनाचे रूप दिसते आहे. कारण या स्वकथनातून त्यांना स्वचरित्र साकार करावयाचे नसून त्यांच्या जीवनात त्यांनी जे जे भोगले ते ते सर्व सांगायचे आहे. हे सर्व अत्यंत प्रामाणिक व प्रांजळपणाने मांडण्याची त्यांची इच्छा आहे. त्यामुळे आपले दुःख हलके होईल. हीच त्यांची स्वकथन लेखनामागची प्रांजळ भूमिकाही दिसते आहे. म्हणजेच स्वकथन लेखनामुळे आपले दुःख सांगून मोकळे होण्याचा अनुभव दलित स्वकथनकार अनुभवीत आहेत असेच दिसते आहे.

बलुतं —

दि. २४ डिसेंबर, १९७८ रोजी दया पवार यांचे बलुतं नावाचे स्वकथन प्रसिद्ध झाले. या स्वकथनातून त्यांच्या आयुष्यात आलेल्या हजारो व्यक्तींचे दर्शन त्यांनी घडविले असून त्यांनी या संदर्भात असे म्हटले आहे की, माझ्या आयुष्यातील सर्व माणसे महत्त्वाची असून त्यांना वेगळं काढून माझं व्यक्तिमत्त्व उभच राहू शकत नाही. म्हणून त्यांना कधी दादासाहेब गायकवाड यांच्यासारखं व्हावं वाटतं तर कधी डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांसारखं व्हावं वाटतं असे त्यांनी नोंदविले आहे. परंतु डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांसारखी आपल्याला भाषणं देता यावीत म्हणून शाळेतील वक्तृत्व स्पर्धेत जेव्हा ते नाव द्यायचे तेव्हा दुसरी सवर्णांची मुले हा बघा आला दुसरा आंबेडकर म्हणून त्यांना हिनवायचे आणि ते त्यामुळे दुभंगून जायचे ही अवहेलनाची बाबही त्यांनी शालेय जीवन

सांगताना नोंदविली आहे. दया पवारांचे वडील मुंबईला गोदीत हमाल असल्यामुळे त्यांचे बालपण मुंबईत गेले. परंतु घरची अत्यंत गरिबी असल्यामुळे तेथील कवाखाणयासारख्या वस्तीतच त्यांना राहावे लागले असून, तेथील चाळीच्या संडासातील पांढरे वळवळणारे कीडे, बकाल वस्ती, रस्त्यानं वाहणारी विष्टा हे सर्व वर्णन पाहिले की आपणही त्या किळसवाण्या घाणीतूनच जात आहोत याची प्रचिती हे स्वकथन वाचकांना देते आहे. तर वडिलांच्या मृत्यूमुळे त्यांना गावी यावे लागते व तेथे कोणताच उद्योग नसल्यामुळे भयावह गरिबीला टक्कर द्यावी लागते व अशी टक्कर देत असताना पोटाची खळगी भरण्यासाठी मेलेल्या गुरांचे मांस खावे लागते. हे विदारक सत्य त्यांनी कथन केले आहे. याशिवाय ज्यावेळी घरात खायला काहीच नसेल त्यावेळी मांसाचे चुलीवर भाजून वाळविलेले तुकडे (चणी) मी

खात होतो. एवढेच नाही तर मधल्या सुट्टीत जेव्हा सवणांची मुले भाकरी खात असत त्यावेळी भाकरी तर घरून मिळायचीच नाही, परंतु घरातील मांसाचे हे वाळविलेले तुकडे मी खात असे हे प्रांजळपणे त्यांनी स्वकथनात नमूद केले आहे.. शेतकरी कधीच गोडीने दलितांना बलुतं देत नव्हते. ही बाबही पवार यांनी एका आठवणीद्वारे स्वकथनात नमूद केली आहे. शेतकरी बलुतं देताना किती बेमुवर्तपणा आणि रंगेलपणा दाखवित होते. तर बलुताशिवाय कुठलाच उत्पन्नाचा मार्ग नसल्यामुळे लाचारपणे हे सर्व सोसमे दलितांच्या नशिबी आले होते. हे त्यांनी सांगितले आहे व अशा परिस्थितीत मृतमांस खाण्याशिवाय पोटाचा खड्डा भरणे शक्य नव्हते व येथेही गिधडे आमचे हिस्सेदार असत. त्यांना कितीही हाकलले तरी लाचारपणे ते पडाच्या जवळ येत व मेलेल्या गुरांचे मांस लुचून खात असत. त्यांच्या तोंडातील घास दलित मंडळी लुचून खातात. म्हणून गिधाडे हिंस्र डोळ्यांनी आमच्याकडे पाहत असत. हे प्रसंग वास्तवही त्यांनी जसेच्या तसे स्वकथनातून मांडलेले आहे. राष्ट्रीय लेखक संघाचे दिल्लीचे आमंत्रण त्यांना दिले होते.. या मेळाव्यात पंतप्रधान इंदिरा गांधी हजर राहणार होत्या. हे माहीत असूनही त्या आमंत्रणाकडे त्यांनी पाठ फिरविली व विमानातून खालची दुनिया पाहण्याची संधी चुकली. हे सांगून त्यांनी हे स्वकथन थांबविले आहे. या स्वकथनातून स्वतःच्या जीवनाबरोबरच आजूबाजूला घडणाऱ्या तत्कालीन सर्वच घटनांचा पट पवार यांनी मांडलेला असून त्यांच्या आयुष्यात आलेल्या व्यक्तींचा सहवास आणि शेवटही त्यांनी नोंदविलेला आहे. याशिवाय दलित चळवळीचे उभे राहणे, फोफावणे आणि भरकटणेही त्यांनी चित्कारले आहे. हा प्रवास सतत पराजितच होत गेलेला दाखविला आहे. म्हणजेच वास्तव उभे जसे आहे तसेच त्यांनी मांडले आहे. या स्वकथनातील लैंगिक व श्रृंगारिक संदर्भ वाचकांना खटकून नेत आहेत. परंतु दलितांच्या गुह्य जीवनापर्यंतचे सर्व संदर्भ जेव्हा स्वकथनावर मांडतो तेव्हा ते कितीही वस्त्रगाळ केली तरी त्यात गढूळपणा हा

राहणारच आहे, याची स्पष्ट कबुली स्वकथनकरा दया पवार यांनी या स्वकथनाच्या शेवटी स्वतःच दिलेली आहे. म्हणूनच दया पवार यांचे बलुतं हे स्वकथन त्यांच्या जीवनातील भयावह, भीषण दारिद्र्याचा आलेख तर आहेच, परंतु तत्कालीन समाजाचे ते भयावह दारिद्र्य दर्शन ठरविलेले आहे.

आठवणीचे पक्षी प्र. ई. सोनकांबळे (२७ जानेवारी, १९७९)

दि. २७ जानेवारी, १९७९ वर्षात तिसरे साहित्य संमेलन औरंगाबाद येथे भरले जाणार असताना या साहित्य संमेलनात प्र. ई. सोनकांबळे यांचे आठवणीचे पक्षी हे स्वकथन प्रकाशित झाले. या स्वकथनाने मराठवाड्यातील दलित जीवनाचे वास्तव चित्रण तंतोतंत उभे केले असून या स्वकथनासाठी त्यांनी लिखाणाचे माध्यम महारी भाषा निवडली आहे. म्हणजे मराठी भाषेचे मुळचे शुद्धरूप म्हणून महारी भाषेबद्दल सार्थ अभिमान त्यांनी या स्वकथनातून प्रकट केला आहे. असे प्रतिष्ठानच्या जुलै १९६९ च्या अंकात दया पवार यांनी म्हटले आहे. प्र. ई. सोनकांबळे यांनी दलित जीवनातील दैन्य, दास्य आणि दुःख व्यक्त केले असून मराठवाड्यात विषमता किती भयंकर प्रमाणात होती याचा हा सार्थ पुरावा होय. प्र. ई. सोनकांबळे यांचा जन्म मराठवाड्यातील उस्मानाबाद, लातूर जिल्यातील सुल्लाळी या गावी झाला. त्यांचे आई-वडील भूमीहीन महार. त्यातच लहानपणीच ते प्र. ई. सोनकांबळे यांना सोडून देवाघरी गेले. त्यामुळे थोरल्या बहिणीने प्र. ई. सोनकांबळे यांना सांभाळले. थोरल्या बहिणीच्या घरीही गरिबीच खितपत असल्यामुळे त्यांचे बालपण, किशोरपण भयावह गरिबीत गेले. म्हणूनच बहिणीच्या घरी पडेल ते काम करणे याशिवाय गावात कुणाच्याही घरी काम करून त्यातून मिळालेली भाकर पैसे बहिणीच्या घरी देणे यातच त्यांचे बालपण भुकेने करपून गेले. थोड्याशा पैशासाठी गूळ मिळतो म्हणून ऊसाच्या गुहाळात त्यांनी काम केले. येथे रात्री झोपताना थंडी वाजते म्हणून ऊसाची चिपाडेच त्यांनी अंगावर घेतली व अशा

चिपाडात झोपल्यामुळे चरक्याचा मस्तवाल बैल त्यांना बालपणी तुडवून गेला आहे, तर पाचवी पासूनच हाडोळतीला दहा-बारा मैलांचा प्रवास दररोज करून त्यांना शाळेत जावे लागले आहे व येथे शाळेत सर्व विद्यार्थी मधल्या सुद्धीत जेवण करत असताना आपल्याजवळ भाकरीच नाही म्हणून जवळच्या शेतात जाऊन मागे राहिलेल्या शेंगा उकरून त्या खाऊन, पाणी पिऊन त्यांनी पोटाची भूक भागवली आहे. पाटी पुस्तकासाठी त्यांना पैसे मिळावेत म्हणून हाडोळीतोच्या नरसिंगा ढोर या ढोर समाजाच्या माणसाच्या घरी त्याला कातडे पिकवायला लागणारी बाभळीची साल त्यांनी ओझेच्या ओझे नेऊन टाकली. या सालीने कातड्याला तर रंग आलाच परंतु माझ्या जीवनालाही रंग आला असे स्वकथनात लिहून टाकले आहे. यानंतर हाडे वेचणं आणि ते विकणं व त्यातून पैसे बहिणीच्या संसारासाठी व वध्या-पुस्तकांसाठी वापरणे हे कामही त्यांनी केले. तुळशीराम कुंभारासाठी लिद जमा करायचा व त्यातून थोडेसे पैसे मिळवण्याचे कामही त्यांनी केले. अशा पोटासाठी अनेक कामे करताना दुसऱ्याच्या घरात मेलेले सडके कुत्रे बाहेर नेऊन टाकण्याचे कामही त्यांनी केले असून, कुत्रं फेकायला सांगणाऱ्या म्हातारीने कुत्रं फेकल्यानंतर भाकर देईल असे म्हटले होते. पण कुत्रं फेकून आल्यावर मात्र तिची सून मला भाकर देण्यास तयार नव्हती. हा केविलवाणा अनुभव त्यांनी मांडलेला आहे. तर गरिबीची सीमारेषा व स्वतःच्या दारिद्र्याचं भयावह दर्शन घडवितांना हाडोळतीला धर्मा नावाचा मित्र भेटला व त्याच्या आईने आणलेल्या चक्कीतील लोकांच्या पायाखालील तुडवलेल्या पिठाच्या भाकरी कचकच लागत असतानाही खाल्ल्या आणि जीवनाच्या कचकचीला सामोरे गेलो. हे त्यांनी अत्यंत करुणामयी वृत्तीने मांडले आहे. भूक, दारिद्र्य सततची उपासमार आणि अंगावर कधीच स्वच्छ नसणारे कपडे यामुळे मला कायमस्वरूपी खरुज, ऊवा आणि कावीळाने ग्रासलेले असायचे हेही त्यांनी नमूद केले. प्र. ई. सोनकांबळे गावकीची कामे करत असताना त्यांच्या पायात पायतान नसायचे. एके दिवशी

प्रल्हाद आपले पाय दुखतायत म्हणून स्वच्छ धुतात. त्यांच्या एका पायात पंचवीस तर दुसऱ्या पायात सव्वीस असे एकूण एकावणण काटे निघतात. असा काट्याकुट्यांचा जीवनप्रवास जगत असत. आठवणीचे पक्षीमध्ये कथानायकाला अनंत यातना सहन कराव्या लागल्या आहेत. या यातनांचे व त्यातून विकसित झालेली सरंजामशाही आहे. त्यामुळे संपत्तीचे एकत्रीकरण वरच्या वर्गात होऊन बेकारी व भिकारीपण खालच्या वर्गावर लादले आहे. अशा भयावह गरिबी व अस्पृश्यतेला उराशी बाळगत आणि सहन करीत व शिक्षण घेत प्रल्हादसारखा मुलगा डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांनी सुरु केलेल्या कॉलेजातच इंग्रजी विषयाचा प्राध्यापक, विभागप्रमुख, प्राचार्य पदापर्यंत जाऊन पोहचला आहे. त्यांचा हा प्रवास सर्वच स्तरातील गरिबीत पिचलेल्या विद्यार्थ्यांना दीपस्तंभासारखा अंधारातही मार्ग दाखविणारा म्हणून उपोयगी पडणारा आहे. म्हणून प्र. ई. सोनकांबळे यांच्या आठवणीचे पक्षी या स्वकथनाचे महत्त्व अनन्यसाधारण ठरत आहे.

उपरा लक्ष्मण माने (१९८०)

२५ डिसेंबर, १९८० रोजी लक्ष्मण माने यांचे उपरा हे आत्मकथन प्रकाशित झाले. या आत्मकथनातून माने यांनी कैकाडी जातीतील व्यक्तीचा जीवनप्रवास त्यांच्या जगण्यातील भयावह, भीषणता आणि त्यांच्या वाटेला आलेलं अफाट दारिद्र्य स्वतःच्या जीवनानुभवाने मांडलेले आहे.

उपरा या स्वकथनाची सुरुवात गावंदरीला गाढव सोडल्यावर ती गाढवं राखण्याचं काम आम्ही खेळत खेळत करीत होतो. अशा प्रसंगाने झालेली असून, अंगावर कपडे नाही, जवळ पाटी नाही पुस्तक नाही, लेखणी नाही अशा अवस्थेत शाळेत बसून राहणे ही त्यांना शिक्षाच वाटत होती. तर गाव, शीव जमीन, अन्न, पाणी अशी कोणतीच मालकी आमच्या समाजाजवळ, जातीजवळ नसते. परंतु कैकाड्यांचा देव व भुते मात्र खतरनाक असतात. याचा पडताळा त्यांनी त्यांच्या वडिलांच्या वागण्याच्या अनुभवातून दिलेला आहे. गावातील कुणाच्याही दारी जाऊन शिळं पार्क वाढ, भाकरी वाढ माय म्हणून दीनवाणी फिरत असतं. अशी भोक पोटाची

आग भागविण्यासाठी मी केकवेळा मागितली आहे. असे हे दाहक वास्तव माने यांनी स्वकथनातून बयाच वेळा नोंदविलेले आहे. तर एखाद्या लग्नाच्या कार्यक्रमात जेवणाया उष्ट्या पत्रावळ्यांवरील पदार्थ घेण्यासाठी आमच्या पोरान्या उड्या पडायच्या. हेही त्यांनी अत्यंत संयमितपणे कथन केले आहे. या सर्व दारिद्र्याचे माने यांच्या जीवनाभोवती आपले राक्षसी हात कसे आवळलेले होते. याचे सार्थ प्रत्यंतर उपरा मधून येते आहे. अशा भयावह दारिद्र्याची टक्कर देत त्यांनी इयत्ता सातवी गाठली. यावेळी लग्नात वाद्य वाजविण्याचे काम करून त्यांनी पुस्तके, वह्याव कपडे घेतले. पंचासमोर गुन्हेगार ठरलेल्या व्यक्तीच्या डोक्यावर गु-घाणीने भरलेला मातीचा डेरा ठेवला जात असे. आणि त्याला देवाला फेया मारायला सांगितले जात असे. अशा फेया मारताना आजूबाजूला बसलेल्या पंचांनी एक एक खडा त्या डेयाला मारायचा यामुळे डेयाला छिद्र पडून ती गु घाण गुन्हेगाराचय अंगावर तोंडावर आणि डोक्यावर पसरायची. त्याने ती घाण न पुसता देवाला पंचासमोर प्रदक्षिणा मारायच्या ही जातपंचायतीची कठोर शिक्षा त्यांनी बालपणी पाहिली आणि तिचा धसकाच घेतला होता. सोयरीकीच्या वेळी पोरीच्या बापाला भाव असतो हे समाजाचे वेगळेपण त्यांनी नोंदविले आहे. पुढे एस.एस.सी. पास होऊन कॉलेजात असताना एक मित्र प्रेमविवाह करतो. या मित्राच्या संसाराला पैसे देऊन मदत करण्यासाठी ते एका वाजंत्री वाजविणाऱ्या ताफ्यात जाऊन ढोल वाजविण्याचे काम करतात व मित्राला पैसे देतात. ही बाब त्यांच्या परोपरकार जपणाऱ्या स्वभावाची आठवण करून देणारी आहे. अगोदरच अठराविश्व दारिद्र्य व त्यात घरमालकाच्या मुलीशीच प्रेमविवाह केल्यामुळे माने अत्यंत अडचणीत आले होते. त्यांना पुढे जातपंचायतीत बोलाविले. त्यासाठी त्याने माने यांच्या वडिलांना वेठीस धरले होते ही भयावह आठवणही त्यांनी उपरा या आत्मकथनातून नोंदविलेली आहे. उपरा स्वकथनातून पिढ्यानपिढ्या बिहाड पाठीवर घेऊन गाढवाचं जीणं जगणाऱ्या कैकाडी जातीच्या वेदना आलेल्या असून या

स्वकथनामुळे भटक्या विमुक्त जाती—जमातीच्या प्रश्नावर सामाजिक मंथन सुरु झाले आहे. त्यामुळे भटक्यांचा प्रश्न सामाजिक चर्चेचा विषय होऊन त्यांच्यासाठी काम करणाऱ्या मंडळीच्या कामाला चालना मिळालेली आहे. या स्वकथनाचा विषय हाच की, माने यांनी जे आयुष्य जगले. जे भोगले व अनुभवले ते प्रांजळपणाने मांडलेले आहे.. तर पुन्हा स्वतःच्या पायावर उभं राहूनही जातीतच जगणे कसे भाग पडले याचा सार्थ प्रांजळ पडताळा उपरा या स्वकथनातून दिलेला आहे. महाराष्ट्रातील कंजारभाट, कैकाडी, वडार, टकारी, भामटी, वैदू, गोसावी अशा कित्येक जमातीच्या पदरी हे उपरेपण आलेले आहे. त्यांच्या माथी असलेला उपरा हा कलंक पुसून मानवी संस्कृतीत या लोकांना कधीतरी सामावून घेतले जाईल का ? आणि आपल्या समाजाच्या चौकटी मोडून आपले लोक बदलतील का? हे कधी न सुटणारे प्रश्न लक्ष्मण माने यांच्या उपरा या स्वकथनातून प्रभावीपणे सुजाण समाजापुढे आलेले आहे.

हकिकत आणि जटायू — प्रा. केशव मेश्राम
दि. १५ ऑगस्ट १९७२ रोजी केशव मेश्राम यांचे हकिकत आणि जटायू हे कादंबरी सृष्टी शय स्वकथन प्रकाशित झाले. हकिकत हे स्वकथन असून सात—आठ वर्षांचा परिपाक होय. तर जटायू हे कादंबरी सृष्टी शय स्वकथनाचा भाग त्यांनी जोडलेला आहे. हकिकत आणि जटायू या आत्मकथनातून अस्पृश्य जातीच्या वाट्याला येणारे दुःख व वंचितपणा याची सांगडच मेश्राम यांनी घातलेली आहे. हकिकत सांगताना मुंबईला प्राथमिक शिक्षणासाठी चुलत भावाकडे करावी लागणारी कामे व त्यांची अखंडता हे त्यांनी सांगितले. पुढे विदर्भातील अकोला येथे जन्मगावी आल्यावर त्यांच्या घराण्याचा, आजीच्या तोंडून ऐकलेला लौकिक पाहून आई—वडिलांना मदत करावी म्हणून रात्रीची सायकल शिक्षा भाड्याने कशी चालविली. काळश्याच्या बंगन कशा खाली केल्या, ऑईल मिलमध्ये जाऊन मशीन सोबत अंगावर तेल उडत असताना कसे काम केले. ग्रामीण जीवनापेक्षा अस्पृश्यतेपेक्षा अस्पृश्यतेचे चटके शहरात शिथिलतेने बसतात. असेच

स्वकथनावर मेश्राम यांना सांगायचे आहे. एकंदरीत आठ—दहा वर्षांच्या शैक्षणिक जीवनामध्ये मेश्राम यांनी जे पाहिले, सोसले अत्यंत सूक्ष्मपणे मांडले आहेच. या कथनातून अस्पृश्य समाजाच्या तरुणाचे दुःख त्याची धडपड, त्याला होणारा सामाजिक व दलितांचाच विरोध, या समाजाच्या अंधश्रद्धा या सर्वच बाबींवर मेश्राम यांनी प्रकाश टाकला असून, अस्पृश्य हे समान सवर्ण समाजाकडून दबोचलेले असूनही त्यांच्यातही कसा भेदभाव आहे, वैमनस्व आहे याचे दर्शन देते आहे. या दृष्टीने कादंबरी म्हणून केलेले हे कथन वाचकांच्या अंतर्मनाचा ठाव घेणारे ठरते आहे. १९७१ ते १९८० दशकातील आत्मकथनांकडे पाहता असे दिसते की, या कालखंडातील आत्मकथने आपले दुःख संयमितपणे निवेदन करित असून कोणताही आक्रस्ताळेपणा यातून दिसून येत नाही, तर पदरी आलेले दुःख आपण कसे निमूटपणे भोगले असाच आशय यातून व्यक्त होत आहे. असे असले तरी मिस्किल, तिरकस विषमद मात्र यातून प्रकट झालेला असून, त्यामुळे आजची आणि तेव्हाची परिस्थिती सहजपणे वाचकांना समजून येत आहे. या शिवाय समाज कितीही सुधारला तरीही अस्पृश्यता नष्ट होणारच नाही, हे सूत्र या स्वकथनातून प्रकर्षाने प्रकट होताना दिसत आहे. या स्वकथनातून अज्ञान, दारिद्र्य, पिळवणूक यामुळे दलित माणूस कसा नागवला गेला आहे याचे चित्रण झालेले दिसून येते जातीव्यवस्थेमुळे माणसाचे अवमूल्यन होते हे स्पष्ट झालेले आहे. म्हणूनच प्रत्येक स्वकथनातील स्वकथनकार जातीव्यवस्था नाकारतो आहे. हे सूत्र स्वीकारतो आहे. माणसाला केंद्रबिंदू मानल्याशिवाय दलित माणसाची प्रगती होऊच शकणार नाही. तर दलित समाजही प्रगती करू शकणार नाही. हे सूत्र ध्यानी घेऊन मनुष्यत्वाची प्रतिष्ठा मानणाऱ्या तत्त्वप्रणालीशी ही आत्मकथनाचे नाते जोडू पाहत आहेत. थोडक्यात सांगायचे म्हणजे आलोद्धार हेच दलित साहित्याचे प्रयोजन असून, शेकडो, हजारो वर्षे पिढ्यान्पिढ्या सोसत आलेल्या देन, दुःख, अन्याय, अत्याचार यांपासून स्वतःला, समाजाला मुक्त करण्यासाठी

संघर्षसिद्ध झालेल्या समाजाचा उद्गार म्हणजे दलित साहित्य असे जर मानले तर या दशकातील संयमशीरपणे जीवनसंघर्ष मानणारी दलित आत्मकथने त्याला अपवाद ठरणार नाहीत अशी या दशकातील आत्मकथनाची वस्तुस्थिती आहे. तर दलित स्वकथने वेगवेगळे रूपबंध होऊन आकार घेत असताना प्रथम स्वकथनाचा अविष्कार, कवितेच्या रूपानेच झाला आहे. कारण कवितेतून त्यांना स्वानुभूत मांडणे सोपे वाटले आहे. म्हणूनच रापी जेव्हा लेखणी होते, हे राम दुतोंडे यांचे काव्यभाष्य, छावणी हालते आहे. यातील अर्जुन डांगळेचे अनुभव हे। स्वकथनच ठरले आहेत. तर दलित दुःख व्यक्त करण्यासाठी आपली कविता अपुरी पडते आहे. याचा प्रत्यय सरळच दया पवार यांना आला आहे. म्हणूनच त्यांनी कोंडवाडा काव्यसंग्रहातील कवितेनंतर बलुतं हे आत्मकथन लिहिले आहे. तर प्रा. केशव मेश्राम यांनीही आपल्या जीवनातील भयावह दुःखाची नोंद घेण्यासाठी हकिकत आणि जटायू हे कादंबरी सदृश्य विस्तीर्ण पट असणारे माध्यमच जवळ करावे लागणार आहे. स.ना. सूर्यवंशी यांनी अगाजे कल्पिले नाही, सांगताना सरळ निवेदनाचाच घाट धरलेला आहे. तर आठवणीचे पक्षी व्यक्त करताना प्र. ई. सोनकांबळे यांनीही एक एक आठवण वेगवेगळी करूनच लेखांद्वारे व्यक्त केली आहे. मुरलीधर जाधव यांनी आपले कार्यकर्ता जीवन व्यक्त करण्यासाठीही कादंबरीसारखा विस्तीर्ण पाट स्वानुभवकथनासाठी स्वीकारला आहे. तर आपला झालेला कोंडमारा व्यक्त करण्यासाठी मुक्काम पोष्ट देवाचे गोठणे लिहिताना माधन कोंडविलकर यानी त्यांच्यावरील असंख्या दुःखाची व्यथा डायरी रूपाने सांगितली आहे. तर आपले समाज जीवनातील उपरा स्थान प्रगट करताना लक्ष्मण माने यांनीही आपले दुःख सलग न सांगता तुटक तुटक करूनच सांगितले आहे. तर उदूध्वस्त व्हायचंय मला मधून मल्लिका अमर शेख यांनीही एखादी शोकांतिका सांगवी तसे आपले जीवन दुःख व्यक्त केले आहे. तर सर्वोदय मधून गंगा, राणू, तिझड या फिरस्त्याचे दुःख केवळ कादंबरी आकृतीबंधामुळेच वाचकांचे हृदय

अस्वस्थ करुन टाकणारे ठरले आहे. याचा अर्थ असा की, १९७१ ते १९८० या दहा वर्षांच्या कालखंडातील हकिकत आणि जटायू (केशव मेश्राम), बलुतं (दया पवार), आठवणीचे पक्षी (प्र. ई. सोनकांबळे), उपरा (लक्ष्मण माने) या आत्मकथनांची हजेरी मराठी वाङ्मयात लागल्यामुळे प्रस्थापित साहित्य विश्वात खळबळ उडाली आहे. दलित समाजातील लोकांनी जे जीवन भोगले. त्या समाजाचे उघडे नागडे वास्तव अत्यंत प्रामाणिकपणे आत्मकथनातून मांडले आहे. जे प्रस्थापितांनाही चित्तथरारक वाटले आहे. म्हणजेच भयावह, भीषण, चित्तथरारक असे जग दलित आत्मकथनाच्या निमित्ताने मराठी साहित्यात प्रथम अवतीर्ण झाले आहे.

दलित आत्मकथनाचा हा प्रारंभीचा काळ आहे. इथर्यत जातीव्यवस्था दलितांना त्रास देण्यासाठीच निर्माण झाली आहे. म्हणूनच प्र. ई. सोनकांबळे यांच्या आत्मकथनातून विद्रोहपेक्षा ही जाण ठेऊनच दया पवारांनी आत्मकथन लिहिले आहे. याशिवाय मुक्काम पोस्ट देवाचे गोठणे मधून गोंडविलकर यांनी असह्य त्रास सहन करुनही स्वतःचे सोशिक समजूतदार, मनच प्रकट केले आहे. तर लक्ष्मण माने यांच्या उपरा आत्मकथनातून लेखकाच्या बिकट परिस्थितीचे दुःख ठसठसत आहे. हे सर्व पाहता १९७१ ते १९८० या दहा वर्षांच्या कालखंडात आलेल्या स्वकथनाचे स्वरूप संयमशील, मवाळ असल्यामुळे त्यातून भयावह ग्रोथ प्रकट झालेला नाही हे स्पष्ट झालेले आहे.

संदर्भ ग्रंथ

१. बलुतं दया पवार, ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई, पाचवी आवृत्ती १९९३.
२. आठवणीचे पक्षी प्र.आ. प्र. ई. सोनकांबळे, चेतना प्रकाशन, औरंगाबाद, प्र.आण १९७९
३. उपरा — लक्ष्मण माने, ग्रंथाली प्रकाशन, मुंबई, पाचवी आवृत्ती २०००
४. हकिकत प्रा. केशव मेश्राम, पी. पी. एच. बुक स्टॉल, मुंबई, प्र.आ. १९७२.
५. जटायू — प्रा. केशव मेश्राम, पी. पी. एच. बुक स्टॉल मुंबई, प्र. आ. १९७२

६. दलितांची आत्मकथने संकल्पना व स्वरूप डॉ. वासुदेव मुलाटे, स्वरूप प्रकाशन.

७. वेदनांचा प्रदेश प्र.आ.मार्च . प्रल्हाद लुलेकर, कैलास पब्लिकेशन औरंगाबाद प्र.आ. मार्च २०००.

मराठी बालकथा : एक अभ्यास (१९६० ते १९८०)

प्रा.अजित जयराम जाधव

सहाय्यक प्राध्यापक, मराठी आठव्या-सत्रे-पित्रे स्वायत्त महाविद्यालय, देवरुख, जि.रत्नागिरी

ई-मेल dspmaspajit@gmail.com

DOI-10.5281/zenodo.7053496

प्रस्तावना

बालसाहित्य हे मुलांच्या मनोरंजनाचे व ज्ञानसंवर्धनाचे एक महत्त्वाचे साधन आहे. प्राचीन काळापासून पिढ्यानपिढ्या मौखिक परंपरेने चालत आलेल्या आजीच्या गोष्टी, कहाण्या, अंगाई गीते तर लिखित स्वरूपातील 'बालबोध मुक्तावली', 'पंचतंत्र', 'बृहत्कथामंजिरी', 'जातक कथा', 'वेताळ पंचविशी', 'लोककथा' या सर्व परंपरागत चालत आलेल्या प्रकारातून बालसाहित्य समृद्ध झाले आहे. मराठी बालसाहित्याची परंपरा समृद्ध आहे. साने गुरुजी, ना. धो. ताम्हणकर, भा. रा. भागवत, राजा मंगळवेढकर, यदुनाथ थत्ते हे या परंपरेतील मानदंड आहेत. साने गुरुजींनी आपल्या बालसाहित्यातून एकूणच मराठी बालसाहित्याला दिशा व प्रेरणा देण्याचे काम केले आहे. संस्कार केले आहे.

विषयाचे प्रयोजन

मुले ही राष्ट्राची संपत्ती मानली जाते. त्यामुळे त्यांच्या व्यक्तिमत्त्व विकासाची जडणघडण लहान वयातच होणे स्वाभाविक असते. मुलांचा विकास हा मानसिक, शारीरिक आरोग्य व शैक्षणिक प्रगती यामधूनच होत असतो. त्यादृष्टीने मुलांची जडणघडण होणे गरजेचे असते. ही जडणघडण समाज, गाव व देशासाठी महत्त्वपूर्ण असते. आज सभोवार पाहिले तर प्रत्येक क्षेत्रात भ्रष्टाचार, खोटेपणा, लाचारी, क्रूरता, गुंडगिरी दिसून येते. तेव्हा आजची लहान मुले उद्या देशाचे नागरिक झाल्यावर त्यांच्याकडून समाजाला, देशाला उपद्रव किंवा वाईट कृत्य होऊ नये यासाठी मुलांवर चांगले संस्कार करून चारित्र्यवान व्यक्ती होण्यासाठी त्यांच्यामध्ये आत्मविश्वास, स्वाभिमान, राष्ट्रभक्ती, पराक्रम, परोपकार, सत्याची चाड, न्यायबुद्धी, विज्ञाननिष्ठा इत्यादी अनेक गुणांची रुजवणूक होणे आवश्यक आहे. ही जबाबदारी, घर, शिक्षण आणि साहित्य यांना पेलवी लागणार आहे. मुलांच्या हाती चांगली पुस्तके पडली पाहिजेत. यासाठी बालसाहित्यकार, शिक्षक आणि पालकांनी दक्षता घेणे गरजेचे आहे. तरच एकविसाव्या शतकातील पिढी सशक्त आणि सामर्थ्यवान होण्यास मदत होणार आहे. आजच्या काळातील मुलांची मानसिकता काहीशी व्यामिश्र असलेली दिसून येते. स्पर्धात्मक युगात वावरत असताना जीवनमूल्यांची होणारी घसरण, आजूबाजूचे असुरक्षित जीवन यामुळे पालक आणि मुलेही संभ्रमावस्थेत दिसून येतात. आज मुलांचे प्रश्नही गुंतागुंतीचे झाले आहेत. त्यामुळे त्यांच्यामध्ये निराशा दिसून येते असे मत झाल्याने अशा मुलांचा साहित्याद्वारे अभ्यास करण्याच्या हेतूने मी पीएच. डी. प्रबंधासाठी 'मराठी बालकथा : एक अभ्यास' (१९६० ते १९८०) या विषयाची निवड केली आहे.

या अगोदर केलेल्या अभ्यासाचे स्वरूप

पुणे विद्यापीठ येथे डॉ. सुलभा शाह यांनी 'मराठी बालवाङ्मय स्वरूप आणि अपेक्षा'(१९८०) या विषयावर शोध प्रबंध लिहिला आहे. मुंबई विद्यापीठामध्ये शुभा कुलकर्णी यांनी 'आधुनिक मराठी बालगीत, बालकविता' (१९८६) शोध प्रबंध लिहिला. उस्मानिया विद्यापीठ येथे माणिक धनपाल यांनी 'मराठी बालकथेचे मनोवैज्ञानिक विश्लेषण' (१९९०) या विषयावर शोध प्रबंध लिहिला आहे. अमरावती विद्यापीठ मध्ये मंजिरी पत्की यांनी 'मराठी बालकांच्या वाङ्मय निर्मितीचा चिकित्सक अभ्यास' (१९९३) या विषयावर शोध प्रबंध सादर केला आहे. शिवाजी विद्यापीठ कोल्हापूर येथे अविनाश भडकमकर यांनी 'मराठी कथेतील बालमनाचे चित्रण' (१९९४) या विषयावर शोध प्रबंध लिहिला आहे. डॉ. मांडवकर यांनी 'स्वातंत्र्योत्तर काळातील मराठी बालवाङ्मयाचे स्वरूप' (१९९७) या विषयावर शोध प्रबंध सादर केला आहे. उपलब्ध माहितीनुसार १९६० ते १९८० या काळातील बालकथांवर संशोधन झालेले नाही. १९६० नंतरचा कालखंड हा आधुनिक कालखंड समजला जातो. त्या अर्थाने आधुनिक काळात बालकथेची जडणघडण कशी झाली त्या काळाचा बालकथांवर कसा परिणाम झाला आहे या अर्थाने संशोधन करण्याचा मानस आहे.

विषय निवडीमागील भूमिका

१९६० ते १९८० हा कालखंड अनेक अर्थानी महत्त्वपूर्ण असा कालखंड आहे. १९६० साली महाराष्ट्र राज्याची स्थापना झाली. १९६७ मध्ये महाराष्ट्र राज्य पाठ्यपुस्तक निर्मिती व अभ्यासक्रम संशोधन मंडळ स्थापन झाले. जे आज 'बालभारती' या नावाने रूढ आहे. सन १९७२ मध्ये 'किशोर' मासिकाची स्थापना व बालसाहित्याला मिळालेली चालना, १९७५ मध्ये मराठी बालकुमार साहित्य संमेलनाची स्थापना झाल्याने बालसाहित्याची एक व्यापक चळवळच उभी राहिली. त्यामुळे लेखक, प्रकाशक, शिक्षक, बालवाचक, बालसाहित्याची आवड असणारे असे सर्वजण एकाच

छताखाली आले हे बालसाहित्याच्या दृष्टीने महत्त्वपूर्ण ठरले. चळवळीच्या माध्यमातून अनेक उपक्रम राबवण्यात आले त्यामध्ये प्रामुख्याने पुस्तकहंडी, पुस्तक जत्रा हे उपक्रम लक्षवेधक आहेत. १९७९ हे वर्ष आंतरराष्ट्रीय बालक वर्ष म्हणून साजरे करण्यात आले. या पार्श्वभूमीवर 'मराठी बालकथा : एक अभ्यास' (१९६० ते १९८०) हा पीएच. डी. साठी संशोधन विषय निवडला आहे. या काळातील सर्वच घटना मुलांच्या जीवनाशी संबंधित अशा आहेत. या काळात नव्या उमेदीने बालसाहित्याची निर्मिती होत होती. आधुनिक समजल्या जाणाऱ्या या काळात काही नवे प्रश्नही नव्याने निर्माण झाले. बालसाहित्याचा प्रमुख उद्देश हा आनंद देणे हा असला तरी या काळातील काही गोष्टींचे पडसाद त्यामध्ये नागरीकरण, विभक्त कुटुंब व्यवस्था, आर्थिक परिस्थितीमुळे निर्माण होणारे मानवी नातेसंबंध, बदलणारी जीवनमूल्ये, सामाजिक जाणीव, दुष्काळी परिस्थिती, पाणी-वीज टंचाई, पर्यावरण व विज्ञान या विविध गोष्टींचा, लेखनाचा बाल कथांमधून कशाप्रकारे अंतर्भाव झाला आहे ? भाषेची विविधता, लेखक आपल्या साहित्यकृतीतून, बालजीवनाशी कशाप्रकारे एकरूप झाले आहेत याचा संशोधनातून अभ्यास करण्याचा मानस आहे बालकांमध्ये चराचर सृष्टीविषयी कुतूहल, जिज्ञासा जागृत करणे, नाद, रंग, रूप, गंध, स्पर्श आदी इंद्रियसंवेदनांची ओळख घडविणे, जीवनमुल्यांची ओळख घडवित त्यांना चांगला माणूस बनविण्याचा प्रयत्न करणे हा बालकथांचा हेतू दिसून येतो.

हेतू व उद्दिष्ट्ये

बालसाहित्याचा अभ्यास करित असताना त्याची वैशिष्ट्ये, गुणदोष, त्रुटी अशा काही गोष्टींचा अभ्यास करणे क्रमप्राप्त ठरते. या काळातील लेखकांचे योगदान आणि बदलत्या काळानुरूप समाज वास्तवाचे भान बालसाहित्यात आले आहे का? याचा सारासार विचार करून त्यादृष्टीने काय करता येईल ? हे अपेक्षित आहे. मानव आणि मानवेत्तर सृष्टीचा संबंध बालसाहित्यात प्राधान्याने जाणवतो. मात्र तो कसा दर्शविला आहे हे पाहणे गरजेचे ठरणार आहे. प्रस्तुत विषयाचा अभ्यास पुढील उद्दिष्टानुसार केला जाणार आहे. त्यामध्ये -

1. बालसाहित्य : स्वरूप व संकल्पना समजाऊन घेणे.
2. बालकथेच्या परंपरेचा आढावा घेणे.
3. बालकथांचा चिकित्सक अभ्यास करणे.
4. बालकथांच्या आधारे कौटुंबिक, शैक्षणिक व सामाजिक समस्यांसाठी उपाययोजनांचा विचार करणे.
5. बालकथांचे वाङ्मयीन मूल्यमापन करणे.

विषयाची व्याप्ती व मर्यादा

बालसाहित्यातून मुलांना भावनिक व शारीरिकदृष्ट्या समृद्ध करून त्यांच्या व्यक्तिमत्व विकासाला चालना मिळते. यासाठी बालसाहित्यकारांनी विविध प्रकारामध्ये लेखन केले आहे. बालसाहित्यात बालकथेला समृद्ध असा वारसा असला तरी इथे अभ्यासासाठी विशिष्ट असा कालखंड निवडला आहे. त्यामुळे अभ्यास विषयाची व्याप्ती मर्यादित आहे. या बालकथांतून व्यक्त होणारा आशय, विषय सामाजिक व वाङ्मयीन दृष्टीकोन याचा अभ्यास करून निष्कर्षाप्रत पोहोचणे हे या प्रबंधाचे प्रयोजन आहे.

संशोधन पद्धती

प्रस्तुत प्रबंधाच्या अभ्यासासाठी पुढील अभ्यास पद्धतीचा अवलंब केला आहे.

1. समाजशास्त्रीय अभ्यासपद्धती
2. मानसशास्त्रीय अभ्यासपद्धती

विषयाचे तपशीलवार विधान

१९६० ते १९८० या काळात बालकथांत प्रामुख्याने बदलणारी जीवनमूल्ये, सामाजिक जाणीव, पर्यावरण, विज्ञान या गोष्टी प्रामुख्याने दिसून येतात. बालकथालेखक जाणीवपूर्वक कथालेखन करू लागले. तसे बालसाहित्याचे लेखन करणे अवघड काम आहे. बालसाहित्याचे अभ्यासक बालसाहित्याबद्दल म्हणतात -

मालतीबाई दांडेकर यांच्या मते, " बालमनाला स्पर्श करणारी आणि त्यांच्या जीवनावर सुसंस्कार करणारी स्फूर्तीदायक रचना म्हणजे बालवाङ्मय होय."१ याचाच अर्थ उद्बोधन आणि मनोरंजन हा साहित्याचा हेतू असल्याचे दिसून येतो.

राजीव तांबे - " मुलांसाठी सहज सोपं लिहिणं, कुठलाही पूर्वग्रह मनात न ठेवता स्वच्छ सकारात्मक दृष्टिकोनातून लिहिणं आणि हे लेखन मुलांच्या भावविश्वाशी त्यांच्या रोजच्या जगण्याशी नुसतं संबंधित नाही तर त्यात मिसळून जाणारं असणं...हे सर्वार्थाने कठीण काम आहे "२ याचाच अर्थ मुलांच्या नजरेतून एखादी गोष्ट पाहणे यासाठी प्रचंड मेहनत लागते. मुलांसाठी लिहिणे एवढे सोपे नाही. बालसाहित्यात बालकथा लेखन हे नजरेत भरणारे आहे. १९६० ते १९८० या काळात बालकथा लिहिणाऱ्या लेखकांमध्ये प्रामुख्याने भा. रा. भागवत, मालतीबाई दांडेकर, लीलावती भागवत, सुधाकर प्रभू, गो. नि. दांडेकर, शं. रा. देवळे, ना. ग. गोरे, लीलाधर हेगडे, राजा मंगळवेढकर, भालबा केळकर, निरंजन घाटे, लीला दीक्षित, सरिता पदकी या काही प्रमुख बालकथाकारांबरोबरच इतरही काही बालकथाकारांनी बालकथेचा प्रांत समृद्ध केला आहे. या काळातील बालसाहित्यिकांनी मुलांसाठी प्राणिकथा, परीकथा,

लोककथा, साहसकथा, विज्ञानकथा अशा विविध कथाप्रकारांमध्ये लेखन केले आहे.

विषयाचे विश्लेषण -

बालकथा लिहिणे सोपे काम नाही. कथा चित्तवेधक होण्यासाठी काही तंत्राचे भानही लक्षात घ्यावे लागते. त्यामध्ये विषय, घटनेचा क्रम, पात्रयोजना, आशय, भाषा, संवाद, निसर्गवर्णन, कथेचे नाव, कथेचा प्रारंभ, कथेचा शेवट इत्यादी. बालकथा चित्तवेधक होण्यासाठी या घटकांचा उपयोग होतो. कथेच्या प्रकारानुसार कथांचे वेगळेपण सांगता येईल. काही प्रातिनिधिक कथाप्रकार व कथाकारांचा विचार पुढीलप्रमाणे करण्यात आला आहे.

प्राणीकथा - प्राचीन काळापासून मुलांच्या आवडीचा विषय म्हणजे प्राणीकथा होय. इसापनीती या मुलांसाठी लिहिलेल्या पहिल्या प्राणी कथा होय. पंचतंत्र, इसापनीतीतील काही भाग वगळून अनेकांनी मुलांसाठी प्राणीकथा लिहिल्या. प्राणीकथा पुष्कळ प्रमाणात आज मानवकथा होऊन बालवा झुयात अवतरू लागल्या आहेत. लीलाधर हेगडे, सरिता पदकी, लीलावती भागवत, द.के. बर्वे, ना.ग. गोरे, सुमती पायगावकर यांच्या कथा वाचनीय न नाविन्यपूर्ण आहेत. लीलाधर हेगडे यांची 'पाचूचे बेट', सरिता पदकी यांची 'छोटू हत्तीची गोष्ट', लीलावती भागवत यांची 'फंटूश', सुमती पायगावकर यांची 'कोल्हेताईची कुई', ना. ग. गोरे यांची बेडूकवाडी यांसारख्या प्राणीकथांतून मुक्या प्राण्यांचे भावविश्व उलगडून दाखवले आहे. या काळात प्राणीकथांचे लेखन विपुल प्रमाणात झाले आहे.

परीकथा - ८ ते १० वर्षांच्या मुलांना प्राणीकथा खूप आवडतात. परीकथा ही मूळची कल्पना पाश्चात्य. त्यामुळे पाश्चात्य परीकथांचा प्रभाव मराठी बालसाहित्यावर पडला आहे. सुमती पायगावकर, शेवडे गुरुजी, सविता जाजोदिया, मुमताज रहिमतपुरे, शं. रा. देवळे यांनी उत्तम बालकथा लिहिल्या आहेत. मुमताज रहिमतपुरे यांची 'गंधवेडी रातराणी', सविता जाजोदिया यांची 'कुंडलपुरचा जादुगार व जादूची नगरी' यांसारख्या सुंदर परीकथांचे लेखन झाले आहे. विशिष्ट वयात मुलांना परीकथा आवडत असल्या तरी या दोन दशकात परीकथांची संख्या घातलेली दिसते.

लोककथा - लोककथा प्रामुख्याने एका पिढीकडून दुसऱ्या पिढीकडे मौखिक पद्धतीने परंपरेने चालत आलेला कथाप्रकार आहे. बालसाहित्यातही लोककथा फार मोठ्या प्रमाणावर लिहिली गेली आहे. लोककथेची सुरुवात ही 'फार फार वर्षांपूर्वी' किंवा 'कोणा एके काळी' अशी झालेली दिसून येते. कथेच्या अशा या सुरुवातीने कथेची उत्सुकता ताणली जाते. लोककथेतून मनोरंजन होत असले तरी कळतनकळत संस्कारही होत

असतात. लोककथेचे महत्त्व विषद करताना डॉ. सुलभा शाह म्हणतात, " मुलांची शक्ती वाढविण्यासाठी, त्यांना सृष्टीतील व्यवहाराकडे पाहावयास शिकण्यासाठी, त्यांच्या मनात सहभावना व सद्बिचार उत्पन्न करण्यासाठी, त्यांच्या भाषाज्ञानात भर घालण्यासाठी व त्यांची करमणूक करण्यासाठी लोककथांनीच जास्त साहाय्य केले आहे." मुलांच्यासाठी लोककथा किती उपयुक्त आहे. हे वरील विवेचनावरून लक्षात येते. लोककथेचे दालन प्रामुख्याने मालतीबाई दांडेकर, दुर्गा भागवत, सरोजनी बाबर, वामन चोरघडे यांच्यासह अनेक लेखकांनी समृद्ध केले आहे. मालतीबाई दांडेकर यांनी 'माईच्या गोष्टी' या कथासंग्रहात लेखिकेच्या आजीने सांगितलेल्या गोष्टींचे वेगळ्या पद्धतीने भाषेचा साज चढवून सांगितल्या आहेत. 'भूकलाडू तहानलाडू' या सरोजनी बाबर यांच्या कथासंग्रहातील कथा अनेक प्रसंगांनी युक्त अशा आहेत. या कथा वाचत असताना मुलांना त्या स्वतःच्याच वाटाव्या अशा आहेत. वामन चोरघडे यांनी 'कथावली', 'ओंजळ', 'अबोली' यांसारखे लोककथा संग्रह लिहिले असून 'अबोली' या कथासंग्रहात अबोलीचीच कथा असून उत्कंठावर्धक, लालीत्याने युक्त अशी आहे. ही कथा लहानमोठ्यांना सर्वानाच भावणारी आहे.

साहसकथा - साहसकथा मुलांच्या सहज प्रवृत्तीला आवाहन देणाऱ्या असतात. चागल्या साहसकथा ह्या कृतीप्रधान असतात. भा. रा. भागवत यांच्या 'फास्टर फेणे' या साहसकथेचे सहा भाग आहेत. यातील फास्टर फेणे ऊर्फ बन्याचे विविध प्रसंगातील साहस मुलांना फारच भावते. सुधाकर प्रभू यांनी देशातील विविध प्रांतातील साहसी मुलांच्या २६ जानेवारीला राष्ट्रपतींच्या हस्ते सत्कार होतो यांच्या कथा लिहिल्या आहेत. शकुंतला फडणीस यांची 'बिरजू परत येतो', आशा भाजेकर यांची 'बांदुल्याची साहसकथा' यांसारख्या अनेक लेखकांनी साहसकथा लिहिल्या पण त्यांच्यात साचेबंद-पणा येत नाही.

विज्ञानकथा- विज्ञानकथा या मुलांच्या दृष्टीने आजच्या काळाची गरज आहे. जयंत नारळीकर, भालबा केळकर, निरंजन घाटे, प्र. न. जोशी यांसारख्या लेखकांनी बालकथेचा प्रांत समृद्ध केला आहे. भालबा केळकर यांनी 'महान वैज्ञानिक', यदुनाथ थत्ते यांनी 'भारतीय वैज्ञानिक' प्र.न. जोशी यांनी 'विज्ञानकथा'च्या माध्यमातून शास्त्रज्ञांची व त्यांच्या शोधांची माहिती दिली आहे. बालकथेत विज्ञानकथा लेखकांचे प्रमाण वाढत असल्याचे दिसते.

सामाजिक/वास्तवकथा - प्राणीकथा, परीकथा, साहसकथा वाचण्याचे मुलांचे वय संपून किशोर, कुमारावस्थेत जेव्हा प्रवेश करतात तेव्हा त्यांच्या आवडी निवडी बदलतात. कुटुंब, शेजारी, समाज यांच्या विषयी

अधिक आकर्षण वाटते. वास्तवकथा त्यांना आवडतात. या वास्तवकथा म्हणजेच सामाजिक कथा होय. मालतीबाई दांडेकर, श्री. बा. रानडे, राजा मंगळवेढेकर यांनी आपल्या कथांतून वास्तव मुलांसमोर मांडले. विविध विषय झालेल्या बालकथांचा येथे थोडक्यात आढावा घेतला आहे. मुलांना नवनवीन कथावीजे देण्याचे काम कथालेखकांनी जाणीवपूर्वक केले आहे, हे या कथातून जाणवते.

विषयाच्या आधारे काढलेले निष्कर्ष

मराठी बालकथा : एक अभ्यास' (१९६० ते १९८०) या प्रबंधाचा अभ्यास करताना काही निष्कर्ष लक्षात येतात ते पुढीलप्रमाणे-

1. मुलांच्या ज्ञान संवर्धनामध्ये बालसाहित्य हा महत्त्वाचा घटक आहे.
2. १९६० नंतरचा कालखंड हा आधुनिक कालखंड म्हणून मानला जातो. या कालखंडात भौतिक क्रांती झाली याचा परिणाम समाजजीवनावर, शिक्षण पद्धतीवर झाल्याने बालकांच्या मनावरही झालेला दिसून येतो.
3. बालसाहित्याचा अभ्यास करताना बालकथेची परंपरा, संकल्पना, स्वरूप, वाटचाल, आशयाचे विश्लेषण, वाङ्मयीन मूल्यमापन व बदलत्या जाणिवांचा शोध महत्त्वपूर्ण ठरला.
4. बालसाहित्याचा विचार करताना समाजशास्त्रीय व मानसशास्त्रीय समीक्षा उपयोगी ठरली आहे.
5. विविध विद्यापीठात बालसाहित्याचा संशोधनपर अभ्यास झाल्याने पुढील संशोधनासाठी अधिक उपयुक्त ठरणार आहे.

संदर्भ ग्रंथ-

1. ज्ञानदा, संपा.- रचना मालपाणी, प्रकाशक-अखिल भारतीय मराठी बालकुमार साहित्य संस्था, शाखा-संगमनेर, २०१० पृ. ४९
2. मराठी बालवाङ्मय बालसाहित्याची रूपरेखा, सौ. मालती दांडेकर, प्रकाशक- वा. वि.भट, १९६४ पृ. ३२
3. स्वरूप आणि अपेक्षा, डॉ. सुलभा शाह, प्रकाशक-लीलावती प्रकाशन, धुळे २००१ पृ. २९८
4. बालवाङ्मय, देवीदास बागूल, जोशी लोखंडे प्रकाशन, पुणे १९६०
5. आधुनिक मराठी वाङ्मयाचा इतिहास, अ. ना. देशपांडे, भाग २ दुसरी आवृत्ती, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, १९७१
6. बालमानसशास्त्र, बाळ शरयू, व्हीनस प्रकाशन, पुणे, १९६४
7. मराठी बालसाहित्य, लीलावती भागवत, प्रकाशक-नवीन उद्योग, पुणे. १९९५

8. अध्यक्षीय भाषणे (अखिल भारतीय मराठी बालकुमार साहित्य संमेलन), संपा.- मदन हजेरी, स्पर्श प्रकाशन, राजापूर, २०१७

बालकांच्या सुदृढ आरोग्याकरीता लसीकरणाची भूमिका

संगिता गंगाराम मेश्राम
(संशोधन विद्यार्थिनी)

Email-sangitameshram233@gmail.com

DOI-10.5281/zenodo.7053525

सारांश :

सुदृढ मुले देशाचा अभिमान आहेत. देशाची अनमोल संपत्ती आहे आणि यांच्या आरोग्याची काळजी घेणे हे पालक, शिक्षक, समाज आणि शासनाची महत्त्वपूर्ण जबाबदारी आहे. लहान मुलांच्या विकासात बाधा आणणारे आजार घटसर्प, डांग्या खोकला, धनुर्वात, क्षयरोग, गोवर आणि पोलिओ यासारख्या गंभीर आजारांपासून मुलांचे संरक्षण करण्याकरिता प्रत्येक बालकाला लसीकरण करणे अतिशय आवश्यक आहे. तसेच त्यांचा हा जन्मसिध्द अधिकार आहे. तरच देशाला सुदृढ आणि निरोगी नागरिक मिळतील. म्हणून लसीकरण काळाची गरज आहे.

प्रस्तावना :

मुले हे आपल्या देशाचे उज्वल भविष्य आहे. देशाला घडविणारे शिल्पकार, देशाची धुरा सांभाळणारे धुरंदर, देशाचा विकास घडवून आणणारे देशाला प्रगतीपथावर नेणारे उद्याचे सुजाण व कर्तव्यदक्ष नागरीक आहे. याकरिता मुलांचा सर्वांगीण विकास होणे आवश्यक आहे. त्यांचा शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, तसेच मानसिक विकास योग्य वेळेनुसार आणि पोषक वातावरणात व्हायला हवा. मागास वर्गातील मुलांना सहसा कुटुंबात पोषक वातावरण मिळत नाही म्हणून भारत सरकारने २ ऑक्टोबर, १९७५ ला अंगणवाडीची स्थापना केली. अंगणवाडी योजने अंतर्गत मुलांचा विकास योग्य गतीने व दिशेने होण्याकरिता शासनाने काही कल्याणकारी सेवा अंगणवाडी मार्फत राबविण्याचे निर्धारित केले आणि त्या सेवा कार्यान्वित करून देखरेख ठेवण्याचे कार्य अंगणवाडी सेविकांकड सोपविले. शासनाने अंगणवाडीतील लाभार्थी बालकांकरिता विविध सेवा सुरु केल्या. यामध्ये पुरक पोषण आहार, लसीकरण, आरोग्य तपासणी, संदर्भ सेवा, पूर्व शालेय शिक्षण तसेच किशोरी मुली आणि मातांना मार्गदर्शन या सेवा अंगणवाडी मार्फत दिल्या जातात. अंगणवाडीतील या सेवांमध्ये लसीकरण ही सेवा अत्यंत महत्त्वाची आहे. लसीकरणाचे बालकांच्या सुदृढ आयुष्यात महत्त्व आहे.

उद्दिष्टे :

अंगणवाडीतील नोंदणीकृत बालकांच्या कौटुंबिक पार्श्वभूमीचे अध्ययन करणे.
अंगणवाडीतील लसीकरणाचे महत्त्व सर्वसामान्यांपर्यंत पोहचविणे.

लसीकरणाविषयी समाजात जाणिव जागृकता निर्माण करणे.

सुदृढ व निरोगी समाज घडविण्यामध्ये लसीकरणाची भूमिका अभ्यासणे.

गृहितके :

अंगणवाडीतील मुले आर्थिकदृष्ट्या दुर्बल घटकातील असतात.

सर्व सामान्य जनता अंगणवाडीतील लसीकरणाला उत्तम प्रतिसाद देतात.

पालक लसीकरणाविषयी जागरूक दिसतात.

अंगणवाडीतील बालक निरोगी व सुदृढ आहेत.

संपूर्ण जगात ५ वर्षाखालील मुलांचे काही आजार मोठे शत्रु आहेत. याच जीवघेण्या

आजारांनी दरवर्षी लाखो मुले मृत्यूमुखी पडतात किंवा त्यांना शारीरिक, मानसिक अपंगत्व येत.

अंगणवाडीत राबविण्यात येणाऱ्या लसीकरणामध्ये प्रमुख सहा आजारांवर बालकांना

लसी दिल्या जातात. जागतिक पातळीवर या सहा आजारांवर लसीकरण करून मुलांना या

रोगापासून संरक्षण मिळवून देण्याचे जागतिक आरोग्य संघटनेने ठरवले आणि त्यानुसार सर्व

जगभर घटसर्प, डांग्या खोकला, धनुर्वात, क्षयरोग, गोवर आणि पोलिओ या सहा रोगांवर

लक्ष केंद्रित करून सर्व मुलांना या लसी देण्याचा निर्णय घेण्यात आला. बालमृत्यूचे प्रमाण कमी

करण्याच्या दृष्टिने सरकारने लसीकरणाचा कार्यक्रम व्यापक प्रमाणावर सुरु केला आहे.

त्यामध्ये विस्तारीत लस टोचणी कार्यक्रम १९७४ पासून जागतिक आरोग्य संघटनेने सुरु केला

आहे. याद्वारे जगातिल सर्व बालकांना घटसर्प, डांग्या खोकला, धनुर्वात, क्षयरोग, गोवर आणि

पोलिओ यासारख्या गंभीर आजारावर लसी देण्यात येतात.

सुमारे १०० वर्षापूर्वी देवीच्या आजारावर जेन्नर या शास्त्रज्ञाने एक नवीन उपाय शोधून काढला त्याने त्याच आजाराचे जंतू शरीरात सोडल्यामुळे शरीरातील रोगप्रतिकार शक्तीत वाढ झाली आणि यामुळे त्पारोगापासून व्यक्तिके संरक्षण झाले. असाध्य किंवा गंभीर आजाराशी सामना करण्यासाठी त्याविरुद्ध प्रतिकारशक्ती निर्माण करून तयारीत राहण हा प्रभावी प्रतिबंधक उपाय जगाला माहिती करून दिला. या तत्त्वावर आधारीत अनेक आजाराविरुद्ध प्रत्यक्ष आजार होण्यापूर्वी प्रतिकार शक्ती मिळवून देण्यासाठी वेगवेगळ्या प्रकारच्या द्रव्यांची निर्मिती करण्यात आली आणि यालाच 'लसी' म्हणतात. 'विविध आजाराचे जंतू अल्प प्रमाणात शरीरात घालून शरीरात रोगप्रतिकार शक्ती निर्माण करणे म्हणजे लसीकरण होय.' देवीच्या रोगाविरुद्धच्या लसीच यश अगदी निर्विवाद सिद्ध झालय. त्याच धर्तीवर काही रोगांना आटोक्यात आणून समूळ नष्ट करण्याकडे सर्व देशात वाटचाल चालू आहे. म्हणून सर्व मुलांना पहिल्या काही महिन्यातच या सर्व आजारांच्या लसी देवून त्यांच रक्षण करण्यासाठी राष्ट्रीय लसीकरणाची मोहिम सरकारने चालू केली आहे. या लसीकरणाची माहिती खेड्यापाड्यातील, तळागाळातील आर्थिकदृष्ट्या मागासलेल्या सामान्य जनतेपर्यंत पोहचवून मुलांचे आरोग्य सुदृढ करणे आवश्यक आहे. लसीकरणाची माहिती विविध प्रभावशाली माध्यमांच्या साहाय्याने पोहचवायला हवी. यामध्ये वर्तमानपत्रे, भिंतीपत्रके, फलक, रेडिओ, टेलिव्हिजन, मोबाईल, इंटरनेट विविध मासिके, गृहभेटी, पालक सभा, माता बैठक आणि व्याख्यान इत्यादी माध्यमांच्या साहाय्याने सर्वसामान्य जनतेपर्यंत लसीकरणाचे महत्त्व पटवून देण्याकरिता प्रथम त्यांच्यामधील गैरसमज, अंधश्रद्धा, अज्ञान या गोष्टी दूर कराव्या लागतील. तरच लसीकरणाविषयी त्यांच्या मध्ये जाणिव जागृकता घडून येईल आणि हीच काळाची गरज आहे. लसीकरण बालकांचा हक्क आहे आणि तो त्यांना मिळायलाच हवा. घरोघरी जावून तसेच वाड्यावस्त्यांवरच्या मुलांनाही या लसीचा फायदा मिळायला हवा. यामुळे या आजाराचे प्रमाण दिवसेंदिवस कमी होईल. लसीकरणाच्या वेळापत्रकानुसार शेकडा १० ते १५ टक्के मुलांनाच लसीकरण केल्या जाते. एवढे कमी लसीकरण होण्यामागील कारणे म्हणजे बालकांच्या तब्येतीच्या तक्रारी,

आजारपण, आई-वडिलांचे कामाचे स्वरूप, नोकरीत बदल्या, कौटुंबिक अडचणी यामुळे वेळापत्रकानुसार मुलांना लसीकरण केले जात नाही. शक्य तोवर बालकांना लसीकरण वेळापत्रकानुसार द्यावे. ज्यामुळे बालकांच्या विकासात या आजारांचे अडथळे निर्माण होणार नाही. सर्व लसींचा फायदा बालकांना १०० टक्के होईलच असे नाही. काही रोगाविरुद्ध थोड्याफार प्रमाणात याचा उपयोग होतो. उदा. क्षयरोगाच्या लसीमुळे रोग पूर्णपणे टाळता येत नाही परंतु आटोक्यात ठेवता येतो. अनेक शास्त्रज्ञांनी बालकांच्या आजारावर लसी शोधून काढल्या. या लसीमुळे रोगप्रतिकारशक्ती वाढते व तो आजार बालकांना होत नाही.

बालकांना देण्यात येणाऱ्या लसी पुढीलप्रमाणे :
बी.सी.जी.(क्षयरोग) लस :

बी.सी.जी.(क्षयरोग) लस म्हणजे क्षयरोगाचे सौम्य जंतूच त्यांची रोगकारक शक्ती कमी करून इंजेक्शनच्या रुपाने ते शरीरात टोचले जातात. यामुळे शरीरात सावकाशपणे प्रतिकार शक्ती तयार होवून लहान मुलांमध्ये मेंदू व इतर अवयवांमधील होणारा क्षयाचा प्रसार टाळता येतो. ही लस टोचल्यानंतर साधारणतः एक महिन्यापर्यंत इंजेक्शनच्या जागी काहीच दिसत नाही. १ महिन्यानंतर त्या ठिकाणी पुटकुळी येवून व्रण तयार होतो. बी.सी.जी.चा व्रण येण हे लस निट वापरली गेल्याच लक्षण आहे.

त्रिगुणी (ट्रिपल) लस :

त्रिगुणी (ट्रिपल) लस म्हणजेच घटसर्प, डांग्याखोकला, धनुर्वात या रोगांचा यात समावेश आहे. या आजारांविरुद्ध ही लस इंजेक्शनद्वारे दिली जाते. या वयात बाळाची मांडी ही सर्वात चांगली जागा असल्यामुळे हे इंजेक्शन मांडीवर देतात. एक महिन्याच्या अंतराने ही लस परत द्यावी लागते. या लसीला ट्रिपल अँटीजेन किंवा डी.पी.टी. व्हॅक्सीन म्हणतात.

पहिला बुस्टर डोस :

ट्रिपल अँटीजेन चा परिणाम एक वर्षानंतर कमी होतो म्हणून बालक दिड वर्षांचे झाल्यावर तीच लस परत एकदा द्यावी लागते. त्यामुळे बालकाचे शरीर पूर्ववत होवून त्यांची या रोगाविरुद्ध प्रतिकाशक्ती निर्माण होते.

दुसरा बुस्टर डोस :

बालकांस ४ ते ६ वर्षांच्या दरम्यान ट्रिपल अँटीजेन चा परिणाम करणारा डोस द्यावा.

बुस्टर डोसेस :

१० वर्षांनी त्याला धनुर्वात व घटसर्प या दोनच रोगांच्या विरुद्ध काम करणारी लस टोचावी. ट्रिपल अँन्टीजेन दिल्यावर बालकाला ताप येतो. भूक मंदावते, इंजेक्शन दिलेल्या ठिकाणी सूज येते. वेदना होतात, औषध दिल्यास मुलांचा हा त्रास कमी होतो.

पोलिओ व्हॅक्सिन :

जगात पोलिओ निर्मूलनासाठी दोन महत्त्वाच्या लसीकरण पध्दती वापरल्या जातात. पहिली पध्दत जोन्स साल्क यांनी १९५२ साली यशस्वीरीत्या शोधून काढली. या पध्दतीत लस म्हणजे मेलेल्या जीवाणूचा संच वापरला गेला. हे जीवाणू शरीरात स्नायू मार्फत टोचून दिले जातात. यानंतर अल्बर्ट सबीन यांनी मुखामार्गे लसीकरणाची पध्दत शोधून काढली. आज जगातील सगळ्या देशांमध्ये पोलिओ रुग्णांची संख्या कमी झालेली आहे. गेल्या २० वर्षांमध्ये ३ लाख ५० हजार पासून १५०० रुग्णापर्यंत पोलिओ मध्ये घट झालेली आहे.

बालकाला पहिला डोस तिसऱ्या महिन्यात द्यावा. नंतर चौथ्या व पाचव्या महिन्यात सहाव्या व सातव्या महिन्यात अनुक्रमे डोस द्यावे.

देवीची लस :

बालकाच्या पहिल्या सात महिन्यात ही लस टोचून घ्यावी. ही लस टोचण्याच्या ठिकाणी फोड निर्माण होते व ताप येण्याची शक्यता असते.

विषमज्वराची लस :

बालक चार ते पाच वर्षांचे झाल्यावर ही लस टोचून घ्यावी. याची दुसरी मात्रा एक महिन्यांतर द्यावी.

पहिला बुस्टर डोस दहाव्या वर्षी, दुसरा बुस्टर डोस सोळाव्या वर्षी द्यावा.

गोवराची लस :

या लसीत सौम्य केलेले गोवराचे जंतूच असतात. ही लस बालक ९ महिने पूर्ण झाल्यावर देतात. या लसीमुळे 'घोड्या गोवर' म्हणजे सर्वांत वाईट प्रकारचा गोवर होणे टाळता येते.

फेर (बुस्टर) लसीकरण :

प्राथमिक लस टोचणी नंतर शरीराला या रोगप्रतिबंधक शक्तीचे साठे परत-परत निर्माण

करून नेहमीच तयारीत राहण्यासाठी या जंतूची आठवण करून देण्यासाठी बुस्टर डोस द्यावे लागतात. दिड ते २ वर्षांला ट्रिपल पोलिओ, साडेचार ते पाच वर्षांला ट्रिपल पोलिओ, ९ ते १० वर्षांला एक डबल व्हॅक्सीन तसेच दर पाच ते दहा वर्षांनंतर धनुर्वात व घटसर्प (डबल) या रोगांच्या लसी घेणे जरूरी असते.

टायफाईडची लस :

वयाच्या दुसऱ्या वर्षांनंतर इंजेक्शनने ही लस देतात. सहा आठवड्यांच्या अंतराने दुसरा डोस घेतल्यावर शरीरात प्रतिबंधक शक्ती तयार होते. पाच वर्षांखालील मुलांसाठी तोंडाने घ्यावयाची टायफाईडची लसही उपलब्ध आहे.

गोवर, गालगुंड, जर्मन गोवर :

जर्मन गोवर सौम्य असला तरी आईला गरोदरपणी झाल्यास तिच्या होणाऱ्या बाळावर त्याचा परिणाम होत असल्याने ते टाळण्यासाठी ही लस घेणे आवश्यक आहे. गालगुंडातही जोवर ते जंतू लाळेच्या ग्रंथीलाच त्रास देतात तोवर फारस बिघडत नाही, पण हृदय, मेंदू यावरही त्यांचा परिणाम होवू शकतो. असे होवू नये म्हणून ही लस बाळ सव्वा वर्षांचे झाल्यावर द्यावी, नंतर दहाव्या वर्षी पुन्हा एकदा जर्मन गोवराची लस टोचून घ्यावी.

एकात्मिक बालकविकास प्रकल्पांतर्गत एकूण सहा सेवांपैकी लसीकरण ही एक अत्यंत महत्त्वाची सेवा अंगणवाडी सेविकेद्वारे पुरविली जाते. लसीकरण चुकलेल्या बालकांचा मागोवा घेवून त्यांना आरोग्य सेवा पुरविण्यात अंगणवाडी सेविकांचे कार्य मोलाचे आहे. शासनाच्या विविध योजना आणि जनजागृती संदेश तळागाळातील लोकांपर्यंत पोहचविण्यात अंगणवाडी सेविका महत्त्वाची भूमिका बजावतात. मुलांच्या निरोगी आयुष्यासाठी लसीकरण अत्यंत महत्त्वाचे असते. लसीकरणामुळे संभाव्य व्यंग व मृत्यू यांना थेट व परिणामकारक प्रतिबंध करता येवू शकतो. गेल्या पाच दशकात पाच वर्षांखालील मुलांच्या मृत्यूचा दर २३३ वरून ६३ पर्यंत इतका खाली येण्यासाठी लसीकरणाची भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण आहे.

बाळाचे लसीकरण

वय	लसीचे नाव
जन्मतः	बी.सी.जी. ओ.पी.व्ही. कावीळ बी
१.५ महिने (६ आठवडे)	ट्रिपल पहिला डोस

	मेंदूज्वर, कावीळ बी दुसरा डोस इंजेक्टेबल पोलिओ पहिला डोस ओरल पोलिओ पहिला डोस न्युमोनिया
२.५ महिने (१० आठवडे)	ट्रिपल दुसरा डोस मेंदूज्वर दुसरा डोस

निष्कर्ष :

सुदृढ निरोगी आयुष्याकरिता बालकांचे वेळेवर लसीकरण होणे अत्यंत आवश्यक आहे. बालकांमध्ये प्रतिकारशक्ती वाढविण्यासाठी लस शरीरात देणे म्हणजे लसीकरण होय. जीवघेण्या आजारांपासून बालकांचे संरक्षण करणे. हे पालक समाज व शासनाची प्रमुख जबाबदारी आहे. घटसर्प, डांग्या खोकला, धनुर्वात, पोलिओ, क्षयरोग गोवर, टायफाईड यासारख्या आजारांपासून बालकांचे आयुष्य पूर्णपणे सुरक्षित करण्याकरिता लसीकरण अतिशय गरजेची बाब आहे. यामुळेच आपल्या देशाला आरोग्यदायी सुदृढ नागरीक मिळतील.

संदर्भ :

1. नवी बाळगुटी पालकांसाठी —डॉ. ज्योस्ना पडळकर
2. महिला व बालविकास विभाग महाराष्ट्र शासन
3. अंगणवाडी कार्यकर्तींसाठी मार्गदर्शिका महाराष्ट्र राज्य
4. मानवविकास —डॉ. लिना कांडलकर
5. बालविकास — डॉ. नलिनी वन्हाडपांडे
6. मानवी विकास — डॉ. सुजाता सबाने

सतपुड़ा क्षेत्र में कृषि विकास के स्तर का भू-वैज्ञानिक प्रतिरूप : एक भौगोलिक विश्लेषण
 डॉ. अजय तिवारी
 डी.लिट्.

DOI-10.5281/zenodo.7053542

सारांश— प्रायः कृषि विकास से तात्पर्य कृषि उत्पादकता वृद्धि से लिया जाता रहा है। परन्तु यांत्रिक क्रांति के बाद आज उत्पादकता में होने वाली वृद्धि के अपेक्षाकृत कृषि विकास को अधिक विस्तृत अर्थों में प्रयोग करते हैं। कृषि विकास से तात्पर्य निम्न उत्पादकता वाली परम्परागत पद्धति में परिष्कार करके उसे उच्च उत्पादकता युक्त एक वैज्ञानिक एवं आधुनिक स्वरूप प्रदान करना साथ ही उत्पादों का समान सामाजिक वितरण तथा पारिस्थितिकीय संतुलन बनाये रखने के लिए विचार किया जाता है।

कुंजी शब्द— उत्पादकता, पारिस्थितिकीय, वाणिज्यीकरण, नवीन प्रौद्योगिकी

प्रस्तावना— प्रो. मिश्रा के अनुसार “कृषि विकास का तात्पर्य कृषि हेतु नयी दशाओं का परिवर्तित अनुकूलन एवं उसकी अन्तर्निहित सम्भावनाओं का पूर्ण विकास है। कृषि विकास की समस्याएँ मात्र वर्तमान उत्पादन हेतु नयी तकनीक लाने की ही नहीं बल्कि इससे संरचनात्मक आधार में परिवर्तन की भी है।” कृषि विकास के अन्तर्गत मात्रात्मक वृद्धि एवं गुणात्मक परिष्कार दोनों तथ्य अन्तर्निहित होते हैं। कृषि के अन्तर्गत शैतिज एवं उर्ध्वाधर दोनों ही प्रकार का विकास होता है। शैतिज विकास से तात्पर्य कृषिगत भूमि के विस्तार से है जबकि उर्ध्वाधर विकास से तात्पर्य प्रति एकड़ उत्पादन में वृद्धि से **अध्ययन का उद्देश्य —**

सतपुड़ा क्षेत्र में कृषि विकास के स्तर को ज्ञात करना। जोत के आकार का कृषि विकास से संबंध ज्ञात करना ।

शोध परिकल्पना—

कृषि विकास में लघु जोत प्रमुख बाधक है।

कृषि विकास में जिला स्तरीय विविधता पायी जाती है।

भौगोलिक विविधता कृषि विकास में बाधक है।

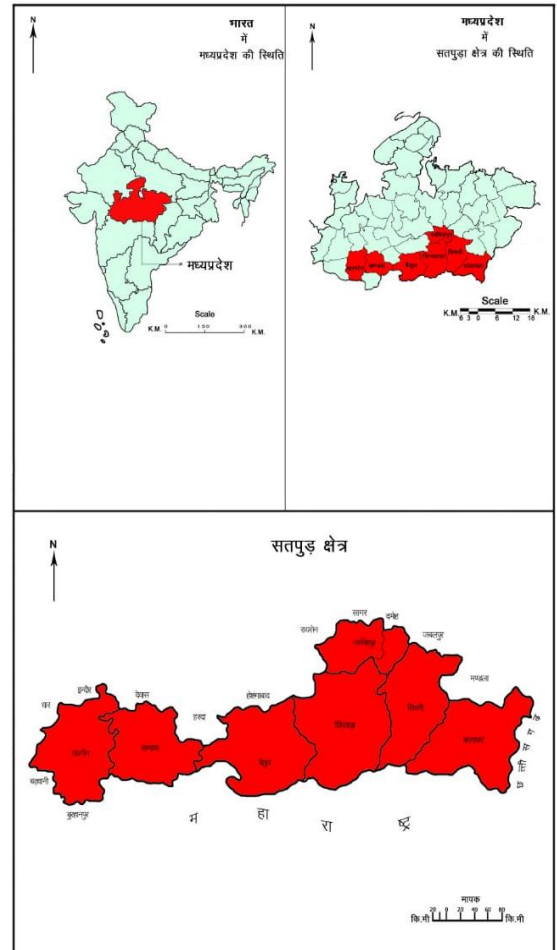
शासकीय मानकुवर बाई कला एवं वाणिज्य (स्वशासी)

महिला महाविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

अध्ययन क्षेत्र—

सतपुड़ा क्षेत्र मध्यप्रदेश में नर्मदा घाटी के दक्षिण में पूर्व से पश्चिम तक फैला है। इसका विस्तार ७४°३०'३" से ८१°०'३" पूर्वी देशान्तर तथा २१°३३' से २३°०'३" उत्तरी आक्षांश के मध्य फैला हुआ है। इस क्षेत्र की पूर्व-पश्चिम की लम्बाई १०७१ किलोमीटर एवं उत्तर दक्षिण की चौड़ाई २०७.९९ किलोमीटर तथा कुल भौगोलिक क्षेत्रफल ६२१६२.२७ वर्ग किलोमीटर है। इसकी समुद्र तल से औसत उचाई ११६४ मीटर है। यह क्षेत्र नर्मदा तथा गोदावरी नदियों के बीच जल विभाजक के रूप में कार्य करता है। सतपुड़ा के उत्तर में मालवा का पठार दक्षिण में महाराष्ट्र राज्य पूर्व में बघेलखण्ड का पठार तथा पश्चिम में राजस्थान राज्य की सीमा से जुड़ा हुआ है। सतपुड़ा क्षेत्र में बालाघाट, सिवनी, नरसिंहपुर, छिदवाड़ा, खण्डवा, बैतूल एवं खरगौन जिले सम्मिलित है। इनमें बालाघाट की ११ तहसील सिवनी की ८ तहसील, नरसिंहपुर की ५ तहसील छिदवाड़ा की १३ तहसील बैतूल की ८ तहसील खण्डवा की ५ तहसील एवं खरगौन की १०

है। शैतिज विकास कृषि विकास का प्रथम चरण है और उर्ध्वाधर विकास अंतिम एवं अनुकूलतम दशा है। कृषि विकास से संबंधित इन्हीं तत्वों को दृष्टिगत करते हुए प्रस्तुत अध्ययन में कृषि विकास के विविध पक्षों से संबंधित सूचको का चयन करके उसके आधार पर अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास-स्तर के मापन एवं समान कृषि विकास स्तर वाले प्रदेशों के निर्धारण का प्रयास किया गया है, जिससे पिछड़े क्षेत्रों की पहचान की जा सके तथा प्रदेश के सम्यक कृषि विकास हेतु सुझाव प्रस्तुत किया जा सके ।



तहसील सम्मिलित है इस प्रकार सतपुड़ा क्षेत्र ६० तहसील एवं ६२ विकास खण्डों में विभाजित है। इस क्षेत्र में ८२ थाने २२ नगर पालिका, २४ नगर पंचायत, ३२११ ग्राम पंचायत तथा ९२२५ बसे हुए गाँव एवं ५२ वनग्राम हैं।
कृषि विकास के सूचक — मानचित्र —१

अध्ययन क्षेत्र में कृषि विकास के सम्यक विश्लेषण को दृष्टिगत करते हुए कृषि विकास स्तर के मापन हेतु कृषि विकास के विविध पक्षों यथा—भूमि उपयोग, व्यापरीकरण, उत्पादकता, सिंचाई स्वरूप, तकनीकी प्रगति रासायनिक उर्वरक आदि से संबंधित बारह सूचकों को लिया गया है।

तालिका—१

सतपुड़ा क्षेत्र: कृषि विकास प्रदेश को निर्धारित करने वाले चर

क्रमांक	चर	ऑकड़ों का स्वरूप	इकाई	औसत
१.	जोतों का औसत आकार	औसत आकार	हेक्टेयर में	१.९०
२.	श्रम—निवेश	प्रति १०० हेक्टेयर में कृषक+कृषि श्रमिक	संख्या	१७.९८
३.	पशु शक्ति निवेश	प्रति १०० हेक्टेयर में जोड़ी	मानक इकाइयों में	१५.२६
४.	यांत्रिक शक्ति निवेश	प्रति १०० हेक्टेयर में	अश्व शक्ति	११०. ७८
५.	उर्वरकों का उपयोग	एन.पी.के. प्रति हेक्टेयर	किग्रा.प्रति हेक्टेयर	४४.१३
६.	निरा सिंचित क्षेत्र	निरा बोये गये क्षेत्र का प्रतिशत	प्रतिशत	४३.५३
७.	उच्च उत्पाद बाजों के क्षेत्र का (एन.एस.ए) से प्रतिशत	कुल बाये गये क्षेत्र	प्रतिशत	४०.७९
८.	निष्कर्षण—समूह की फसलों का प्रतिशत	फसलों का प्रतिशत	प्रतिशत	३५.४०
९.	भू—उत्पादकता	प्रति हेक्टेयर	किग्रा प्रति हेक्टेयर	१४९१. ५७
१०.	श्रम उत्पादकता	प्रति श्रमिक	किग्रा प्रति श्रमिक	१९५३. १७
११.	वाणिज्यीकरण की मात्रा	कुल उत्पादन में वाणिज्यिक उत्पादन का प्रतिशत	प्रतिशत	५६.७८
१२.	वाणिज्यीकरण का स्तर	प्रति हेक्टेयर वाणिज्यिक उत्पादन का प्रतिशत	कुन्टल प्रति हेक्टेयर	७४९. १३

विधि तंत्र एवं कृषि विकास स्तर का निर्धारण—
प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र के ६२ विकासखण्डों में कृषि विकास—स्तर के मापन हेतु उपर्युक्त १२ सूचकों को लेते हुए मानक जेड—स्कोर रूपान्तरण विधि का उपयोग किया गया है। इस विधि से इन चरों के ऑकड़ों को एक तल पर लाया गया है। इसके लिए

६२ विकासखण्डों में प्रत्येक चर के वितरण का माध्य एवं मानक विचलन ज्ञात किया गया एवं मानक विचलन को इकाई पर स्थिर कर एक चर के “जेड” स्कोर को निम्नलिखित सूत्र से ज्ञात किया गया है।

$$\text{स्कोर} = \frac{Xi - X}{SD}$$

गप त्र एक चर

ग त्र चर का औसत

क त्र एक चर का मानक विचलन

तत्पश्चात चर की विभिन्न इकाइयों को ‘जेड स्कोर’ में परिवर्तित किया गया है, तब मध्यमान से नीचे के मान ऋणात्मक तथा ऊपर के मान धनात्मक रूप में प्राप्त होते हैं। फिर प्रत्येक विकासखण्ड के विभिन्न चरों के ‘जेड स्कोर’ का योग करके ‘जेड सूचकांक’ ज्ञात किया गया तदुपरांत ‘जेड स्कोर’ के सूचकांकों में वर्गीकृत करके कृषि विकास प्रदेशों का निर्धारण किया गया है। सूचकांकों का मान धनात्मक अथवा ऋणात्मक हो सकता है। एच. इशिदा के अनुसार जैसे—जैसे मनुष्य के संसाधन उपयोग, तकनीक एवं सामाजिक—सांस्कृतिक संबंधों के दृष्टिकोण में परिवर्तन

होते हैं वैसे—वैसे कृषि विकास के प्रदेशों में भी संशोधन किया जा सकता है। उपरोक्त विधि से अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास से संबंधित महत्वपूर्ण चरों के ‘जेड स्कोर’ सूचकांक प्राप्त किये गये हैं। इन जेड सूचकांकों को वर्गीकृत करके कृषि विकास के प्रदेशों का निर्धारण किया गया कृषि विकास प्रदेश—प्रस्तुत अध्ययन में कृषि विकास स्तर सूचकांकों के अनुसार अध्ययन क्षेत्र के सम्पूर्ण विकासखण्डों को पाँच कृषि विकास प्रदेशों में विभक्त किया गया है—

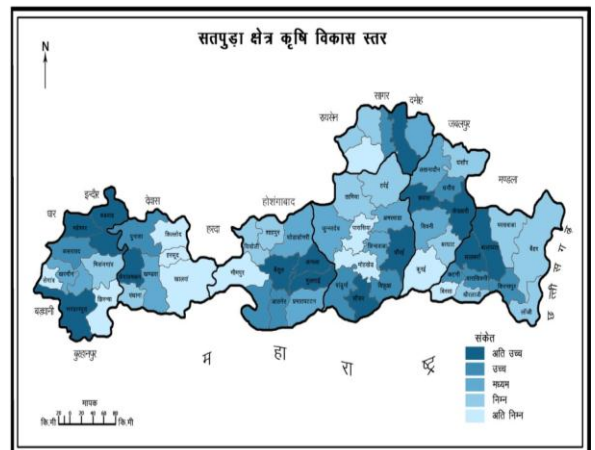
अति उच्च कृषि विकास प्रदेश— इसके अन्तर्गत सतपुड़ा क्षेत्र में बालाघाट जिले के लालबर्बा एवं बालाघाट विकासखण्ड, सिवनी जिले के केवलारी एवं छपारा विकासखण्ड, नरसिंहपुर जिले में नरसिंहपुर विकासखण्ड का जेड सूचकांक सर्वोच्च + ११.५४७ है। जबकि छिंदवाड़ा जिले में चौरई तथा सौसर विकासखण्ड तथा खण्डवा जिले के छेगांव माखन विकासखण्ड का जेड सूचकांक १०.५७९ पाया गया। इसी प्रकार बैतूल जिले में आमला एवं मुलताई विकासखण्ड तथा खरगौन जिले में बड़वाह, भगवानपुरा एवं महेश्वर विकासखण्डों का जेड स्कोर सूचकांक ८.७३६ है। इस श्रेणी के विकासखण्डों में जोत का आकार १.४५ हेक्टेयर से अधिक है। यहाँ श्रम का निवेश ९५ से १२० व्यक्ति प्रति हेक्टेयर एवं पशुशक्ति निवेश २० से ५० जोड़ी प्रति हेक्टेयर है। उल्लेखनीय है कि क्षेत्र विशेष में यांत्रिक शक्ति निवेश सबसे अधिक लालबर्बा बालाघाट, केवलारी, छपारा, नरसिंहपुर विकासखण्डों में १३२.३२ से १३८.७८ हार्स पावर प्रति १०० हेक्टेयर तथा चौरई १२३.५४ सौसर १२०.८२, छेगांव माखन ११६.१८, आमला ११०.९८, मुलताई १०५.३६, बड़वाह ९८.७६, महेश्वर ९८.४८ हार्स पावर प्रति १०० हेक्टेयर में है। रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग सर्वाधिक ८३.६० कि. ग्रा. हेक्टेयर बालाघाट जिले के लालबर्बा विकासखण्ड में दृष्टिगोच्य हुआ जबकि सबसे कम खरगौन जिले के सेगांव तथा झिरन्या विकासखण्डों में ४८.३६ कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। इस श्रेणी के शेष विकासखण्डों में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग ८३.६० से ४८.३६ कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के मध्य हुआ है इन विकासखण्डों की ५० प्रतिशत से अधिक भूमि सिंचित है एवं ७८ प्रतिशत से अधिक उच्च उत्पाद देने वाले बीजों का उपयोग होता है। यहां कुल कृषित भूमि के ५६ प्रतिशत भाग में निष्कर्षण फसलों का उत्पादन किया जाता है। यहां पर भू- उत्पादकता १४५८ से १०६२५

मध्यम कृषि विकास प्रदेश— इस प्रदेश के अन्तर्गत सतपुड़ा क्षेत्र के १४ विकास खण्ड बालाघाट जिले के लांजी, परसवाड़ा तथा बैहर विकासखण्ड, सिवनी जिले के लखनादौन, सिवनी विकासखण्ड, नरसिंहपुर जिले में गोटेगांव विकासखण्ड, छिंदवाड़ा जिले के जुन्नारदेव, अमखाड़ा एवं छिंदवाड़ा विकासखण्ड इसी तरह खण्डवा जिले के खण्डवा विकासखण्ड, बैतूल जिले के प्रभातपटन तथा धोड़ाडोगरी विकासखण्ड तथा खरगौन जिले के खरगौन तथा सेगांव विकासखण्ड सम्मिलित है इनका जेड स्कोर सूचकांक क्रमशः— +१.३८७, +१.२७८, +१.१९५, +१.१३६, -१.११८, -१.१०५, +१.१.०२८, +१.४०८, +१.१३९, +१.५७२, -१.४४८, -१.७३८ -१.०५३ तथा -०.०७८ है। इस प्रदेश के विकास खण्डों में जोत का औसत आकार १.३२ -२१८ के मध्य है। निम्न प्रदेशों के श्रम निवेश ५४-१०२ व्यक्ति प्रति १०० हेक्टेयर जबकि पशु शक्ति

कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। वाणिज्यिकरण की मात्रा इन विकासखण्डों ५५ से ८५ प्रतिशत के मध्य है वाणिज्यिकरण का स्तर २८६८ से २०६६ कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के मध्य है। उपयुक्त कृषि विकास के चरों का मान उच्च होने से यह प्रदेश अति उच्च विकास प्रदेश है।

उच्च कृषि विकास प्रदेश — इस प्रदेश के अन्तर्गत बालाघाट जिले के बारासिवनी, किरनापुर एवं कटंगी विकासखण्ड सिवनी जिले में धनोरा विकासखण्ड, नरसिंहपुर जिले में करेली विकासखण्ड, छिंदवाड़ा जिले में विछुआ एवं पार्डुना विकासखण्ड, खण्डवा जिले में पुनासा विकासखण्ड, बैतूल जिले में आटनेर तथा भैसदैही विकासखण्ड एवं खरगौन जिले में बड़वाह, सनावद तथा महेश्वर विकासखण्ड सम्मिलित है। इनका जेड स्कोर सूचकांक क्रमशः +५.९५८, +३.४३६, +२.१९८, +२.०६२, २.०३८, ४.८५२ तथा ४.२५६ है। इसमें जोत का औसत आकार १.३६ से २.९० हेक्टेयर के मध्य है। श्रम - निवेश ६५ से ९० व्यक्ति प्रति १०० हेक्टेयर जबकि पशुशक्ति निवेश १५ से ३० जोड़ी प्रति १०० हेक्टेयर है। उल्लेखनीय है कि इस श्रेणी के विकासखण्डों में यांत्रिक शक्ति निवेश ४८.६५, १८२.२३ हार्स पावर प्रति १०० हेक्टेयर है इन विकासखण्डों में ३२ से ६८ कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर तक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रदेश की ४६-६२ प्रतिशत तक कृषि भूमि सिंचित है तथा ३२.५० से ५४.३२ प्रतिशत कृषि भूमि में उच्च उत्पाद ;भूद्वय बीजों का प्रयोग किया जाता है इसी तरह भू- उत्पादकता ७५०-१०५४ किग्रा प्रति हेक्टेयर श्रम उत्पादकता १८४५-२३८० किग्रा प्रति श्रमिक तथा वाणिज्यिकरण का स्तर बारासिवनी किरनापुर तथा कटंगी में २०३२, धनोरा १६४५, विछुआ तथा पार्डुना, १४६२ पुनासा १४२८, आटनेर तथा भैसदैही १६६८ तथा कसरावाद १५५६ किग्रा प्रति हेक्टेयर है।

मानचित्र-२



निवेश १०—२५ जोड़ी प्रति

१०० हेक्टेयर तथा यांत्रिक शक्ति निवेश ७०—१५२ हार्स पावर प्रति १०० हेक्टेयर है। इन विकासखण्डों में ३२ से ६८ किग्रा प्रति हेक्टेयर तक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है। उल्लेखनीय है कि इन विकासखण्डों में ४५ से ५५ प्रतिशत भूमि सिंचित है। जबकि भू-उत्पादकता ५७२—७९५ किग्रा. प्रति हेक्टेयर है तथा इनमें वाणिज्यीकरण की मात्रा ४८.३७७— ५०—७२ प्रतिशत के मध्य है। श्रम उत्पादकता १६००—२५०० किग्रा प्रति श्रमिक दृष्टिव्य है। तथा वाणिज्यीकरण का स्तर इन विकासखण्डों में १३३ किग्रा, प्रति हेक्टेयर से १७८६ किग्रा प्रति हेक्टेयर पाया जाता है। उपर्युक्त चर मध्यम स्तर को प्रदर्शित करते हैं।

निम्न कृषि विकास प्रदेश — इसके अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के ११ विकासखण्ड बालाघाट जिले में खैरजाली, सिवनी जिले में घंसौर एवं बरघाट, नरसिंहपुर जिले में साईखेड़ा एवं चावरपाठा, छिंदवाड़ा जिले में तामिया तथा हरई, खण्डवा जिले में पंधाना, बैतूल जिले में शाहपुर एवं चिचोली तथा खरगौन जिले में भीमनगांव विकासखण्ड सम्मिलित है। इन सभी विकासखण्डों का जेड स्कोर सूचकांक —६ से —२ के मध्य है। इस प्रदेश के जोतो का औसत आकार १.४० — २.०८ हेक्टेयर के मध्य है जबकि श्रम निवेश ५१—७२ व्यक्ति प्रति १०० हेक्टेयर के मध्य पाया गया है जबकि श्रम निवेश ५१—७२ व्यक्ति प्रति १०० हेक्टेयर एवं पशु शक्ति निवेश १० से २० जोड़ी प्रति हेक्टेयर है यहां यांत्रिक शक्ति निवेश ६०—१६२ हार्स पावर प्रति १०० हेक्टेयर है । इन विकासखण्डों में ३०—५५ किग्रा प्रति हेक्टेयर तक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग होता है उल्लेखनीय है कि यहां २३ से ४८ प्रतिशत भूमि सिंचित तथा २५ से ४८ प्रतिशत कृषि भूमि में उच्च उत्पाद बीजों (भण्ड) का प्रयोग किया जाता है। यहाँ निष्कर्षण फसलों के अन्तर्गत ३५—५५, प्रतिशत कृषि भूमि है तथा उत्पादकता १५७६—२२८८ किग्रा प्रति श्रमिक है तथा वाणिज्यीकरण का स्तर १०३८—१६३८ किग्रा प्रति हेक्टेयर दृष्टिव्य हुआ है।

अति निम्न कृषि विकास प्रदेश— इस प्रदेश के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के बालाघाट जिले में विरसा विकासखण्ड, सिवनी जिले में कुरई विकासखण्ड, नरसिंहपुर जिले के चिचली विकासखण्ड, छिंदवाड़ा जिले के परासिया विकासखण्ड खण्डवा जिले में हरसूद खालवा एवं किल्लोद विकासखण्ड, बैतूल जिले में भीमपुर विकासखण्ड तथा खरगौन जिले में सेगांव झिरन्या विकासखण्डों में कृषि विकास निम्नतम है। इन विकासखण्डों में जेड स्कोर सूचकांक —८.२८७, —७.५६२, —६.३८५, —६.२७८, —६.२७८, —६.०७८, —५.७६५, —५.

२८५, ८.७०८ तथा ७.९२७ है। यह प्रदेश कृषि विकास की दृष्टि से अत्यधिक पिछड़ा है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सतपुड़ा क्षेत्र के कृषि विकास में काफी प्रादेशिक अन्तर पाया जाता है, जिसका प्रमुख कारण कृषि विकास को निर्धारित करने वाले कारकों का असमान योगदान है। एक स्तर के विकसित क्षेत्र—अलग—अलग टुकड़ों में पाये जाते हैं जो आपस में संलग्न नहीं हैं। विकास में इस अन्तर के कारण विभिन्न भागों की कृषि के पूंजी निवेश की मात्रा के भारी अन्तर का होना है।

कृषि विकास हेतु सुझाव— अध्ययन क्षेत्र के कृषि विकास में उपलब्ध प्रादेशिक असंतुलन को दूर करने हेतु एक ठोस एवं व्यवहारिक कार्ययोजना की आवश्यकता है। इस कार्ययोजना के द्वारा कृषि विकास में प्रादेशिक असंतुलन को दूर करते हुए क्षेत्र के कृषि विकास को समान रूप से उच्च स्तर पर लाना अर्थात क्रय विकसित क्षेत्रों पर अधिक ध्यान देते हुए उसे उच्च विकसित क्षेत्र के स्तर तक विभाजित करना है—

सतपुड़ा क्षेत्र के कृषि विकास हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत है

क्षेत्रीय विश्लेषण से यह अनुभव किया गया है कि अध्ययन क्षेत्र में बीजों के वितरण का कार्य कृषि विभाग, सहकारी समितियाँ, तथा व्यक्तिगत व्यक्तियों द्वारा किया जाता है किन्तु उनका वितरण प्रबंध संतोषजनक नहीं है एतएव उन्नत एवं उन्नत किस्म के बीजों की आपूर्ति की समुचित व्यवस्था आवश्यक है। इसके लिए बीजों का उत्पादन एवं उनके संसाधन व प्रमाणीकरण कार्य क्षेत्र में ही किया जाना चाहिए ।

रासायनिक उर्वरकों के अधिक उपयोग से उत्पादकता में वृद्धि तो होती है, परन्तु उनका लगातार उपयोग भूमि के प्राकृतिक उर्वरता को नष्ट करता है। अतः कृषकों को उर्वरकों के साथ-साथ जैविक खादों का प्रयोग करना चाहिए जिसमें भूमि की प्राकृतिक उर्वरता को बरकरार रखा जा सके ।

सिंचाई के लिए नहरी कमांड क्षेत्र में जल वितरिकाओं का विस्तार कर अधिक से अधिक सिंचित भूमि की व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए। जिसमें जल का अनावश्यक दुरुपयोग रूकेगा तथा शस्यों में जल की समस्या कम होगी। क्षेत्र विशेष में भण्डारण की उचित व्यवस्था न होने के कारण अधिकांश कृषकों को अपने उत्पादन को तुरन्त विक्रय करना पड़ता है। जिससे उन्हें उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। इसलिए कृषकों को उचित मूल्य दिलाने के लिए तथा उत्पादनोत्तर होने वाली अनावश्यक क्षति से रोकने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में भण्डार गृह की व्यवस्था होनी चाहिए।

अध्ययन क्षेत्र में समय-समय पर कृषि प्रसार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों को आयोजित करना चाहिए।

इससे कृषकों को कृषि वैज्ञानिकों के अनुभव एवं अनुसंधानों को कृषकों तक पहुंचाया जा सके।

शस्य उत्पादन में दैवीय आपदाओं जैसे— अति वृष्टि तथा विभिन्न प्रकार के रोगों व बीमारियों द्वारा होने वाले शस्य उत्पादन क्षतिपूर्ति हेतु फसल बीमा योजना का व्यापक रूप से प्रचार—प्रसार किया जाना चाहिए।

अध्ययन क्षेत्र में परती भूमि पर कृषि करके कृषि भूमि का विस्तार करना चाहिए तथा भू—अभिलेखों का अध्ययन किया जाना चाहिए, जिससे काश्तकार अभिरूचि लेकर उत्पादन वृद्धि के लिए निवेशों एवं अवस्थापनाओं का प्रयोग कर सके।

निष्कर्ष—

उपरोक्त अध्ययन एवं विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सतपुड़ा क्षेत्र में कृषि विकास हेतु विकासखण्ड वार कार्ययोजना तैयार की जानी चाहिए तथा प्रतिवर्ष कृषि विकास के लक्ष्य एवं पूर्ति की समीक्षा की जानी चाहिए क्योंकि विभिन्न विकासखण्डों में कृषि विकास का स्तर अलग—अलग है। क्षेत्र विशेष में कृषि विकास हेतु निर्मित यह योजना आलोच्य प्रदेश में कृषि में परिवर्तित स्वरूप की ओर प्रस्तुत होगी जो सामाजिक—आर्थिक स्तर को उठाने में सहायक होगी।

संदर्भ —

1. Mishra R.P. (1968): Thoward Composite Approach of Agricultural Development Indian Geographical Journal. Vol. XLIII, Nos 1 to 4, Jan-Dec P7.
2. David. M. Smith (1975) Patters in Human Geography. Penguin Books Ltd. England. P.P. 154-157.
3. Ishida, H.: Peasant Agriculture in India, University of Hirosima. P.P.K.
4. Mamoria. C.B.: Agricultural Problems in India. Kitabmahal. Allahabad 3rd Ed. 1960.
5. Singh Serendre, Agricultural Development in India: A Regional Analysis Kaushal publications. Shillong. 1994.
6. Jonasson C.F. Agricultural Regions of Europe. Economics Geography Vol. I. 1925, P.P. 277-314 and Vol. 2. 1926, PP. 19-48.
7. Taylor. G.: Agricultural Regions of Australia Economic Geography Vol. 6 1930. PP 109-134 and 213-242.
8. Whittlesey. D. Major Agricultural Regions of the Earth, Annals Ass. of American Geographers Vol. 26 1936.
9. Baker. OE. Agricultural Regions of North America: The Basis of Classification Economic Geographer Vol 2, 1926 PP. 459-93. Vol. 3 1927 Mo 50-86, 30939 & 465.

मध्ययुगिन भारताच्या इतिहासातील अहिल्यादेवी होळकर यांचे कर्तृत्व आणि कार्य

प्रा. विजय वाकोडे

इतिहास विभाग प्रमुख श्री ज्ञानेश महाविद्यालय, नवरगाव ता. सिंदेवाही जि. चंद्रपूर

DOI- 10.5281/zenodo.7053564

सारांश: कर्तृत्वाचा, चारित्र्याचा आणि नेतृत्वाचा आदर्श श्रेष्ठ महिलेकडून घ्यावा ती श्रेष्ठ म्हणजे अहिल्यादेवी होळकर होय. आसेतु हिमालयापर्यंत त्यांचे नाव माहित आहे. ज्या मनगटात बळ बुद्धी आणि चातुर्य आहे. स्वकर्तृत्वावर लोकाभिमुख राजा बनू शकतो असा संदेश देणाऱ्या व त्यांच्या कृतिशील कार्याचा उल्लेख भारताच्या इतिहासात सोनेरी अक्षरांनी केला जातो अशा लोकमाता अहिल्यादेवी होळकर. सर्व धर्म समभाव, सामाजिक एकात्मता, स्त्री पुरुष समानता, गोरगरिबां विषयी कळवळा, हुंडा पद्धतीचे उच्चाटन, अनिष्ट चालीरीती, रूढी परंपरा यांचा वारसा हक्क अशा कितीतरी समाजसुधारकांचे कार्य करणाऱ्या कर्तृत्ववान लोकमाता अहिल्यादेवी होळकर यांचा जन्म 31 मे 1725 रोजी अहमदनगर जिल्ह्यातील जामखेड तालुक्यातील चौडी या छोट्याशा खेड्यात धनगर समाजातील माणकोजी व सुशिलाबाई शिंदे यांच्या पोटी झाला. "1

प्रस्तावना

अठराव्या शतकामध्ये आजच्यासारखे शिक्षणाची साधने उपलब्ध नसताना देखील त्यांच्या वडिलांनी शिक्षणाची घरीच व्यवस्था करून दिली. अहिल्यादेवीचे जीवन घडविण्यात त्यांचा फार मोलाचा वाटा आहे. अहिल्यादेवीना मोडी भाषा लिहिता वाचता येत होते. अहिल्यादेवी मुळातच बुद्धिमान होती. घर हीच तिची शाळा आणि आई-वडील हेच तिचे आदर्श शिक्षक झाले. आई-वडिलांचे चांगले संस्कार तिला मिळाले. "सतराव्या शतकातील समाजामध्ये बालविवाहाची प्रथा रूढ होती बाजीराव पेशवे आणि मल्हारराव होळकर पुण्याकडे परत जात असताना चौडी गावी आले होते. त्यांच्या घरचे वातावरण धार्मिक असल्यामुळे देवालयात दर्शनासाठी आई सोबत गेल्या होत्या. नदीच्या वाळूत खेळताना अहिल्येने वाळूचे शिवलिंग बनविले तेवढ्यात सैन्यदलातील एकाचा घोडा उधळला आपल्या दिशेने येत असल्याचे पाहून आपल्या बरोबरच्या मैत्रिणी भिऊन पळून गेल्या मात्र अहिल्या डगमगली नाही. तीने आपण तयार केलेल्या शिवलिंगाचे रक्षण केले. तेवढ्यात श्रीमंतांनी कठोर आवाजातच म्हटले की, पोरी तुला घोड्याने तुडवले

असते तर? त्यावर अहिल्यादेवीने उत्तर दिले कि हे शिवलिंग बिघडलेले आहे आपण जे घडविले आहे त्याचे प्राणपणाने रक्षण करावे असे थोरली माणसे सांगतात मी तेच केले आहे. "2 तिचे बाणेदार उत्तर ऐकून श्रीमंत तर खुश झाले परंतु त्यांच्या बरोबर असलेले सरदार मल्हारराव होळकर यांनी छोट्या अहिल्येला आपली सून करून घेण्याचे ठरविले.

२० मे १७३६ रोजी अहिल्यादेवीचे खंडेराव सोबत पुणे येथे शनिवार वाड्याच्या साक्षीने समोरच्या प्रांगणात थाटामाटात आणि पेशवे दिमाखात लग्न झाले. योगायोगाने मराठवाड्यातील एक अनमोल रत्न एकाएकी मध्य भारताच्या कोंदणात येऊन बसले. काही दिवसानंतर त्यांना संसारसुख प्राप्त झाले नाही. त्यांच्या पती निधनानंतर त्यांच्या सासऱ्यांनी त्यांच्यावर सती न जाता त्यांच्यातील चांगल्या गुणाची दखल घेतली आणि राज्यकारभाराची धुरा सोपवली. स्वतः दुःख बाजूला सारून त्यांनी जनतेची सेवा केली. राज्यात न्याय देण्याची व्यवस्था केली. सशस्त्र पोलिस व्यवस्था प्रशिक्षित लष्कर, स्त्री सैन्यदल उभारले, विधवा स्त्रियांसाठी मल्हार आश्रम सुरु केले स्त्रीभूण हत्या करणाऱ्यांना कठोर शिक्षा करीत प्रजेचे सुख-दुःख जाणून घेण्यासाठी प्रजेला

त्यावेळी न्याय देत होत्या. राजदरबार भरून न्यायनिवाडाचे काम करीत होत्या. 67 मध्ये त्यांनी न्यायालयाची स्थापना केली अशी एकमेव चोखंदळ आणि निष्णांत पारंगत बुध्दीकौशल्य अहिल्यादेवीजवळ होते. अहिल्यादेवीचे कृषीविषयक धोरण- भारत हा कृषिप्रधान देश व शेती ही भारताची संस्कृती आहे अहिल्यादेवीनाही ज्ञात होते. इथली 70 टक्के जनता शेतीशी जुळलेली आहे त्यामुळे त्यांनी शेतकऱ्यांच्या कल्याणासाठी विशेष काळजी घेतली. शेतीचे प्रमाण वाढावे याकरिता विशेष लक्ष दिले प्रत्येक ठिकाणी चांगल्या अधिकाऱ्यांची नेमणूक केली. पाऊस कमी झाल्यामुळे दुष्काळ पडतो त्यामुळे त्यांचे पीक होत नाही शेतकऱ्यांना सारा माफीची व्यवस्था करून दिली. शेतातील पिकाचे नुकसान झाल्यास ताबडतोब भरपाई दिली जात होती, शेतीसाठी नदी नाल्यावर बंधारे बांधले. "प्रत्येक पेतकऱ्याने 20 झाडे लावलीच पाहिजे. त्यामध्ये 11 सरकारची तर 9 झाडे श्वेतकऱ्यांची त्यांनी 9 झाडांची फळे स्वतःच्या प्रपंचाकरिता ठेवून 11 झाडांची फळे गावच्या प्वासनकर्त्याकडे द्यावीत. त्या फळांचा लाभ गावकऱ्यांना विनामूल्य घेता येत असे. अहिल्यादेवींनी राबविलेला 'नवू ग्यारा कानून पर्यावरण संगोपनाचा 1. संवर्धनाचा असा आदर्ष उपक्रम होता."3

अहिल्यादेवीचे स्त्री विषयक कार्य अहिल्यादेवींनी समाजापुढे नवा आदर्ष निर्माण केला. परमेश्वराने या स्त्री पुढे सतत संकटाचे ताटच वाढवून ठेवले होते. मुलगा, सासरा, जावई, मुलगी, नातू असे दुःखाचे डोंगर कोसळत होते तरीही कुठल्या संकटांना न डगमगता परमेश्वरावर अखंड विश्वास ठेवून या थोर स्त्रीने मराठा इतिहासाची पाने उज्वल केली.

अहिल्यादेवींना सती जाणे ही प्रथा मान्य नव्हती. संसार पती सुख काय असते हे माहीत नसताना सुद्धा स्त्रियांनीच सती का जायचे? सती देव्हारे पुरुष का माजवतात? कोण म्हणतो हा धर्म आहे? ही एक

अंधार उडी आहे बाई जर मेली तर पुरुष सती जातो का? तो पंधराव्या दिवशी बोहल्यावर चढतो इतके जळजळीत वास्तव त्यांनी त्यावेळी समाजापुढे मांडले. सतीची चाल त्या बंद करू शकल्या नाही पण सती प्रथेच्या विरोधात जनमत तयार केले. त्यावेळी समाजापुढे झणझणीत डोळ्यात अंजन घालून एक आदर्ष ठेवला. नव्हे ती स्त्रीच्या कौतुकाचे पुरुष नुसते ढोंग करतात तिला देवी म्हणावे. लक्ष्मी म्हणावे, देवता, आदिशक्ती म्हणावे आणि तिच्या गृहप्रवेशाचे पैसे घ्यावे, सोने, वस्तू घ्यावे, मान पान घ्यावा, पैसा ओरबडावा हे कसले खेळ म्हणून त्यांनी राज्यात अठराव्या शतकात म्हणजेच अडीचशे वर्षांपूर्वी हुंडाबंदी कायदा केला. हुंडा देणारा घेणारा आणि मध्यस्थी यांना शिक्षा ठोकवण्याचा कायदा केला. त्यांचे विचार खरोखरच आजच्या पिढीनेही अमलात आणावे इतके मौलिक आहे. नाहीतर सुविक्षीत असूनही किती तोळ्याचे सोने. लग्न समारंभात अवाढव्य खर्च, मान-पान, हे सर्व मुलीकडून अजूनही हे प्रकार होतात. आजही हुंड्यासाठी मुलीला त्रास दिला जातो.

कन्यादान पद्धती आजही समाजात रूढ आहे पण अहिल्यादेवींनी स्वतःची मुलगी मुक्ता हिचे कन्यादान स्वतः स्त्री म्हणून केले. स्त्री पुरुष समानतेची बीजे त्याकाळी रोवली. या लग्नाला तुकोजी होळकर सपत्नीक आलेले होते तरीसुद्धा एक विधवा स्त्री कन्यादान करू शकते हे धैर्य आणि धाडस अहिल्यादेवी ने करून दाखविले. आजही लग्नमध्ये कन्यादान केले जाते. ब्राम्हणाकडून पुजा केली जाते. साध्य काय तर कन्यादान केले की लग्नविधी पूर्ण होतो. ? दोघांचे विचार जुळणे महत्वाचे हे बहुतांशी लोक विसरून जातात. एकीकडे सुशिक्षित म्हणणारे पण विचाराने अजूनही परिपक्व झाले नाही त्यांना खरोखरच अहिल्यादेवीच्या विचारांची गरज आहे. आजही समाजात वाईट रूढी परंपरा आहे. विधवा स्त्रीने सुवासिनीला कुंकू लावू नये. स्त्रिया देवीची पूजा

करतात पण हा विचार करत नाही की ती कधी विधवा झाली नसेल का? स्त्रीसुध्दा एक आदिषक्तीच आहे. हे समजण्याची गरज आहे. जसे काही नवरा मरणे तिच्या हातात आहे? किंवा कोणतेही धार्मिक कार्यामध्ये तिने पुढेपुढे करू नये. दुसरीकडे स्त्रिया प्रत्येक क्षेत्रात पुरुषांच्या बरोबरीने नव्हे तर त्याहीपुढे गेलेल्या आहे. घर आणि ऑफीस, प्रत्येक क्षेत्र तेवढ्याच प्रामाणिकपणे कार्य करतात.

पितृपक्ष पंधरवाड्यामध्ये पूर्वजांची श्राध्दे करण्याची पध्दती आहे. श्राध्दाचे पाणी पुरुष सोडत असतो. स्त्री नाही पण अडीच वर्षापूर्वी अहिल्यादेवीने श्राध्दाचे पाणी सोडले त्यांच्या मते मला स्त्री ईश्वरानेच केले. मला विधवाही त्यानेच केले आहे मी जषी आहे तषीच सर्व करते. इतके स्पष्ट मत त्यांनी मांडून वाईट रूढीविरुद्ध लढा दिला.

"त्यावेळी राजवाड्यामध्ये बायकांना पडदा पद्धती रूढ होती परंतु अहिल्यादेवी ने पडदा पद्धती पाळली नाही व ती पाळलीच पाहिजे असे कोणावरही बंधन घातले नाही आपल्या सर्व व्यवहारात पडदा पद्धतीचा शिरकाव होऊ दिला नाही. मुलींची पाठशाळा आणि स्त्रियांना शस्त्रशिक्षण हे काम अहिल्यादेवीने दोनशे वर्षापूर्वी सुरु केले. युद्धासाठी स्त्रियांची स्वतंत्र फलटण तयार केली. स्त्रियांना घोड्यावर बसायला शिकवून हातात तलवार, भाला देऊन स्त्रीला संधी दिली तर स्त्री काही करू शकते हे दाखवून दिले."4

अहिल्यादेवी ने प्रजेला सुखी करण्यासाठी अनेक जाचक कायदे अटी रद्द केल्या कराची संख्या व प्रमाण खूपच कमी केले. विधवावर अन्याय करणारे नियम रद्द करून विधवांना मुले दत्तक घेणे, विधवांना संपत्तीचे अभय देणे याबाबतीत अहिल्यादेवी मेणाहून मऊ वाटतात. प्रजेपैी अन्यायाने वागणाऱ्या अधिकाऱ्यांना परखड शब्दात सुनावणी करतात. सत्यासाठी प्रत्यक्ष पतीलाही दंड ठोकणारी कठोर शिस्तीत राज्यकारभार करणारी अहिल्यादेवी सामर्थ्याची मूर्तीमंत पुतळा होत्या. त्यांचे निर्णय

म्हणजे खडकास भेदण्यासारखे होते. दुसऱ्याला कठोर शिक्षा आणि घरच्यांनी गुन्हे केले तर त्यांना पोटाशी बाळगणे हा गुण त्यांच्यात नव्हता. गुन्हा हा गुन्हाच आहे. त्यासाठी नियम सर्वांनाच सारखा असावा हे त्यांनी प्रत्यक्षात आपल्या घरातही उतरवले अशा स्पष्ट आणि कृतीवादी अहिल्यादेवींचे विचार होते. नवऱ्याला पती परमेश्वर मानणे हे तत्त्व त्यांनी त्यावेळी झुगारले व न्यायाची कास धरली. त्यावेळी त्यांनी स्त्री पुरुष समानतेला प्राधान्य दिले. दोघांनी एकाच पातळीवर पाहण्याचा दृष्टिकोन त्यांचा उत्तुंग होता. एक अत्यंत ऐश्वर्य संपन्न राज्याची संपूर्ण स्वामिनी असूनही आपली सर्व संपत्ती प्राणिमात्राच्या कल्याणासाठी वेचली. एक स्त्री असूनही नटून थटून राहणे त्यांना जमले नाही ऐन तारुण्यात वैधव्य आले तरी त्यांनी पातिव्रत्यांचे पूर्णपणे पालन केले एखाद्या तपस्वीनीप्रमाणे जीवन जगल्या. त्यांच्यामध्ये अतुलनीय चातुर्य असूनही मनात कुठलाही अहंकार येऊ दिला नाही. सतत विवेक बुद्धीने निष्कपट, विनयशील असे जीवन जगल्या शिल्पशास्त्र, कला, साहित्य, संस्कृती यांना वाव दिला. कलागुणांना प्रगतीच्या शिखरावर नेले त्यामुळेच त्यांना भारताच्या सुवर्ण युगाची निर्मिती म्हटले गेले.

गौतमबुध्दाप्रमाणे करुणेचा महासागर असा त्यांचा स्वभाव होता. त्यांच्या स्वभावामुळे लोकांचे मतपरिवर्तन झाले. लुटालूट, चोरी, दरोडे, खून, मारामान्या करणाऱ्या लोकांनी वाईट मार्ग सोडून चांगले नागरिक बनले. त्यांच्या कार्याचा परिणाम सर्वांवरच चांगला झाला पैशाचा विनीयोग गरिबांसाठी करण्याकरता अनेक दातृत्वाचे हात पुढे सरसावले.

"अहिल्यादेवींचे कार्य केवळ एका जातीपुरते, वर्गापुरते किंवा धर्मापुरते मर्यादित नव्हते. अखिल मानव जातीच्या कल्याणासाठी होते त्यांच्याविषयी चिं.वि. वैद्य म्हणतात - "ही लोकोत्तर स्त्री आपल्या अनेक सद्गुणामुळे फक्त महाराष्ट्रातच नव्हे तर संपूर्ण मानव जातीचे भूषण ठरली. कृष्णशास्त्री चिपळूणकर

त्यांच्याविषयी म्हणतात - "अहिल्याबाई मनुष्यरूप धारण करून अवतार घेतलेली कोणी देवीच होती. मुख्यतः मराठ्यांच्या इतिहासात ज्या प्रख्यात स्त्रिया होऊन गेल्या त्यात अहिल्याबाईचा क्रम फार वर लागेल याविषयी शंकाच नाही." 5 अहिल्यादेवीचे कार्य हिंदुस्थान कधीही विसरू शकत नाही. पुण्याचे पुण्यद्वार महेश्वर होते. सर्व देशी व विदेशी सत्ता जिच्याकडे नतमस्तक होत. माईचे कार्य तळपणाऱ्या लखलखणाऱ्या सूर्यालाही लाजविणारे होते. अहिल्यादेवीचे स्थान मराठ्यांच्याच नव्हे तर जगाच्या इतिहासातही अलौकिक आहे. आनंदीबाई त्यांच्या व्यक्तित्तेखे पुढे नतमस्तक झाल्या.

अहिल्यादेवींनी आपल्या राज्यात व राज्याबाहेरही पर्यावरण व जलसंधारण यासाठी सुधारणा घडवून आणल्या. वनीकरण व जलस्त्रोत यावर त्यांनी त्याकाळी प्रशासकीय उपाय केले वन्य पशु पक्षांची व्यवस्था दिलदारपणे केली. उन्हाळ्यात रस्त्यामध्ये पाणपोळ्यांची व्यवस्था त्यांनी केली. मंदिराच्या जीर्णोद्धार, घाट बांधले रस्त्यांची कामे सर्व त्यांनी आपल्या स्त्री धनातून केली. सरकारी तिजोरीतील एक कवडी देखील त्यांनी खाजगी कामासाठी खर्च केली नाही. अहिल्याबाई एक उत्तम प्रशासक होत्या त्यांनी पुणे ते महेश्वर अशी टपाल सेवा ही सुरू केली होती. कट्टर कर्मयोग याप्रमाणे त्या आपले जीवन जगल्या भल्याभल्यांना लाभली नाही अशी दूरदृष्टी त्यांना लाभली अशा या गंगाजल निर्मल राणीला लोक मातोश्री म्हणून संबोधत असत.

मराठी साम्राज्याच्या इतिहासामध्ये ज्या थोर व्यक्ती होऊन गेल्या त्यामध्ये अनेक स्त्री-पुरुषांचा समावेश होता महाराष्ट्र ही संतांची भूमी मानली जाते याच महाराष्ट्राने या देशाला नव्हे तर संपूर्ण जगालाच काही मानव रूपी रत्न बहाल केली आहेत अशा रत्नामध्ये एक रत्न म्हणजे अहिल्यादेवी होळकर होय. अहिल्यादेवी म्हणजे मानवी जीवनातील दुःख, शोक, हाल अपेष्टा यांचे उदाहरण होय. ज्या काळात

राष्ट्रीयतेला पोषक वातावरण नव्हते त्यावेळी अहिल्यादेवींनी आपल्या सामाजिक कार्याने राष्ट्रीय एकात्मतेची लोकांना जाणीव करून दिली. अहिल्यादेवी ह्या आधुनिक महिलांसमोर एक प्रेरणास्त्रोत म्हणून आहे. पतीच्या मृत्यूनंतर एकाकी पडलेल्या अहिल्यादेवी जनतेच्या सुखासाठी सर्व दुःख विसरून अहोरात्र झटत राहिल्या. मल्हाररावाचा मृत्यू झाला तरी त्या न डगमगता बिकट परिस्थितीत या देवीने तन मन धनासहित जनसामान्यांच्या सुखासाठी आयुष्य खर्च केले. जनतेच्या उन्नतीसाठी आपले संपूर्ण आयुष्य वेचले. संपूर्ण मराठा कालखंडात राजमाता जिजाबाई येसूबाई, ताराबाई, राधाबाई, गोपिकाबाई आनंदीबाई, उमाबाई दाभाडे, अनुबाई घोरपडे, गौतमाबाई होळकर अशा कर्तबगार स्त्रियांच्या मालिकेत पुण्यश्लोक अहिल्यादेवीच्या कार्य कर्तृत्वाचा मानदंड उज्ज्वल ठरतो. तो त्यांच्या धर्म कार्यामुळे आणि लोककल्याणकारी दातृत्वा

6/8 अहिल्यादेवीचे स्मारक त्यांनी बांधलेल्या अनेक विहिरी, धर्म घाट व देवळे यांच्या स्वरूपात झालेली दिसते. सौराष्ट्रात सोमनाथाचे गयेला विष्णूचे आणि काशीला विश्वेश्वराचे अशी नामांकित देवालय त्यांच्या धार्मिक वृत्तीची व दातृत्वाची साक्ष देतात. भारतातील अभ्यासक तत्त्ववत्ते, चरित्रलेखक, इतिहासकार, राजकीय विश्लेषक, भाष्यकार ज्ञानवंत, विचारवंत यासोबतच पाश्चिमात्य राष्ट्रातील विचारवंतांनी अहिल्यादेवी या भारतीय इतिहासात मिळालेली देणगी आहे असे मत मांडले. प्रजाहित कार्य जगातील नामवंत अशा पौर्वात्य व पाश्चिमात्य अभ्यासकांनी वाखाणले अठराव्या शतकात युरोप रशियामधील राजकीय, आर्थिक, औद्योगिक क्रांतीचा आधारही अहिल्यादेवीच्या राज्यपद्धतीत सापडतो अठराव्या एकोणिसाव्या शतकातील युरोपमधले प्रगत समजले जाणारे राज्य ब्रेड बटरसाठी एकमेकांचा जीव घेत असताना भारतातील होळकर राज्यात गोर-गरिबांसाठी, अनाथांसाठी

मोफत अन्नछत्रे रात्रंदिवस सुरु होते. मागेल त्याला काम होते आज भारताची दैन्यावस्था झालेली दिसते. रोजगारांची समस्या भेडसावत आहे, कितीतरी तरुणांना रोजगाराच्या संधी मिळत नाही, भ्रष्टाचार फोफावत आहे असे ज्वलंत प्रश्न आज युवा पिढीकडे आव्हान बनवून उभे आहे.

निष्कर्ष -

थोडक्यात अहिल्यादेवीचे जीवन हे समाजाला आनंददायी, सुखद, प्रजा वत्सल असले तरी प्रचंड दुःखद घटनांनी भरलेले आहे. एक आगळावेगळा ठसा त्यांच्या चरित्रातून दिसून येतो. जेवढ्या हळव्या तेवढ्या त्या कठोरही होत्या. अहिल्यादेवीचे व्यक्तिमत्व हे सूर्यासारखे तडफदार होते. जिकडे तिकडे अहिल्यादेवी चा जयजयकार होत होता परंतु अहिल्यादेवी एकटेपणामुळे आतून पोखरल्या होत्या. त्यांचे हे दुःख हलके करण्यासाठी राज्यातील प्रजेने त्यांना लोकमाता 'मानले आणि पाहता पाहता अहिल्यादेवी प्रत्यक्षात 'लोकमाताच झाल्या. अशा या लोकमाता अहिल्यादेवी यांनी दिनांक 13 ऑगस्ट 1795 रोजी महेश्वर मुक्कामीच आपल्या लेकरांचा अखेरचा निरोप घेतला. नव्हे जगाच्या उद्धाराकरता आलेला एक तेजस्वी तारा अखेर निखळला. भारतीय इतिहासात त्या एकमेव राज्यकर्त्या लोकमाता झाल्यात. जागतिक इतिहासामध्ये एवढे अफाट दुःख काळजाआड दडवून रयतेची लेकरासारखी सेवा करणा-याही त्या एकमेव राज्यकर्त्या होत्या. अशा लोकमत तेच शतशः प्रणाम! आज युवा पिढी कुठलेही संकट आली की घाबरतात नाहीतर आत्महत्या करतात त्यांनी आपल्या डोळ्यापुढे अहिल्यादेवीचा आदर्श ठेवावा त्यांच्याकडून प्रेरणा घ्यावी त्यांचे साहित्य वाचावे त्यावर चिंतन करावे कुठल्याही संकटांना न घाबरता हिमालयासारखे तटस्थ रहावे इतके सामर्थ्य अहिल्यादेवी जवळ होते मानवाच्या कल्याणाकरता फक्त देतच राहावे इतके प्रतिभाषाली सामर्थ्य त्यांच्याजवळ होते. त्यांच्या कार्याचा ठसा

प्रत्येकाच्या मनामनामध्ये कोरल्याशिवाय राहणार नाही. नव्हे त्यांचे कार्य प्रत्येक स्त्री आणि पुरुषांनी वाचणे आवश्यक आहे. येणाऱ्या पिढीला सूर्यासारखे तेजस्वी विचार मिळतील. नवीन पिढीलाही तेजांकित वलय नक्कीच निर्माण करता येईल. यात शंकाच नाही. अशा सर्व गुण संपन्न लोकमाता तेजस्विनी अहिल्यादेवी होत्या.

संदर्भ ग्रंथ :

1. साठ महामानव- माधवी कदी, विद्याभारती प्रकाशन, लातूर. २६ जानेवारी २०१० पृ.२१
2. तत्रैव पृ.३७
3. लोकमाता अहिल्यादेवी होळकर - पुरु"गोत्तम खेडेकर सनय प्रकाशन पुणे पृ. 35
4. भारतीय स्त्री चळवळीचा इतिहास- डॉ. अनिल कटारे, एज्युकेशनल पब्लिशर्स अँड डिस्ट्रीब्युटर्स औरंगाबाद, १ जानेवारी २००० पृष्ठ 100
5. तत्रैव पृ.85-86

कोविड -१९ संकट के दौरान बैंकिंग क्षेत्र का भारतीय कृषि में योगदान

आलोक कुमार श्रीवास्तव^१ डॉ० आनन्द कुमार सिंह^२

^१शोधार्थी राजकीय महिला महाविद्यालय, शाहगंज-जौनपुर।

^२असिस्टेंट प्रोफेसर, राजकीय महिला महाविद्यालय, शाहगंज-जौनपुर।

Email ID-geniouscommerce@gmail.com

DOI-10.5281/zenodo.7053577

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में कोविड १९ महामारी का भारतीय कृषि पर प्रभाव एवं उस प्रभाव से निपटने के लिए भारतीय बैंको के योगदान पर प्रकाश डाला गया है। भारतीय कृषि क्षेत्र के लिए जो भारतीय अर्थव्यवस्था की रीड की हड्डी कहा जाता है यह एक अलग तरह का संकट था। कोरोना वायरस से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं है चाहे वह उद्योग जगत हो या फिर कृषि जगत। भारतीय किसान पहले से ही आर्थिक संकट से जूझ रहे थे और इस महामारी ने उनकी मुसीबतें और बढ़ा दी हैं। इस संकट का असर भारतीय अर्थव्यवस्था के साथ-साथ विश्व की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है। इस समस्या से निपटने में अभी अधिक समय लग सकता है।

कुजीशब्द- कोविड-१९, कृषि, बैंकिंग क्षेत्र, अर्थव्यवस्था, प्रभाव एवं चुनौतियां।

प्रस्तावना-

भारतीय अर्थव्यवस्था की बुनियाद कृषि थी, कृषि है और आगे भी रहेगी। इसका प्रमाण जारी कोविड -१९ के वैश्विक संकट में भी देखने को मिला। देश में २० करोड़ से अधिक किसान हैं, देश के कृषि क्षेत्र का सीधा असर अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। देश की आधी से अधिक आबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि क्षेत्र पर निर्भर करती है। २०१९ में अधिक वारिश के कारण गर्मी की फसल बर्बाद हो गई। भारत के साथ-साथ पूरी दुनिया में अधिकतर उत्पादन वाली गतिविधियां बिल्कुल थम सी गई थी, लेकिन ऐसे संकट में भी किसानों ने अपने खेतों में फसलों की कटाई की और अगले फसल की तैयारी भी की। कोरोना वायरस के कारण फसलों की कीमत कमजोर हो गई। एशिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था छह सालों में सबसे धीमी गति से बढ़ रही है। मक्का, सोयाबीन, कपास और प्याज जैसी फसलों की कीमत ५० फीसदी तक गिर गई। इस समस्या से किसानों को राहत दिलाने के लिए छोटे एवं सीमान्त किसानों को बड़े पैमाने पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई गई है। किसानों को कृषि संबंधी गतिविधियों को सुचारु रूप से चलाने के लिए समय पर ऋण की उपलब्धता को प्रमुखता दी गई। वर्ष २०१९-२० में १३ लाख ५० हजार करोड़ रुपये का कृषि ऋण निर्धारित किया गया था जबकि किसानों को १३,९२,४६९.८१ करोड़ रुपये का ऋण प्रदान किया गया जो निर्धारित सीमा से काफी अधिक था। २०२०-२१ में १५ लाख करोड़ रुपये का ऋण प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया था। इस दौरान प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना मील का पत्थर साबित हुई। इसमें देश के किसानों को न्यूनतम प्रीमियम राशि पर फसलों का बीमा प्रदान किया जाता है। इस योजना के अंतर्गत १२ जनवरी

२०२१ तक ९० हजार करोड़ रूपयों के दावों का भुगतान किया गया। कोविड-१९ महामारी के वजह से लगाए गए लॉकडाउन के बावजूद ५० लाख किसानों को इस योजना का लाभ मिला और लाभार्थियों के बैंक खातों में ८७४१.३० करोड़ रुपये के दावों का भुगतान किया गया। ऐसी संकट की स्थिति में इस महामारी का भारतीय कृषि पर प्रभाव का अध्ययन करना तथा वर्तमान में भारतीय कृषि किन चुनौतियों का सामना कर रही है और उसका क्या समाधान होगा यह अध्ययन करना आवश्यक है।

अध्ययन का उद्देश्य-

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य कोरोना महामारी का भारतीय कृषि पर प्रभाव एवं इस महामारी के दौरान बैंको की भूमिका का अध्ययन करना, सकल घरेलू उत्पाद, कृषिगत आय, आयात-निर्यात, मॉंग एवं पूर्ति पर प्रभाव का अध्ययन करना एवं इस महामारी में भारतीय बैंको की भूमिका एवं कृषि क्षेत्र में उत्पन्न हुई समस्या का समाधान का अध्ययन करना एवं निष्कर्ष प्रस्तुत करना है।

परिचालना-

कोरोना महामारी का भारतीय कृषि पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

कृषि उत्पाद कम होने से भुखमरी एवं आत्महत्या की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

अध्ययन की विधि-

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक संकेतों पर आधारित है जिसमें समग्र रूप से अध्ययन क्षेत्र भारत लिया गया है। विश्लेषण, व्याख्या एवं तुलनात्मक अध्ययन विधि द्वारा उद्देश्यों का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला गया है।

कोविड-१९ महामारी : भारतीय बैंको की भूमिका

विश्व में प्रत्येक वस्तु, प्रक्रिया तथा उत्पाद परिवर्तनशील है। एकमात्र प्रक्रिया जो सतत् स्थयी है तो वह है- परिवर्तन। बदलते युग में न केवल

उत्पाद बलिक सेवाए भी निरंतर परिवर्तनशील है। कृषि सेवाओं में बैंकिंग एक ऐसा क्षेत्र है जो निरंतर परिवर्तनशील है। विगत वर्षों में भारतीय बैंकिंग ने जो परिवर्तन देखा है, वह स्वयं में अद्भुत तथा विस्मयकारी है। भारतीय बैंकिंग जगत ने कई दौर तथा कई उतार-चढ़ाव देखे हैं तथा भारतीय बैंकिंग क्षेत्र उन सभी कठिनाइयों में से सफलतापूर्वक बाहर भी आया है। जन-जन तक बैंकिंग सेवाओं के प्रसार तथा राष्ट्र की प्राथमिकताओं को लागू करने जैसे सामाजिक सरोकारों हेतु १९६९ में १४ बैंको तथा १९८० में छह बैंको का राष्ट्रीकरण किया गया था। उसके बाद १९९१ में आए उदारीकरण के दौर में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र क्रांतिकारी परिवर्तन का साक्षी बना। विदेशी बैंको के भारत में आगमन, ग्राहको घर बैठे मिलती बेहतर बैंकिंग सुविधाओं, विश्व में भारतीय बाजार की बढ़ती पहचान तथा आयात-निर्यात की निरंतर वृद्धि ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको को वित्त किया कि वे अधिक प्रतिस्पर्धी बनें तथा ग्राहको को उच्चस्तरीय सेवाएं प्रदान करने की चुनौती स्वीकार करें। विश्वपटल पर बढ़ती बैंकिंग सेवा की प्रतिस्पर्धा ने भारतीय बैंकिंग को भी बदलाव की ओर अग्रसर किया है। गत दो वर्षों में भारतीय बैंकिंग ने अन्य गैर पूंजी व्यावसायिक क्षेत्रों तथा ग्राहक सेवाओं जैसे एटीएम, बैंक गारंटी, बीमा, म्यूचुअल फंड, डेविड कार्ड, क्रेडिट कार्ड, किसान क्रेडिट कार्ड इत्यादि क्षेत्रों में पांव पसार है। हमने केवल उदारीकरण और वैश्विक चुनौतियों के बारे में ही सोचा, परन्तु चुनौतियाँ ऐसी होती हैं जो किसी भी मोर्चे पर अकल्पनीय रूप में भी सामने आ सकती हैं। फिर चाहे वह युद्ध हो राजनैतिक संकट हो उग्रवाद तथा नवसलवाद जैसी राष्ट्रीय समस्या हो अथवा प्राकृतिक आपदा जैसे कि बाढ़, भूकम्प, महामारी इत्यादी के रूप में चुनौती हो। इन सभी चुनौतियों में हमने जिस चुनौती के विषय में सबसे कम विचार किया, वह थी किसी महामारी के रूप में बैंकिंग क्षेत्र के सम्मुख चुनौती का आना। वर्ष २०२० में कोरोना महामारी के रूप में ऐसी एक चुनौती बैंकिंग क्षेत्र के सामने लाया है। कोरोना एक ऐसी संक्रामक विमारी है जो एक नए वायरस कोविड १९ द्वारा फैलती है। यह वायरस हवा में अथवा बाहरी सतह पर बहुत देर तक जीवित रह रह सकता है। इस तथ्य ने इस वायरस के संक्रमण का खतरा और भी बढ़ा दिया है। ऐसा अनुमान है कि चीन की के हुबई राज्य की राजधानी वुहान शहर में स्थित जानवरों के मांस बेचने वाले एक बाजार से उत्पन्न हुआ यह वायरस आज विश्व के सभी देशों में फैल चुका है। इस वायरस ने किस प्राणी से मनुष्य में प्रवेश किया यह शोध का विषय है। शायद ही कोई ऐसा राष्ट्र हो जो अब तक इस वायरस से बच

पाया हो। मई २०२१ के पहले सप्ताह तक सम्पूर्ण विश्व में १७ करोड़ से अधिक लोग इस वायरस से संक्रमित हो चुके हैं तथा ३२ लाख से अधिक लोग इस वायरस के कारण काल-कलवित हो चुके हैं। जिन देशों ने इस वायरस का सबसे अधिक दंश झेला है उनमें संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, रूस, भारत, यूनाइटेड किंगडम, इटली तथा स्पेन प्रमुख हैं। भारत में दो करोड़ से अधिक लोग इस वायरस से संक्रमित हो चुके हैं तथा करीब सवा दो लाख लोग अपनी जान गंवा चुके हैं। भारत अभी कोरोना महामारी की दूसरी लहर से जूझ रहा है। पिछले वर्ष भारत सरकार ने आत्मनिर्भर भारत नामक अभियान की घोषणा की थी जिसमें २० लाख करोड़ रुपये (भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग १०%) की राशि दी गयी थी। इस राशि में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा पूर्व में घोषित आठ लाख करोड़ रुपये की राशि भी सम्मिलित थी। इस राशि में से कृषि के लिए दिये गए अनुदानों पर एक नजर डालते हैं- इस राशि में से २.७ करोड़ किसानों को दो लाख करोड़ रुपये का ऋण किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से किसानों को दिया जायेगा।

कृषि के आधारभूत ढांचे को मजबूत करने हेतु कृषक उत्पाद संगठनों के लिए एक लाख करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है।

बैंकिंग आवश्यक सेवाओं की सूची में आता है। अतः लॉकडाउन में भी बैंक कर्मियों के साथ-साथ किसानों ने भी कोरोना योद्धाओं के रूप में अपनी सेवाएं दी थी। कोरोना महामारी के दौर में भारतीय बैंको की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है जिसका अनुमान निम्नलिखित तथ्यों से लगाया जा सकता है:

देश में आज भी कई ऐसे दुर्गम स्थान जैसे कि रेगिस्तान, सुदूर पर्वतीय इलाके, उग्रवाद प्रभावित, नवसल प्रभावित जैसे सामाजिक/राजनैतिक रूप से अस्थिर स्थान इत्यादि हैं, जहाँ बैंक की शाखा देश की स्वतन्त्रता के इतने दिनों बाद भी नहीं पहुंच पायी है। ऐसे स्थानों में साइबर बैंकिंग द्वारा आम नागरिक को अर्थव्यवस्था की मुख्य धारा से जोड़ने में सहायता प्राप्त हुई। संक्रमण को देखते हुए सामाजिक दूरी, मास्क लगाने आदि उपायों के साथ-साथ भारत सरकार तथा राज्य सरकारों ने भी डिजिटल लेन-देन को भी बढ़ावा दिया। विश्व के अनेक देश कोरोना काल में चीन में निवेश करने से डर रहे हैं। चीन के बाद भारत विश्व में सबसे बड़ा बाजार है। भारत को इस मौके को भुनाने की आवश्यकता है। अंतरराष्ट्रीय व्यापार बढ़ने से आयात-निर्यात में भी उल्लेखनीय वृद्धि होगी। इस कारण भारतीय बैंकिंग क्षेत्र तथा भारतीय कृषि के लिए यह महामारी तमाम चुनौतियों के साथ-साथ कई नए अवसर भी लेकर आई है। कोरोना काल में

साइबर बैंकिंग लाभदायक है क्योंकि यह ग्राहकों को भीड़भाड़ वाले स्थानों से बचाती है। बैंक भी साइबर बैंकिंग की सुविधा प्रदान कर अपने मानव संसाधन के समय तथा ऊर्जा का ना केवल व्यावसायिक कार्यों में उपयोग कर पा रहे हैं बल्कि किसानों के लिए भी पर्याप्त समय दे पा रहे हैं।

कोविड-१९: चुनौतियों के बीच कृषि क्षेत्र की संभावनाएं-

डॉक्टरों के साथ-साथ किसान भी इस संकट में एक सिपाही के रूप में लड़ाई लड़ रहे हैं। यह किसानों की ही देन है कि जब पूरे भारत को बंद किया जा चुका था उस दौरान भी लोगों के घरों तक भोजन की आवश्यक वस्तुएं पहुंच रही थीं। पिछले तीन दशकों में भारत ने खाद्यान्न उत्पादन में जो सफलता हासिल की है यह उसी का परिणाम है। लेकिन एक तथ्य यह भी है कि खाद्यान्न उत्पादन में हुई वृद्धि के अनुपात में किसानों के आय और जीवन स्तर में प्रभावी बदलाव नहीं दिखे हैं। कोविड-१९ का प्रभाव किसी एक क्षेत्र मात्र का प्रभाव नहीं है। यह भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से पूरी दुनिया को प्रभावित कर रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था भी अपने सबसे बुरे दौर से गुजर रही है। अर्थव्यवस्था के तमाम क्षेत्र और उन में काम करने वाले लोग बुरी तरह से प्रभावित हैं। कृषि क्षेत्र, मैन्यूफैक्चरिंग और सर्विस सेक्टर तीनों ही एक गहरी मंदी मंदी की तरफ बढ़ते दिख रहे हैं। अभी तक के आंकड़ों के अनुसार यह तो स्पष्ट है कि कोविड-१९ का प्रभाव ग्रामीण भारत पर नहीं पड़ा है। लेकिन अगर यह संकट गांवों की तरफ फैला तो स्थिति भयावह हो सकती

है। आज भी ग्रामीण स्वच्छ जल, पौष्टिक आहार, सुव्यवस्थित जीवन शैली जैसी समस्याओं से घिरा हुआ है। लॉकडॉउन की वजह से शहरों में बंद हो रही कंपनियों के कारण कृषि क्षेत्र पर दो गंभीर नकारात्मक प्रभाव पड़े- १- एक बड़ी आबादी गांव की ओर वापिस आ रही है जिसकी वजह से कृषि क्षेत्र पर आजीविका के लिए अतिरिक्त दबाव बढ़ेगा। २-कृषि आधारित उत्पादों के लिए आपूर्ति चेन का प्रभावित होना। ऐसी बहुत सी कंपनियां हैं जो एग्रो प्रोडक्ट तैयार करती हैं। लेकिन जारी लॉकडॉउन की वजह से गांवों से निकलने वाला कच्चा माल इस्तेमाल में ना आने के कारण बर्बाद हो गया। यह किसानों की आय पर एक बड़ी आफत का रूढ़ धारण कर रहा है। उदाहरण के लिए होटल, रेस्टोरेंट आदि बन्द होने से सब्जियों की मांग में कमी आई है। आयोजनों और धार्मिक स्थलों पर पाबंदी की वजह से फूल की खेती करने वाले किसान भी प्रभावित हो रहे हैं। अफवाहों के बीच पोल्ट्री किसान भी एक बड़े नुकसान को झेल रहे हैं।

कोरोना संकट और गिरती कृषि विकाश दर-

कोविड-१९ संकट के बीच तमाम मुद्दों के बीच ग्रामीण भारत केन्द्रीय विमर्श का मुद्दा नहीं बन पा रहा है। बल्कि संकट के इस घड़ी में होना यह चाहिए कि सबसे अधिक चर्चा ग्रामीण अर्थव्यवस्था की कि जानी चाहिए। वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र एक ऐसी कड़ी है जो भविष्य में भारतीय अर्थव्यवस्था को पुनः सुचारु ढंग से चला सकती है। पिछले कुछ वर्षों में कृषि क्षेत्र में ऐतिहासिक गिरावट दर्ज की गयी। कृषि और संबद्ध क्षेत्रों की वार्षिक विकास दर क्रमशः निम्न है-

वित्तीय वर्ष	विकास दर
२०१२-१३	१.७:
२०१३-१४	७.६:
	-०.२:
२०१४-१५	०.६:
२०१५-१६	६.३:
२०१६-१७	७.०:
२०१७-१८	२.९:
२०१८-१९	

जनवरी २०२० में राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार भी वर्ष २०१९-२० में कृषि विकास दर का अनुमान २.८: ही जताया गया था। अगर यह संकट ऐसे ही जारी रहा तो कृषि विकास दर एक बार फिर नकारात्मक हो सकती है। सरकार के तमाम प्रयासों के बाद भी कोविड-१९ के जारी संकट की वजह से कृषि उत्पादों के बाजार तेजी से खत्म हो रहे हैं। कृषि क्षेत्र मांग के साथ-साथ आपूर्ति का भी संकट देख रहा है।

निष्कर्ष एवं सुझाव-

संयुक्त राष्ट्र (यूएन) २०१९ की रिपोर्ट के अनुसार भारत की ६९ प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है, अर्थात् कुल अर्थव्यवस्था में खपत आधारित मांग का ६९ प्रतिशत हिस्सा गांव में रहता है। किसानों के सामने हमेशा से ही तीन महत्वपूर्ण समस्याएं रही हैं। पहला उनके ऊपर कर्ज का भारी दबाव है, दूसरा उनकी फसल लागत में कमी नहीं आ रही है और तीसरा उनकी

फसल का उन्हे सही कीमत नहीं मिल पा रही है। आज यह जरूरत है कि सरकार इन तीनों ही समस्याओं पर काम करते हुए कृषि क्षेत्र को बचाने का काम करें। लॉकडाउन की घोषणा के तुरन्त बाद भारतीय वित्त मंत्री ने १.७ ट्रिलियन पैकेज की घोषणा की, जो ज्यादातर कमजोर वर्गों (किसान सहित) को कोरोना महामारी के किसी भी प्रतिकूल प्रभाव से बचाने के लिए था। कई लाभों के बीच घोषणा में पीएम-किसान योजना के तहत आय सहायता के रूप में किसानों के बैंक खातों में २००० रु की अग्रिम राशि जारी की गयी। यह राशि मझले और सिमान्त किसानों के लिए संजीवनी का कार्य किया। इस राशि का उपयोग किसानों ने कृषि आगतों को पूरा करने में किया। भारतीय रिजर्व बैंक ने भी विशिष्ट उपायों की घोषणा की है जो लॉकडाउन महामारी के कारण ऋण चुनौती के बोझ को सम्बोधित करते हैं। अच्छे पुनर्भुगतान व्यवहार वाले उधारकर्ताओं के लिए ३,००,००० रुपये तक के फसल ऋण की व्याज दर पर ३ प्रतिशत रियायत

के साथ बैंकिंग संस्थानों द्वारा कृषि अवधि और फसल ऋण को तीन महीने की मोहलत दी गई। सुझाव के रूप में कहा जा सकता है कि कृषि के उत्थान के लिए बैंकिंग क्षेत्र को और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। कृषि ऋण को और अधिक आसान और सुविधाजनक बनाने की आवश्यकता है। कृषि पर निर्भरता को कम कर ग्रामिण रोजगार को बढ़ावा देने की अधिक जरूरत है। फसलों का मूल्य निर्धारित कर विचौनियों की भागीदारी समाप्त कर सीधे बैंक खातों में भुगतान सुनिश्चित करना चाहिए। जिससे किसानों को उनकी मेहनत का सही भुगतान प्राप्त हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

- १-योजना
 - २-दैनिक जागरण
 - ३-इण्डिया टुडे
 - ४-एग््रीकल्चर न्यूज
- 5-tv9hindi.com

उषा प्रियंवदा के "नदी" उपन्यास में प्रवासी स्त्री जीवन का यथार्थ

डॉ. आर. एन. वाकले¹ प्रा. आर. पी. ठाकरे²

¹हिंदी विभाग अध्यक्ष, कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, येवला, तह - येवला (नाशिक)

²हिंदी विभाग, कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, येवला, तह - येवला (नाशिक)

DOI- 10.5281/zenodo.7053581

प्रस्तावना :

भारतीय समाज सदैव से ही पुरुष प्रधान रहा है। समाज में स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व का हमारी सांस्कृतिक मान्यताएं, रूढ़ियां परंपराएं और रीति-रिवाज विरोध करते हैं। इसलिए सदैव से ही स्त्रियों को पुरुषों द्वारा दबाया जाता रहा है। आजादी के बाद नारी को पुरुषों के बंधन से मुक्त करने के लिए अनेक कानूनी अधिकार दिए गए परंतु महिलाओं में शिक्षा की कमी के कारण वे अपने इन अधिकारों के बारे में जागरूक ही नहीं हैं। आज हिंदी साहित्य में नारी, दलित, आदिवासी एवं किन्नर साहित्य भी भांति ही प्रवासी साहित्य की अपनी जड़े मजबूत करते हुए हिंदी साहित्य को समृद्ध कर रहा है। रोजी-रोटी की तलाश में विदेश जाने वाले लोगों में कुछ लोगों ने विदेशी धरती पर रहते हुए अपने अनुभवक, अपनी संवेदना को तथा भारत भूमि के प्रति के अपने ममत्व, पीड़ा आदि को शब्दबद्ध किया है। प्रवासी भारतीय महिला साहित्यकारों में उषा प्रियंवदा का नाम विशेष उल्लेखनीय है। प्रवासी महिला साहित्यकारों में से उषा प्रियंवदा का नाम अग्रगणी है। २०१६ में प्रकाशित नदी उपन्यास वाली स्त्री जीवन के दस्तावेज को चित्रित करने वाला उपन्यास है। प्रवासी साहित्यकार उषा प्रियंवदा कृत 'नदी' उपन्यास में स्त्री जीवन की गाथा को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। यह उपन्यास प्रवासी स्त्री जीवन के मानवीय मूल्यों, नैतिक विचारों से लेकर प्रवासी स्त्री जीवन के विविध स्वरूप को एवं उनके अधिकारों की गाथा कहने वाली उपन्यास कहलाएगी। प्रवास में गए लोगों विशेषकर स्त्रियों के संघर्ष मानसिकता का बिखराव दाम्पत्य जीवन में परिवार में अलगावबोध, घुटन, अकेलापन आदि जीवन की विविध परिस्थितियों का वर्णन प्रवासी लेखिका उषा प्रियंवदा ने किया है।

मूल शब्द : प्रवासी, डायस्पोरा, प्रवासन, अप्रवासी उत्प्रवासी, बासी मूल निवासी एन. आर. आई. आदि।

स्त्री के प्रति विश्व सभ्यता का हर समाज अनादि काल से अनुदार ही रहा है। स्त्री का जीवन सदैव विषमताओं, विसंगतियों एवं समझौतों की ही कथा कीकहता है। प्रवासी कथा साहित्य इसका अपवाद नहीं है। प्रवासी साहित्यकारों में कुछ तो ऐसे लेखक हैं जो विदेशी सभ्यता एवं संस्कृति का आकलन भारतीय मानदंडों के आधार पर करते हैं, जिससे उन्हें कभी निराशा तो कभी उत्साह का अनुभव होता है। प्रवासी कथाकारों ने विपुल मात्रा में हिंदी में कहानियों एवं उपन्यासों की रचना की है। प्रवासी कथाकारों में अमेरिका में स्थायी रूप से बसी हुई हिंदी की सुविख्यात लेखिका उषा प्रियंवदा हैं। जो एक सफल और तेजस्वी कथाकार हैं। उषा प्रियंवदा के उपन्यास, उनकी स्त्री पक्षधरता को प्रबलता के साथ स्थापित करते हैं। पचपन खंभे लाल दीवारें, रुकोगी नहीं राधिका, शेषयात्रा, अंतरवंशी, नदी आदि उपन्यासों में उनके स्त्री पात्र एक भिन्न धरातल पर सामाजिक विद्रूपताओं को झेलते नज़र आते हैं। उषा जी ने प्रवासी भारतीयों के समस्याओं को स्वयं झेला है इसलिए उनके उपन्यासों में काल्पनिकता नहीं बल्कि हृदय की सच्ची वेदना अनुभव जनित यथार्थ प्रतिबिम्बित होता है। उनकी स्थिति को

उन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत किया जा सकता है - "एक प्रवासी के लिए घर लौटना एक मधुर और कचोट भरा अवसर होता है। घर से हम विदेश के लिए निकलते हैं तो आँखों में एक स्वप्न होता है। नए अनुभवों के लिए उत्साह रहता है। मन में एक ऊर्जा और शक्ति होती है पर लौटे हुए मन में अनेक भावनाएँ गडमड होती रहती हैं। अपने परिवार में बैठने का सुख अपनी भाषा बोलने का आनंद और अपना देश। यह सब आह्वान करता है पर साथ ही कहीं छुपा हुआ हमारा एक अंश, हमारी भावनाओं और अनुभवों का एक भाग जैसे पीछे रह जाता है। अलमारी से लटकते कपड़े, रसोई के बर्तन, डब्बों में बंद पुराने पड़ते अचार और गैराज में खड़ी मोटर जैसे हर चीज़ को हमारे लौटने की प्रतीक्षा रहती है और भारत में सबसे घिरकर भी हम जानते हैं कि हमें लौटना है और फिर उसी व्यस्तता और अकेलेपन से जूझना है।"

नदी उपन्यास की नायिका गंगा के पति डॉ. गगनेन्द्र सिन्हा एक तुनुक मिजाज और बेहद सकी किस्म के इन्सान थे। उन्हें अपनी सुन्दर एवं वाचाल पत्नी का किसी से मिलना-जुलना पसंद नहीं था। विदेश में रहते हुए गंगा

अपनी दोनों बेटियों झरना और सपना के साथ खुश थी | बेटे के जन्म के बाद तो गंगा की खुशियाँ दोगुनी हो जाती हैं | वह स्वयं उसका नाम 'भविष्य' रखती है किंतु उसके पांच वर्षीय बेटे की मृत्यु हो जाती है जिसका सारा दोष डॉ.सिन्हा गंगा के सिर मढ़ देते हैं | और गंगा जब अपनी सौतेली बहन से मिलने वासिंगटन जाती है तब डॉ. सिन्हा घर बेच कर बेटियों सहित भारत आ जाते हैं | पति और बच्चों के बिना अकेली और असहाय बनी गंगा का विदेशी धरती पर अकेली गुजर करना आसान न था |

नदी' उपन्यास में उषा प्रियंवदा ने भारतीय पुरुषों द्वारा ब्याहता पत्नी के साथ अमेरिकी परिवेश में किए जाने वाले छल और अन्याय का चित्रण सहजता के साथ किया है। पत्नी को मानसिक विकलांग बच्चे को जन्म देने के अपराध में पति उसे अमेरिका में बेसहारा छोड़कर अपनी सारी संपत्ति समेटकर भारत लौट जाता है। पत्नी अमेरिका में दर-बदर भटकती है। अन्य पुरुष की शरण में जाकर, अपने को समर्पित कर, वह भारत आने के लिए साधन जुटाती है। भारत में उसे ससुराल से पता चलता है कि पति ने दूसरा घर बसा लिया है किन्तु ससुराल के सदस्य उसे बहू का ही मान सम्मान देते हैं। वह अमेरिका लौट आती है, उसे पुरुष सहारा देते हैं किन्तु बिना मूल्य चुकाए, स्त्री को कहीं सहारा नहीं मिलता। संघर्ष करती हुई वह मानव समुदाय से दूर एकांत में अपना शेष जीवन बिताने के लिए सभ्य समाज का बहिष्कार कर देती है।

स्त्री वह नदी है, जो कभी, कहीं ठहरती नहीं है। वह निरंतर प्रवाहमान है। उसके मार्ग में पत्थर, चट्टान, पहाड़, बीहड़, जंगल, दलदल सब आते हैं, वह अपनी धार को मोड़ लेती है किन्तु बहाना नहीं छोड़ती। उषा प्रियंवदा, प्रवासी हिंदी कथाकारों में लोकप्रिय और सार्थक कथाकार के रूप में है। इस उपन्यास में भारत और अमेरिकी पृष्ठभूमि स्वतंत्रता का ताना-बाना अत्यंत व्यापक रूप से दिखाया गया है। इस उपन्यास में उपन्यासकार मध्यवर्गीय परिवार से जुड़ी आधुनिकता की दौड़ में भागती नारी के अंतर्द्वंद्व, वैचारिक वैमनस्य के कारण पारिवारिक, सामाजिक, दाम्पत्य संबंधों की टूटन को रेखांकित करती है यह विघटन पात्रों की लेखिका ने अन्य परम्परागत रिश्तों की गठन को नकारते हुए वर्तमान संदर्भ में मानसिकता को भी प्रभावित करता है और तनाव और अकेलेपन से रास्त हो जाते हैं विभाजित किया है। स्वतंत्रता बाद के उपन्यासों में अनेकों बदलाव पागल होती हुई नजर आती है यह बदलाव बदलता हुआ परिवेश दृष्टि की ही देन है।

"नदी" उपन्यास में लेखिका ने विवाह संबंधों की असफलता को दिखाया है। विवाह के चार वर्षों के बाद प्रणव अनु को इसलिए छोड़कर चला जाता है क्योंकि उसे चंद्रिका नाम की एक युवती से प्रेम हो गया है। अनु से तलाक लेने के लिए उस पर पागल होने का आरोप लगाता है। उपन्यास में इस अंश के माध्यम से प्रणव के पाश्चात्य विचारों को दर्शाया गया है - "चन्द्रिका में उसकी प्रखरता में एक ऐसा अदमनीय आकर्षण था, उसके साथ में एक ऐसी गहरी अभूतपूर्व परितुष्टि थी कि उसके बाद प्रणव को अनु के साथ वैवाहिक ज़िन्दगी बहुत लाचार और बेमानी लगने लगी है।"¹

उषा प्रियंवदा ने अपने उपन्यासों में विविध परिस्थितियों के आधार पर सामाजिक आर्थिक, पारिवारिक, यथार्थवादी आदि विविध विषयों पर उपन्यास में केन्द्रित किया। "आज का उपन्यासकार ऐतिहासिक, सामाजिक या राजनीतिक उपन्यास नहीं लिखता, वह उनके माध्यम से आधुनिक व्यक्ति चेतना को परखता है, प्रतिस्थित करता और उनका मुल्यांकन करता है।"² जीवन के विविध क्षेत्र में उतार चढ़ाव लगे रहते हैं ऐसे में व्यक्ति का जीवन परिस्थितियों से होकर यथार्थ रूप में मानस पटल पर विचरित करता रहता है। नदी उपन्यास आधुनिक जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करने का स्पष्ट दस्तावेज है। जिसका संबंध मानव के आम जीवन से जुड़ा हुआ है। उषा प्रियंवदा ने " नदी " उपन्यास में प्रवासी जीवन के यथार्थ को विविध समस्याओं व परिस्थितियों के माध्यम से मुखरित किया है।

शिक्षा अथवा रोजगार के उद्देश्य से व्यक्ति भले ही प्रवाश में जाकर नयी गृहस्थी शुरू करता है परन्तु पाश्चात्य समाज में व्यक्ति को फिट होने में समय लग जाता है। विदेशी चकाचौंध सदैव भारतीयों को अपनी ओर आकर्षित करती है परन्तु वास्तविकता तब नजर आती है जब व्यक्ति उस समाज में उस मानसिकता के साथ फिट नहीं बैठता। ऐसे में आर्थिक रूप से सम्पन्नता भी कमी होने लगती है।" यहां सबसे ज्यादा जो जरूरी चीज है वह है निश्चित आवास का होना। परन्तु पराये देश में पहले पहले किसी न किसी व्यक्ति का आश्रय लेना पड़ता है फिर जाकर फ्लेट या अपार्टमेंट में रहना पड़ता है। यह स्थिति अनेक दिक्कतें उत्पन्न करती है आकाशगंगा के शब्दों में दूर देश में न कोई सगा सम्बन्धी है, न रहने का ठिकाना।"³ बहुत बार ऐसा देखा गया है कि विदेश में अपनी इच्छाओं की ललक को पूरा करने के लिए अनेक भारतवशी जाकर वहाँ बस जाते हैं। यानी कभी इच्छा वश तो कभी बेसहाय वश परन्तु भारतीय परिवार को

अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है, जो कि एक प्रवासी के लिए बड़ा सपना बन कर रह जाता है।

प्रवासी व्यक्ति का मन पेंडुलम की तरह डोलते रहता है जिससे की एकाग्र नहीं हो पाता। भले ही थोड़े समय के लिए अपने को फिट परिस्थितियों के अनुसार फिट कर लें परन्तु कुछ समय बाद जब उसे अपने घर और परिवार का बोध होता है तो कहीं न कहीं अपने आप को अकेला ही पाता है जिसके चलते वह व्यक्ति प्रवास में रहकर भी अपनी मिट्टी से जुड़ा रहता है। आकाशगंगा के शब्दों में " संस्कृति और सभ्यता से अपने को उखाड़ कर न यहाँ के पूर्णत हो पाते हैं न वहाँ के"४ प्रवासी मनुष्य की मानसिकता अनिश्चित होती है। जब उस पर पुरानी स्मृतियों हावी होती है तब वह न अपने देश को भुला पाता है और न ही पाश्चात्य संस्कृति को अपने में फिट बैठा पाता है। यही कारण है कि वह अपनी जमीन व मातृभूमि के प्रति खिचाव बढ़ता चला जाता है।

प्रवास में जीवन यापन कर रहे एक भारतीय महिला की सारी संवेदनाएँ विघटित हो जाने के लिए विवश है। उसे ऐसा लग रहा है कि अब उसका इस दुनिया में कोई नहीं। आकाशगंगा समुन्द्र के किनारे जा रेत पर लेट जाती है उसे न सुध है लहरों की न ही मृत्यु की समुद्र की यह लहरे आती और पैरों को भिगोकर चली जाती है। लेखिका के शब्दों में "यह शरीर कितना अतृप्त है, कितना बचित है किसी के स्नेहिल स्पर्श का, जैसे सारी त्वचा में धीरे-धीरे आंच सुलग रही है।"५ अकेलेपन की छटपटाहट उसे अंदर से व्याकुल कर देती है। दूर प्रदेश में उसका कोई अपनानहीं रहता है सिवाय एकाकीपन के। क्योंकि जो अपना था वह भी उसे अकेले छोड़ गया। "वह बुदबुदाती है, सभी कोई क्यों मुझे छोड़कर चले जाते हैं तुम आओ नमो-मुझे उठकर अपनी बाहों में भर लो। मुझे दुलराओं माँ मुझे उठाकर बैठाओ अरे कोई तो हो जो।"६ अतः उसे न सांस की परवाह है और ना ही मृत्यु की। प्रवास का यह अकेलापन विच्छोह की स्थिति वाला अकेलापन नहीं है वरन व्यक्ति और घटनाओं के बीच असम्प्रेरण से युक्त अद्भुत छटपटाहट क्षण का यह जिसका उत्तर दर्शन के पास है।

इस उपन्यास में नायिका आकाशगंगा के जीवन में दवदवात्मक परिस्थितियाँ तब उभर कर सामने आती है जब एक ओर प्रवास में पति छोड़कर चला जाता है। वहीं दूसरी ओर अर्जुन सिंह का आश्रय पाती है। परन्तु गैर कानूनी कम करवाने के जुर्म में रातों-रात उसकी गिरफ्तारी हो जाती है। ऐसे में उसके पास न बीजा है न भारत लौटने का दूसरा मार्ग आकाशगंगा के शब्दों में - "इस ठंडे पराए देश में, जहां आकर लोग इतना बदल जाते

हैं कि उन्हें सही गलत का आभास भी नहीं रहता?"७ प्रवासी समाज में सास ले रहा भारतीय समाज व परिवार जब भी परायेपन का शिकार होता है तब वह अतीत में खो जाता है और वर्तमान उत्पन्न करता है। मैं अपने उन पुरानी यादों के बीच छोटी-छोटी खुशियों को तलाशने की कोशिश करने लगता है अतीत के प्रति मोह व्यक्ति को नए परिवेश में सामजस्य स्थापित करने में बाधा उत्पन्न करता है।

इस उपन्यास में प्रवास में रह रहे भारतीय परिवार की मानसिकता वहीं धरी की धरी है। आधुनिक होकर भी उसकी मानसिकता दबी कुची है। परन्तु यह भी सत्य है कि आधुनिकता की इस चकाचौंध में व्यक्ति अपनी गरिमा को न पार करे। पति का यह बदलाव तब देखा जाता है जब स्वयं के परिवार को ही संदेह की दृष्टि से देखने लगता है। पति डॉ. सिन्हा अपनी माँ से कहता है- "अम्मा- तुम उसे पहचानती नहीं, वह बड़ी चालाक है, उसका भरोसा मत करो-अच्छा रात को उसके कमरे में बाहर से ताला लगा दिया करो।"८

उषा प्रियंवदा का 'नदी' उपन्यास में प्रेम और नैतिकता के परंपरागत प्रतिमानों पर न केवल प्रश्न चिह्न लगता है, अपितु मानवीय संबंधों के यथार्थ को भी प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार शादी के पूर्व या बाद एक स्त्री किसी गैर पुरुष से संबंध रखती है तो उसे गलत माना जाता है। परन्तु जब एक पुरुष पत्नी के रहते किसी एनी स्त्री से संबंध रखे तो उसे मर्दानगी कहा जाता है। गंगा नए देश, नए परिवेश में है, अर्जुन के साथ संबंध हर दृष्टि से गलत है, वह विवाहिता है चार बेटियों और एक बेटे का पिता है। यह जानते हुए भी गंगा उसके साथ नैसर्गिक संबंध बनती है। यहां तक कि अर्जुन सिंह भी केवल अपनी इच्छाओं की ही पूर्ति मात्र गंगा से करता है जो कि उसे अपनी पत्नी से नहीं प्राप्त हो पाता। अर्जुन सिंह कहता है - "मैं किसी का हक छीनकर किसी और से नहीं बाँट रहा हूँ- यह मेरी खुशी है। मुझे भी कुछ खुशी पाने का अधिकार है कि नहीं।"९ यौन संबंध को घृणा एवं अश्लील की एव अश्लील की से देखा जाता था परन्तु आज उसकी सहज अभिव्यक्ति अपेक्षित है।

निष्कर्ष :

आधुनिक जीवन की सबसे बड़ी जटिल व प्रमुख समस्या आजीविका, प्रेम, विवाह और सेक्स की कमी है। कमजोरियाँ हर व्यक्ति में होती है, कोई भी पूर्ण नहीं। स्त्री भी अपनी कमजोरियों को जानती है, पर कुछ कमजोरियाँ आदत और बेसहाय व लाचारीपन में शामिल

हो जाती हैं। कभी-कभी यह भी एक कारण बन जाती है। कटुता का, अलगाव, विखरापन का, संबंध विखंडन का आदि। व्यक्ति इस क्षेत्र में समाज की रूढ़ सनातन धारणाओं एवं मान्यताओं में अनास्था रखता हुआ मानसिक संघर्षों से ग्रस्त रहता है। सामाजिक मान्यताओं को प्रधानता देने पर जिस आत्मिक कष्ट और अंतर्द्वंद्व को लेकर वह जीता है वह उसके व्यक्तिगत क्षेत्र में हानिकारक सिद्ध होता है। अतृप्त वासनाएँ व्यक्ति के जीवन को कुंठित कर पूर्ण रूप से उसे मानसिक रोगी बना देती हैं। भारतीय समाज प्राचीन संस्कृति एवं आदर्शों में इतना आस्थावान है कि उनके विपरीत संस्कृति मनोभाव, आचरण वालों को उचित मान्यता नहीं देता है।

प्रवासी भारतीय स्त्री के जीवन के संत्रास और अकेलेपन से उत्पन्न छटपटाहट और मानसिकता यंत्रणा, अर्थाभाव के कारण चाहते हुए भी कुछ ना कर पाने की विवशता अपने पूर्ण यथार्थ के साथ अभिव्यक्त हुई है। लेखिका ने व्यक्ति, परिवार तथा स्त्री-पुरुष के संबंधों, नारी की स्थिति आदि को अत्यंत प्रभावशाली रूप में चित्रित किया है।

उपन्यास के केंद्र में की सुख-दुखात्मक स्थितियाँ अतद्वदव, आकांक्षा तथा पुरुष से उसका संबंध आदि विषय हैं। साथ ही उससे जूझती समस्याओं का एवं

संवेदनाओं का मार्मिक विस्तारपूर्वक वर्णन है। इसके साथ ही साथ दविभाषीय राष्ट्र जैसे भारत और अमेरिकीय जीवन शैली की विरोधी संस्कृतियों की टकराहट भी इनमें स्पष्ट रूप से उभर कर आती है। जिसके चलते पारिवारिक जीवन शैली से तनाव व टकराहट की स्थितिया आ जाती हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि स्त्री-पुरुष के संबंध में विखराव के साथ- साथ मानव जीवन में उत्पन्न परिस्थितियों से रूबरू करवाया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

१. उषा प्रियंवदा : शून्य तथा अन्य रचनाएँ, पृष्ठ - १६२
२. डॉ. पुरुषोत्तम दुबे : व्यक्ति चेतना और स्वतंत्र उत्तर हिंदी उपन्यास - पृष्ठ - १७०
३. उषा प्रियंवदा : नदी - उपन्यास, पृष्ठ - ८४
४. उषा प्रियंवदा : नदी- उपन्यास, पृष्ठ - ३७
५. उषा प्रियंवदा : नदी- उपन्यास, पृष्ठ - २५
६. उषा प्रियंवदा : नदी - उपन्यास, पृष्ठ - २५
७. उषा प्रियंवदा : नदी - उपन्यास, पृष्ठ - ३६
८. उषा , प्रियंवदा : नदी - उपन्यास, पृष्ठ - ६०
९. उषा प्रियंवदा : नदी- उपन्यास, पृष्ठ - ३३

राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 2020 एक विश्लेषणात्मक अभ्यास

Dr.Satish baburao Donge

Assistant professor Economics Department Arts Commerce & Science College, Gangakhed

Email- sbdonge@gmail.com

DOI- 10.5281/zenodo.7053590

सारांश

शिक्षणामुळे आर्थिक आणि सामाजिक प्रगती होते. या कारणास्तव शालेय आणि महाविद्यालयीन स्तरावरील देशासाठी चांगले परिभाषित आणि भविष्य शिक्षण धोरण आवश्यक आहे. परंपरा आणि संस्कृतीचा विचार करून भिन्न देश वेगवेगळ्या शैक्षणिक पद्धतींचा अवलंब करतात आणि शाळा आणि महाविद्यालयीन शिक्षण पातळीवर आयुष्यादरम्यान वेगवेगळ्या चरणांचा अवलंब करतात जेणेकरून ते प्रभावी होईल. अलीकडेच भारत सरकारने आपले नवीन शैक्षणिक धोरण जाहीर केले जे भारतीय अंतराळ संशोधन संघटनेचे (इसरो) माजी अध्यक्ष डॉ. कस्तुरीरंगन यांच्या अध्यक्षतेखाली असलेल्या तज्ज्ञ समितीच्या शिफारशींवर आधारित आहे. प्रस्तुत शोधनिबंध उच्च शिक्षण प्रणालीत घोषित केलेल्या विविध धोरणांवर प्रकाश टाकला आहे आणि त्यांची तुलना सध्या स्वीकारलेल्या प्रणालीशी करते. एनईपी 2020 चे विविध गुणधर्म आणि भविष्यवाढ होण्याबाबत भारतीय उच्च शिक्षण प्रणालीवरील गुणवत्तेसह चर्चा केली जाते. शेवटी, त्याची उद्दीष्टे साध्य करण्याच्या प्रभावी अंमलबजावणीसाठी काही सूचना प्रस्तावित आहेत.

Keywords- उच्च शिक्षण, राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 2020 एनईपी 2020 अंमलबजावणीची रणनीती, पूर्वानुमानित अडथळे आणि गुणवत्ता

अभ्यासाचे उद्दीष्टे:

1. राष्ट्रीय शिक्षण धोरणात वेळोवेळी झालेल्या बदलांचा अभ्यास करणे.
2. राष्ट्रीय शिक्षण धोरण 2020 ची वैशिष्ट्ये आणि नवकल्पना ओळखणे.

अभ्यास पद्धती:

प्रस्तुत शोध निबंधासाठी तथ्यांचे संकलन करण्यासाठी दुय्यम स्रोतांचा उपयोग करण्यात आला आहे. या पद्धतीमध्ये राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणांच्या ड्राफ्ट, आतापर्यंत शासनाद्वारे आखल्या गेलेली शैक्षणिक धोरणे यांचा आढावा तथ्यांसाठी घेण्यात आला आहे.

शैक्षणिक धोरणांचा आढावा

भारतीय नागरिकांमध्ये शिक्षणाचा पुरस्कार करण्यासाठी भारत सरकारने आखलेले धोरण. भारतातील ग्रामीण व नागरी भागातील प्राथमिक ते महाविद्यालयीन शिक्षण कसे असावे, याची आखणी सदर धोरण करते. 1968 मध्ये तत्कालीन पंतप्रधान इंदिरा गांधी यांनी प्रथमतः राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण ठरविले. तेव्हापासून त्यात वेळो वेळी आवश्यक ते बदल करण्यात येत आहेत. इसवी सन 1947 नंतर स्वतंत्र भारतातील नागरिकांच्या निरक्षरतेची समस्या दूर करण्यासाठी भारत सरकारने विविध कार्यक्रम आखले. त्यांमध्ये भारताचे पहिले शिक्षणमंत्री मौलाना अबुलकलाम आझाद यांनी देशभरासाठी समान शैक्षणिक पद्धत आखून त्यावर केंद्र शासनाचे नियंत्रण आणले. त्यांनी भारतीय शिक्षणात आधुनिकता आणण्यासाठी विद्यापीठ शिक्षण आयोग (डॉ. राधाकृष्णन आयोग), मुदलियार आयोग

(माध्यमिक शिक्षण आयोग) आणि कोठारी आयोग (भारतीय शिक्षण आयोग) हे आयोग प्रस्तावित केले. भारताचे प्रथम पंतप्रधान जवाहरलाल मोतीलाल नेहरू आणि केंद्र शासन यांनी उच्च गुणवत्तेचे वैज्ञानिक धोरण आखून त्यानुसार 1 सप्टेंबर 1961 रोजी राष्ट्रीय शैक्षणिक संशोधन व प्रशिक्षण परिषद ही स्वायत्त संस्था स्थापन केली. ही संस्था देशातील शालेय शिक्षणासंदर्भातील सर्व समस्यांबाबत अभ्यास करते. या संस्थेला राज्य शासन व केंद्र शासन यांनी शैक्षणिक धोरणांच्या आखणी व कार्यवाहीबाबत सल्ला द्यावा, हे अपेक्षित आहे. इंदिरा गांधी यांनी 1964ते 1984 पर्यंतच्या शिक्षण आयोगांचे वृत्तांत व शिफारशी लक्षात घेऊन पूर्वीच्या धोरणांत आमूलाग्र बदल करून डॉ. त्रिगुणा सेन यांच्या अध्यक्षतेखाली आयोग स्थापन केला. आयोगाने पहिले राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण जाहीर केले. यामध्ये राष्ट्रीय एकात्मता, सांस्कृतिक व आर्थिक विकास साधण्यासाठी भारतीय नागरिकांना समान शैक्षणिक संधी दिली गेली. भारतीय राज्यघटनेप्रमाणे 14 वर्षांपर्यंतच्या सर्व बालकांना सक्तीचे शिक्षण आणि शिक्षकांच्या गुणवत्तेसाठी परिणामकारी प्रशिक्षण यांची गरज सदर धोरणाने प्रकट केले. देशातील कुशल व अकुशल जनतेमधील दरी दूर होऊन प्रादेशिक भाषांच्या अध्ययनास प्रेरणा मिळावी, यांसाठी माध्यमिक शिक्षण आयोगाने संपूर्ण राज्यातील सरकारी व निमसरकारी शैक्षणिक संस्थांनी शाळेचे माध्यम पहिली राज्यभाषा (प्रादेशिक भाषा), दुसरी हिंदी भाषा (राष्ट्रीय भाषा) आणि तिसरी इंग्रजी भाषा (आंतरराष्ट्रीय भाषा) हे

त्रिभाषासूत्र प्रभावीपणे राबविण्याचे धोरण अमलात आणले. तसेच भारतीय संस्कृतीचा एक भाग म्हणून शिक्षण संस्थांत 'संस्कृत' हा विषय शिकवावा, असे म्हटले. सदर धोरणाने शिक्षणावरील खर्च राष्ट्रीय उत्पन्नाच्या 6 टक्के निश्चित केला होता.

राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 1968 च्या शैक्षणिक धोरणांच्या परिणामाचा अभ्यास करण्याठी गुजरात विद्यापीठाचे कुलगुरु ईश्वरभाई पटेल यांच्या अध्यक्षतेखाली 'ईश्वरभाई पटेल पुनर्वलोकन समिती' ची स्थापना झाली. या समितीनेही महत्त्वपूर्ण शिफारशी केल्या होत्या.

तत्कालीन पंतप्रधान राजीव गांधी यांनी व त्यांच्या केंद्र शासनाने 1985 मध्ये पूर्वीच्या शैक्षणिक धोरणात आवश्यक ते बदल करून 1986 मध्ये देशातील संपूर्ण शैक्षणिक संस्थांसाठी नवीन शैक्षणिक धोरण लागू केले. या धोरणात प्रामुख्याने मुलींचे शिक्षण, अनुसूचित जाति (एस.सी.) व अनुसूचित जमाती (एस.टी.) यांच्यातील भेद दूर करण्यासाठी समान शिक्षणसंधी यांवर भर दिला गेला. त्याचबरोबर त्यांनी शिष्यवृत्तींची संख्या वाढविणे, प्रौढ शिक्षण, मागास जमातींमधून शिक्षकभरती, गरीब कुटुंबांना शैक्षणिक प्रोत्साहन देऊन त्यांच्या मुलांचे नियमित शिक्षण, प्राथमिक शिक्षणाचा स्तर उंचावण्यासाठी बालककेंद्री शिक्षण, प्राथमिक शिक्षण सुधारण्यासाठी 'खडू-फळा मोहीम' इत्यादी बाबी कार्यान्वित केल्या. तसेच 1985 मध्येच केंद्र सरकारने संसदेत कायदा करून सदर धोरणान्वये नवी दिल्ली येथे राष्ट्रीय स्तरावर 'इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विद्यापीठ' (फ्लॅगशूट इगू) या संस्थेची स्थापना करून मुक्त विद्यापीठ यंत्रणा सुरू केली. आजमितीला देशात दूरशिक्षण व मुक्त शिक्षणामध्ये सर्वात मोठी संस्था म्हणून 'इगू' ला ओळखले जाते. विविध राज्यांमध्ये या विद्यापीठांतर्गत सुमारे 17 मुक्त विद्यापीठे, पारंपरिक विद्यापीठांतर्गत 82 दूरशिक्षण संस्था, मानीव विद्यापीठे व खासगी संस्था अशा एकूण 256 संस्था कार्यरत आहेत. या सर्व संस्थांमध्ये सुमारे 50 लाखांहून अधिक विद्यार्थी शिक्षण घेत आहेत. विद्यापीठांची संख्या देशातील पारंपरिक विद्यापीठांपेक्षा अधिक आहे. त्याचप्रमाणे महाराष्ट्र राज्यात 1989 मध्ये यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विद्यापीठ या संस्थेची स्थापना झाली. या विद्यापीठामधून दरवर्षी सुमारे 7 लाख विद्यार्थी शिक्षण घेतात. तसेच महात्मा गांधींच्या तत्त्वज्ञानानुसार ग्रामीण भारताचा सामाजिक-आर्थिक विकास साधण्यासाठी एका नमुनेदार ग्रामीण विद्यापीठाच्या

निर्मितीचाही पुरस्कार सदर धोरणामध्ये केला आहे. 1992 मध्ये भारताचे तत्कालीन पंतप्रधान पी. व्ही. नरसिंह राव यांच्या सरकारने जनार्दन रेड्डी यांच्या अध्यक्षतेखाली शैक्षणिक धोरणाचा पुनर्विचार करण्यासाठी नेमलेल्या समितीने राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 1996 (1992 सालच्या बदलांसह) प्रसिद्ध केले होते.

भारताचे तत्कालीन पंतप्रधान मनमोहन सिंग यांच्या किमान समान कृतिशील कार्यक्रमाधारित 2005 मध्ये नवे शैक्षणिक धोरण आखले गेले. त्यामध्ये व्यावसायिक व तांत्रिक कार्यक्रमांसाठी देशभरात समान प्रवेश परीक्षा सुरू केली. 18 ऑक्टोबर 2001 च्या भारत शासन निर्णयान्वये, जेईई, एआयईई (राष्ट्रस्तरीय) आणि एसएलईई या तीन परीक्षायोजना आखल्या गेल्या. त्यामुळे बदलते प्रवेश-अटी असताना व्यावसायिक स्तर राखण्याची दक्षता घेणे सोपे झाले. तसेच आशय पुनरावृत्ती, अनेक प्रवेश परीक्षांना सामोरे जाणे, मनोकायिक व आर्थिक बोजा विद्यार्थी-पालकांवर पडणे इत्यादी बाबींपासून सुटका झाली. त्यानंतर 2009 मध्ये मनमोहन सिंग यांनी निरक्षर व नवसाक्षरांसाठी (15 वर्षीय व त्यापेक्षा मोठ्यांकरिता) ही केंद्र शासनपुरस्कृत शैक्षणिक योजना सुरू केली. 2001 च्या जनगणनेनुसार 12.7 कोटी भारतीय प्रौढ साक्षर झाले. त्यांपैकी 60 स्त्रिया, 23 टक्के अनुसूचित जाती आणि 12 टक्के अनुसूचित जमाती या योजनेचा लाभ घेऊन साक्षर झाले आहेत.

राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा अभियान (आरयूएसए) ही राज्याच्या उच्च शिक्षणात सुधारणा करण्यासाठी वास्तू उभारणीसाठी नियोजन व नियंत्रण करणारी मोहीम केंद्र शासनाने 2013 मध्ये सुरू केली. त्यामध्ये राज्यातील दर्जेदार विद्यापीठ व महाविद्यालयांना स्वायत्तता देऊ केली आहे. या अभियानाने परीक्षा सुधारणा अपेक्षित केले आहे. तसेच भारतीय विद्यापीठ व विदेशी विद्यापीठांमध्ये शैक्षणिक प्रगतीसाठी संवाद साधणे गरजेचे आहे असे म्हटले आहे.

2014 नंतर विद्यमान पंतप्रधान नरेंद्र मोदी यांनी पूर्वीच्या राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणाचा आढावा घेण्यासाठी 2016 मध्ये माजी केंद्रीय सचिव टी. एस. आर. सुब्रमण्यम यांच्या अध्यक्षतेखाली राष्ट्रीय धोरण समिती नेमली. या समितीने पूर्वीच्या पुढील शासकीय योजनांचा आढावा घेतला: डिस्ट्रिक्ट प्रायमरी एज्युकेशन प्रोग्रॅम (डीपीईपी), सर्वशिक्षा अभियान (एस.एस.ए, 2001), राइट टू एज्युकेशन (आरटीई), नॅशनल प्रोग्रॅम फॉर एज्युकेशन फॉर गर्ल्स अँड

एलिमेंटरी लेव्हल (एनपीईजीईएल), राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आर.एम.एस.ए, 2009), माध्यमिक स्तरावर अपंगांसाठी इन्क्लुझिव एज्युकेशन फॉर दी डिसेबल्ड फॉर सेकंडरी स्टेज (आयई.डी.एस.एस), प्रौढ साक्षर भारत (अॅलड एज्युकेशनल इंडिया), उच्च शिक्षण विकासासाठी राष्ट्रीय उच्चतर शिक्षा अभियान (आरयूएसए, 2013) इत्यादी.

शासनाने 29 जुलै 2020 मध्ये नवीन राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणाला मंजुरी देऊन ते संपूर्ण देशात लागू केले आहे. इन्फोचे माजी प्रमुख के. कस्तुरीरंगन यांच्या अध्यक्षतेखाली 9 समितीय सदस्यांनी या नव्या धोरणाचा मसुदा तयार केला आहे. यानुसार शालेय शिक्षणाची रचना 10+2 एवजी 5+3+3+4 अशी करण्यात आली आहे. यामध्ये पहिली 3 वर्षे पूर्वप्राथमिक व 2 वर्षे पहिली व दुसरी असणार (वय वर्षे 3 ते 8) पुढील 3 वर्षे तीसरी ते पाचवी असणार (वय वर्षे 8 ते 11) त्यानंतरची 3 वर्षे सहावी ते आठवीपर्यंत असणार (वय वर्षे 11 ते 14) आणि शेवटची 4 वर्षे नववी ते बारावी (वय वर्षे 11 ते 14) अशा एकूण 15 वर्षांमध्ये शालेय शिक्षणाची रचना अथवा आकृतीबंध आखण्यात आला आहे. सुरुवातीचे 3 ते 6 वर्षे वयोगटात असलेले मुले आतापर्यंत शालेय अभ्यासक्रमांतर्गत येत नव्हती परंतु नवीन शैक्षणिक धोरणामुळे त्यांचा शालेय अभ्यासक्रमांतर्गत समावेश करण्यात आला आहे.

2016 मध्ये भारतीय युवकांसाठी आखलेली 'प्रधानमंत्री कौशल्य विकास योजना' ही पूर्वीच्या योजनांशी जोडल्यास युवा विद्यार्थ्यांना शैक्षणिक प्रगती साधणे या सुधारित राष्ट्रीय धोरणाने शक्य होणार आहे. या धोरणात संशोधनावर जास्तीत जास्त भर देण्यात आले असून विद्यार्थ्यांची गुणवत्ता वाढविणे, त्यांचा सर्वांगीण विकास करणे, त्यांना स्वतःच्या पायावर उभे करणे, त्यांच्या आर्थिक विकासाला प्राधान्य देणे इत्यादी कार्यक्रम आखण्यात आले आहे. सर्वांना शिक्षण, चांगले शिक्षण, शिक्षणाची समान संधी, आवाक्यातील शिक्षण आणि शिक्षणक्षेत्रातील सर्व घटकांचे उत्तरदायित्व निश्चित करणे या प्रमुख पाच सूत्रांवर धोरणाचा पाया आहे.

राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 2020 वैशिष्ट्ये:

सुमारे 34 वर्षांनंतर राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणामध्ये बदल करण्यात आले असून भाषा शिक्षण, व्यवसाय शिक्षण इत्यादी विषयांमध्ये वैशिष्ट्यपूर्ण बदल करण्यात आले आहे. धोरणातील महत्त्वपूर्ण वैशिष्ट्ये पुढील प्रमाणे:

- कोणत्याही विद्यार्थ्यांवर कोणतीही भाषा लादली जाणार नाही.
- 'एक भारत श्रेष्ठ भारत' या उपक्रमांतर्गत इयत्ता सहावी ते आठवीपर्यंतच्या विद्यार्थ्यांना 'भारतातील भाषा' या प्रकल्पामध्ये सहभाग घेता येणार आहे
- विद्यार्थ्यांना माध्यमिक शिक्षण स्तरावर विविध विदेशी भाषांचा पर्याय दिला जाणार आहे.
- सुमारे 8 भारतीय भाषांमध्ये इ-कोर्सेस उपलब्ध होणार आहेत.
- शिक्षण विभागाद्वारे पाली, पर्शियन आणि प्राकृत भाषांसाठी एक राष्ट्रीय संस्था उभारली जाणार आहे.
- पूर्वप्राथमिक शाळांसाठी एनसीइआरटीकडून अभ्यासक्रम आखला जाणार असून हा अभ्यासक्रम देशातील सर्व पूर्व प्राथमिक शाळांना लागू असणार आहे. तसेच पूर्वप्राथमिकचे शिक्षण आंतरराष्ट्रीय दर्जाचे करण्याचे प्रयत्न आहे.
- इयत्ता तीसरीपर्यंतच्या विद्यार्थ्यांना संख्या व अक्षरांची ओळख होऊन त्यांना ते वाचता येईल, यावर भर देऊन यापुढे हेच मुलभूत शिक्षण म्हणून मानले जाणार आहे.
- ज्या ठिकाणी अंगणवाडी आणि पूर्व प्राथमिक शाळा नवीन अभ्यासक्रम राबविण्यात अपयशी ठरणार आहेत, त्या ठिकाणी सर्व सोयी-सुविधांसह नवीन स्वतंत्र पूर्व प्राथमिक शाळा उभारली जाणार आहे.
- सरकारी व खाजगी शाळांमधील शिक्षणात समानता असणार आहे
- यापूर्वीच्या धोरणामध्ये 6 ते 14 वर्षे वयोगटातील विद्यार्थी शिक्षण हळू कायद्याच्या कक्षेत येत होते मात्र नवीन धोरणानुसार 3 ते 14 वर्षे असा वयोगट करण्यात आला आहे.
- दिव्यांग विद्यार्थ्यांसाठी भारतीय सांकेतिक भाषा (आयएसएल) संपूर्ण देशात प्रमाणित करण्यात येणार आहे.
- नवीन धोरणानुसार शालेय निकाल पत्रकावर केवळ गुण, श्रेणी व शिक्षकांच्या शेरा यांव्यतिरिक्त त्यामध्ये स्वतः विद्यार्थी व वर्गमित्र यांचाही शेरा असणार आहे. तसेच शिक्षणाबरोबरच विद्यार्थ्यांचे जीवन कौशल्येसुद्धा नमूद करावे लागणार आहे
- पूर्वीच्या धोरणानुसार दहावी (एसएससी) आणि बारावी (एचएचसी) या दोन बोर्डांच्या परीक्षा घेतल्या जात होत्या. त्या परीक्षा वर्षातून एकदाच होत होत्या. मात्र आता नवीन धोरणानुसार इयत्ता नववी ते बारावीपर्यंतच्या परीक्षा वर्षातून एकदा न घेता, त्या

एकूण 8 शालेय अर्धवर्षामध्ये (सेमीस्टर) विभागून घेण्यात येणार आहे.

- पूर्वीच्या धोरणानुसार विद्यार्थ्याला दहावीनंतरचे शिक्षण कला, वाणिज्य व विज्ञान यांपैकी कोणत्याही एकाच शाखेत प्रवेश मिळून त्याला त्याच शाखेतील विषय शिकविले जात होतेय नवीन धोरणात बदल केले असून विद्यार्थी एखाद्या शाखेत प्रवेश घेऊन दुसऱ्या शाखेतील काही आवडीचे विषयही त्याला घेता येणार आहे. उदा., कला शाखेत प्रवेश घेऊन विज्ञान शाखेतील जीवशास्त्र इत्यादी किंवा वाणिज्य शाखेतील सहकार इत्यादी विषय घेता येईल.
- या धोरणांतर्गत शालेय शिक्षण, उच्च शिक्षण यांबरोबरच कृषी शिक्षण, वौद्यकीय शिक्षण, कायदा शिक्षण, तांत्रिक शिक्षण इत्यादी व्यावसायिक शिक्षणाला कार्यक्षेत्रात आणले आहे.
- देशातील महाविद्यालयांना श्रेणी देण्यासाठी उच्च शिक्षण नियामक ही संस्था स्थापली जाणार आहे.
- नवीन शैक्षणिक धोरणानुसार विदेशी विद्यापीठांना भारतामध्ये आपल्या शाखा उघडता येणार आहे.
- शालेय शुल्क आकारणी रकूम निश्चित केली जाणार आहे.
- सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक, लिंग, अपंगत्व इत्यादी घटकांमध्ये भेदभाव न करता आर्थिक दृष्ट्या वंचित गटांवर विशेष भर दिला जाईल.
- शिक्षकांची भरती सक्षम पारदर्शक प्रक्रीयेद्वारे केली जाऊन बहुस्रोत नियमित कामगिरी मूल्यांकन, उपलब्ध प्रगतीचे मार्ग इत्यादी गुणवत्तेवर आधारित शिक्षकाची शैक्षणिक प्रशासक म्हणून बढती दिली जाईल.
- अनुसूचित जाती, अनुसूचित जमाती, ओबीसी आणि एसईडीजी या प्रवर्गातील विद्यार्थ्यांच्या गुणवत्तेस प्रोत्साहन दिले जाईल, तसेच राष्ट्रीय शिष्यवृत्ती पोर्टलचा विस्तार करून शिष्यवृत्ती प्राप्त विद्यार्थ्यांचा मागोवा घेतला जाईल.
- धोरण तयार करताना कोविड-19 चा प्रसार लक्षात घेऊन पर्यायी शैक्षणिक पद्धतींचा व्यापक विचार करण्यात आला. त्यानुसार सर्वकश महाजालकावरील

शिक्षण आणि डिजिटल शिक्षण या पर्यायी शैक्षणिक सज्जता सुनिश्चित केली जाणार आहे.

निष्कर्ष

देशातील शाळाबाह्य मुलांना मुख्य शैक्षणिक प्रवाहात आणणे, शिक्षणावरील 4.43 टक्के जीडीपीवरून 6 टक्के वाढ करणे, मुलांच्या जन्माच्या वेळेची परिस्थिती अथवा अन्य पाडवभूमीमुळे कोणताही मुलगा-मुलगी शिकण्याच्या आणि आपल्यातील उत्कृष्टतेची संधी गमाविणार नाही व्यावसायिक शिक्षणासह उच्च शिक्षणामध्ये सकल नोंदणी गुणोत्तर 26.6 टक्क्यांवरून 50 टक्क्यांपर्यंत वाढविणे (2035), देशातील सर्व अशिक्षित तरुण व प्रौढ यांना 100 टक्के साक्षर करणे इत्यादी राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरण 2020 चे उद्दिष्ट आहे. त्या प्रमाणे एकवीसाव्या शतकातील प्रमुख कौशल्ये, आवश्यक शिक्षण आणि चिकित्सात्मक विचार विद्याश्र्यांमध्ये वाढविण्यासाठी अभ्यासक्रम कमी करणे आणि अनुभवातून शिक्षणावर अधिक लक्ष केंद्रित करून विद्याश्र्यांचा सर्वांगीण विकास करणे हा शिकविण्याच्या पद्धतीचा व शालेय अभ्यासक्रमाचा उद्देश आहे. 15 वर्षात महाविद्यालयांची संलग्नता प्रणाली पुसून टाकली जाईल आणि महाविद्यालयांना श्रेणीबद्ध स्वायत्तता देण्याची यंत्रणा राबविली जाईल. भविष्यात प्रत्येक महाविद्यालयाचा स्वायत्त पदवी देणारा महाविद्यालय किंवा विद्यापीठाचा घटक म्हणून विकसित होणे अपेक्षित आहे.

References:

1. Kumar, K. (2005). Quality of Education at the Beginning of the 21st Century: Lessons from India. Indian Educational Review, 40(1), 3-28.
2. Draft National Education Policy 2019,
3. <https://innovate.mygov.in/wpcontent/uploads/2019/06/mygov15596510111.pdf>
4. Aithal, P. S. & Aithal, Shubhrajyotsna (2019). Analysis of Higher Education in Indian National Education Policy Proposal 2019 and its Implementation Challenges. International Journal of Applied Engineering and Management Letters (IAEML), 3(2), 1-35. DOI: <http://doi.org/10.5281/Zenodo.3271330>.
5. National Education Policy 2020.
6. https://www.mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/nep/NEP_Final_English.pdf referred on 10/08/2020.

भारतीय तत्त्वज्ञान और संत कबीर का योगदान

प्रा.डॉ.मानीतकुमार अमृतराव वाकळे

खोलेश्वर महाविद्यालय, अंबाजोगाई, जि. बीड.

DOI- 10.5281/zenodo.7053594

पृष्ठभूमि :

प्राचीन भारतीय तत्त्वज्ञान का आदर्श रूप वैदिक साहित्य, पुराण, रामायण, वेद, उपनिषद, गीता आदि ग्रंथों में दिखायी देता है, इसके प्रति भारतीय जन सामान्य लोगों में आदरभाव, श्रद्धा दिखायी देती है। आज भी वह श्रद्धा भावनाएँ भारत तथा अन्य देश के लोगों में दिखायी देता है। मूलतः यह तत्त्वज्ञान हिंदू धर्म संस्कृति के रूप में सामने आया इसी के अन्य रूप विभिन्न संप्रदायों में अधोरेखित हुए। इसका मूल कारण कुछ लोगों के अधिकारवादी तथ स्वार्थनीति के चलते इस तत्त्वज्ञान में कर्मकाण्ड, चमत्कार, अनिष्ट रूढ़ी परंपराओं को अपने स्वार्थ हेतु प्रचार-प्रसार किया गया। परिणाम स्वरूप इससे सामान्य लोगों का शोषण हो रहा था। जन सामान्यों में आक्रोश भाव जागृत हो रहा था। स्वाभाविक रूप से लोग अन्य पथ का निर्माण करने के प्रति रुचि दिखाने लगे। सामान्य लोगों की इसी बैचेनी तथा अस्थिरता के चलते मूल भारतीय तत्त्वज्ञान का नये रूप से बीजावपन होने लगा। यह संप्रदाय आगे चलकर धर्म के अवतार में विकसित हुए। सूफी संप्रदाय प्राचीन काल से आज तक दिखायी देते हैं। इन सभीयों का मूल तत्त्वज्ञान में ही समाविष्ट है और यही भारतीय तत्त्वज्ञान के नाम से परिचित है।

जैन धर्म तत्त्वज्ञान :

जैन धर्म का उदय रहस्यपूर्ण ढंग से हुआ। ऋग्वेद के ऋचाओं में दो जैन तीर्थकारों का नामोल्लेख दिखायी देता है। विष्णु तथा भागवत पुराण में ऋषभों का परिचय नारायण अवतार में है। जैनों की ऐसी धारणा है कि उनकी धार्मिक व्यवस्था 24 तीर्थकारों के उपदेशों से संपन्न है। 23 वे तीर्थकार पार्श्वनाथ जो महावीरजी के 250 वर्ष पूर्व होकर गये हैं। वे वाराणसी के राजा अश्वसेन के पुत्र थे। जैन धर्म के आखिरी तीर्थकार वर्धमान महावीर थे। डॉ. शिवकुमार वर्माजी के मतानुसार, "महावीर स्वामीने भी अपने धर्म का प्रसार लोकभाषा के माध्यम से किया।" इस प्रकार जैन धर्म के अनुयायीयों के अपने धार्मिक सिद्धांतों को ज्ञान अपभ्रंश में प्राप्त हुआ, वैसे तो जैन उत्तर भारत में जहाँ जहाँ फैले रहे किन्तु आठवीं से तेरहवीं शताब्धी तक कनियावाड गुजरात में इनकी प्रधानता रही, वहाँ के चालुक्य राष्ट्रकुट और सोलंकी राजाओं पर इनका पर्याप्त प्रभाव रहा। महावीर स्वामी का जैन धर्म, हिंदू धर्म के अधिक समिप है। जैनों के यहाँ भी परमात्मा तो है पर वह सृष्टि का नियामक न होकर चित्त और आनंद का स्रोत है। उसका संसार से कोई संबंध नहीं। वही प्रत्येक मनुष्य अपना साधना और पैरुष से परमात्मा बन सकता है उसे परमात्मा से मिलने की आई आवश्यकता नहीं। इन्होंने जीवन के प्रति श्रद्धा जगाई और उसमें आचार की सूत्र भित्ति की स्थापना की। अहिंसा, करुणा, दया और त्याग का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान बताया, त्याग इन्द्रियों के अनुशासन में नही कष्ट सहन में है। उन्होंने उपवास तथा व्रतादि ब्रह्म साधनापर अधिक बल दिया और कर्मकाण्ड की जटिलता को हटकार ब्राह्मण तथ शुद्र को मुक्ति समान भोगी ठहराया। जैन मुनियों ने अपभ्रंश में प्रचूर रचनाएँ लिखी जो कि धार्मिक है। इनमें संप्रदाय की रीति-नीति का पटाबद्ध उल्लेख है। अहिंसा, कष्ट, सहिष्णुता, विरक्ति और सदाचा की बातों का इनमें वर्णन है।" (डॉ. शिवकुमार वर्मा हिंदी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ-पृ.36)

जैन संप्रदाय का प्रमुख ग्रंथ 'समयसार' हैं जो अत्यधिक प्राचीन तथ महत्वपूर्ण है। वैदिक काल में जो स्थान वेदों का

है, बौद्ध साहित्य में त्रिपिटकों को हैं वही स्थान जैन समयसार तथा आगमों को है।

बौद्ध धर्म :

बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध हैं। उनका असली नाम सिद्धार्थ सिद्धोधन शाक्य है। उनके पिताजी सिद्धोधन कपिल वस्तु राज्य के राजा थे। सिद्धार्थ गौतम बुद्ध कैसे हुए ? सका तिहास अत्याधिक ज्ञानवर्धन है। कपिलवस्तु के राजा सिद्धोधन उनके पिता थे। उनका साम्राज्य गणराज्य पद्धती से चलता था। राज्य क सैनिकों का संघ राज्य की रक्षण का जिम्मेदारी उठाता था। उन्हें इस काम में पूर्ण स्वाधिनता अर्पित की गई थी। राजा तथा सैनाप्रमुख आपत्ती के कामों में दखलअंदाजी नहीं करते। शाक्य और कालियों के दो राज्य थे। जिनके बीच में से एक नदी बहती थी। जिसका नाम था राहिणी नदी। इन दोनों साम्राज्यों को रोहिणी नदी का पाणी मिलता था। इसी पाणी पर दोनों राज्यों का जनजीवन निर्भर था। एक समय ऐसा आया जहा दो वर्षों तक अकाल होने से नदी का पाणी कम होता गया जिसकारण दो राज्यों में पाणी विभाजन पर संघर्ष होन लगा। संघर्ष का परिणाम युद्ध में हुआ। शाक्य सैनिकों के दल से एक सभा का आयोजन किया गया जिनमें 18 वर्ष की आयुवाले सिद्धार्थ भी जवान, सैनिक बनकर खड़े थे। तत्कालिन समय में ऐसी धारणा थी की राज्य का कोई भी युवक अपना 18 वर्ष आयु पूर्ण करता है तो में अपनी सहभागिता देगा। फिर चाहे वो युवक सामान्य परिवार से हो या राजपरिवार से फौज में भर्ती होना उसके लिए अनिवार्य था।

संघ के सैनापती ने रोहिणी नदी के तट पर खड़े होकर कोलियों के विरोध मे की जा रहे युद्ध की घोषणा की तथा सभी सैनिकों को इस संदर्भ में अपने मत/विचार रखने की अपील की। युद्ध के संबंध में किसी को कुछ कहना है ? या युद्ध के लिए किन लोगों का समर्थन है यह प्रश्न तीन बार पूछे सिद्धार्थ को छोडकर सभीयों ने युद्ध का समर्थ किया। सेनापति द्वारा युद्ध के विरोध पर अपना मतलब पूछे जाने पर सिद्धार्थ खड़े हुए और इसपर अपना मतव्य रखते हुए

उन्होंने कहा - 'युद्ध करने से अच्छा है हम आपसी विचार विमर्श कर पाणी का विभाजन क्रम क्रम से करें जिससे दोनों राज्यों की पाणी की समस्या का समाधान हो सके। युद्ध यह समस्या का समाधान नहीं हो सकता। युद्ध से समस्या छुटेगी नहीं बल्कि और गंभीर होती चली जाएगी। और इससे दोनों राज्यों के केवल हानी ही होगी। रोहिणी नदी का पाणी केवल शाक्य तथा कोलीय राज्यों का ही नहीं है बल्कि दोनों राज्यों में रहनेवाले पशु, पक्षी, प्राणी, व्रक्षों का भी उसपर समानता से अधिकार है। युद्ध से यह प्रश्न हल नहीं होगा यही कारण है कि मैं युद्ध के खिलाफ हूँ। सिद्ध के इस उत्तर से सेनापति क्रोधित हुए और युद्ध के खिलाफ अपना विराध दर्शाने का परिणाम यह था कि एक तो सिद्धार्थ अपनी वंशपरंपरा से आयी संपत्ति संघको भेंट दें या फिर दूसरा राज्य छोड़कर जाए। दोनों दंड सुनकर सिद्धार्थ ने अभिमान से घोषित किया कि किसी भी हालत में मैं अपना निर्णय पीछे नहीं लूँगा साथ ही उन्होंने यह भी स्वीकृत किया कि मैं गृहत्याग करूँगा। कुछ लोगों ने उन्हें सलाह भी दी कि आप संपत्ति को हस्तांतरित करें लेकिन इसके उत्तर में सिद्धार्थ कहते हैं की, उस संपत्तिपर मेरा अधिकार ही नहीं है वह मेरे पिता की है। अपने अश्वपर बैठकर अनुचर के साथ साम्राज्यकी सीमाओं तक पहुँचे वहा उन्होंने अपने राजपोशाख अभूषण उतरवाएँ तलवार से अपने सुनहरे बाल काटे और सामान्य नागरीक की तरह राज्य की सीमा को लाँधा। उसके बाद तपस्या कर उन्होंने ज्ञान की प्राप्ति की। बोधगया इस स्थान पर पिंपल के पेड़ के निचे सिद्धार्थ जब गौतम बुद्ध हुए और उन्होंने बौद्ध तत्वज्ञान की खोज की। वही धर्म याने पंचशिल, आष्टांगिक मार्ग और दसपारमितों का ज्ञान संपूर्ण विश्व को समझाया।

चार आर्यसत्य :

1. दुःख है
2. दुःख को कारण होता है
3. दुःख मिटाया जा सकता है
4. दुःख मिटाने के मार्ग

इच्छाओं का त्याग, आष्टांग मार्ग और दसपारमितों द्वारा जीवन में आनंद की अनुभूति ली जा सकती है।

साहित्य त्रिपिटक :

1. अभिधम्म पिटक
2. विनय पिटक
3. सुत्त पिटक

इनमें गाथाओं तथा सुत्ताओं का संकलन है जिन्हें बौद्ध तत्वज्ञान कहा जाता है। इसी की पहचान पूरे विश्व में भारतीय तत्वज्ञान के रूप में है। इस संदर्भ में लोकमान्य टिलक अपने ग्रंथ 'गीता रहस्य' में कहते हैं - "जैन धर्म के अनुरूप ही बौद्ध धर्म यह वैदिक धर्म है जो अपने पिता से चाहिए उतना धन लेकर कुछ कारणों के वजह से अलग हुआ बेटा है। अर्थात् वह फिरंगी नहीं है बल्कि ब्राह्मण धर्म से उत्पन्न हुए अन्य शाखा है।" (लो. बाल गंगाधर टिलक- गीता रहस्य, पृ.क्र.524)

ख्रिश्चन धर्म पर बौद्ध धर्म का प्रभाव :

बौद्ध धर्म का वैश्विक स्तर पर प्रचार-प्रसार सम्राट अशोक ने किया। इस सम्राट ने बौद्ध धर्म को राजशास्त्रय देकर भारत, ग्रीस, सिरिया, मॅसिडेनिया, सिरियन, इपिसस, ब्राम्हदेश, सिलोन आदि विविध राष्ट्रों में बौद्ध धम्म प्रचारक भेज दिए। ऑथेकोसियस यह सिरिया का राजा बौद्ध था जिकारण उस देश में बौद्ध धर्म का प्रचार में सहायता हुई। भगवान बुद्ध के बाद लगभग 550 वर्ष बाद येशू ख्रिस्त का जन्म पॅलेस्टाईन में हुआ। वह सिरिया का भुभाग था। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी के अध्यापक कृष्णराव अर्जून केळुसकर कहते हैं, इस दृष्टि से देखा जाए तो बौद्ध धर्म का येशू ख्रिस्त के पहले ही प्रचार हुआ था। दूसरा यह कि जॉन बापस्तित माम से एक यहूदी महासाधू पॅलेस्टाईन में हुआ जिसने बासीस्मा नाम का विधि ऐसेनी संप्रदाय के लोगों से लिया। इसका कारण सह था कि यहूदी लोगों में यह विधि नहीं थी। येशू ख्रिस्त जॉन महासाधु के पास कुछ दिनों के लिए रहे थे वह इतिहास में दर्ज है। येशू ने 'बासिस्मा' यह विधि प्रथमतः जॉन साधु ने ग्रहण की थी यह सप्रमाण सिद्ध है। इसी विधि को बौद्ध लोग अभिषेक नाम से संबोधित करते हैं। बौद्ध धर्म की शिक्षा लेते वक्त यह विधि करना होता है तथा यह करते वक्त मनुष्य को बुद्ध, धर्म और संघ इन नियमोंपर पूर्ण श्रद्धा है ऐसी प्रतिज्ञा भी लेनी होती है, अर्थात् जॉन बापस्तित यहूदी महासाधू के माध्यम से बौद्ध धर्मियों का अभिषेक विधि येशू ख्रिस्त ने लिया। इसी कोआगे बासिस्मा नाम दिया गया। इस विधि को ख्रिश्चन धर्म में अनन्यसाधारण महत्त्व है। इस संदर्भ में डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी कहते हैं की, "ख्रिश्चनोंने बौद्ध तत्वज्ञान की नकल की है इसमें कोई संदेह नहीं है।" (डॉ. बाबासाहब आंबेडकर - डॉ.आ.आं.लेखन आणि भाषणे खंड-18, भाग-3, पृ.553)

उपयुक्त सभी मुद्दों को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि ख्रिस्त का जन्म तत्कालिन बौद्ध राष्ट्र में हुआ इसीकारण उनपर बौद्ध मतप्रणाली/विचारधाराओं में नैतिक मूल्य दिखायी देता है। येशू ख्रिस्त के बाद भी ख्रिस्ती संप्रदाय में अंधःश्रद्धा,कर्मकांड आदि मानव घाटक चिजोंको महत्ता हासिल हुई किन्तु इस धर्म में युनिटेरियन, और डेईस्ट इन दो पंथों में विज्ञानवाद, प्रकृति धर्म सत्य, प्रज्ञा, जैसे तत्त्वों के प्रति एकनिष्ठता दिखायी देती है। ये तत्व बौद्ध धर्म से येशू ख्रिस्त के माध्यम से दोन्हो पंथों में प्रचलित हुई।

संत साहित्य का उद्भव :

बौद्ध धर्म के बाद बौद्ध धर्म का अपभ्रंश रूप माने सिद्ध, नाथ संप्रदाय तथा संत साहित्य भारतीय साहित्य में 8 वी शताब्दी से सिद्ध साहित्य का उद्भव दिखाई देता है। सिद्ध साहित्य का अर्थ क्या ? इसमें तात्पर्य है कि बौद्ध धर्म का बिगड़ा हुआ रूप माने सिद्ध साहित्य। बौद्ध धर्म के हिनयान, महायान, वज्रयान, सहजयान ऐही शाखाओं में कालांतर में विभाजन हुआ।

नाथ संप्रदाय का उदय :

वज्रयान की सरल साधना नाथ संप्रदाय के रूप में विकसित हुई। जीवन को कर्मकांड के जाले से मुक्त कर सहलता से

लाने का श्रेय नाथों को जाता है। नो नाथों के नुतन विचारों की स्थापना की। गोरखनाथ ने नाथ संप्रदाय को नये भारतीय मनोवृत्ति के अनुरूप बनाया। विकृत परंपराओं का विरोध किया जन सामान्य लोगों के जीवन शैली को अधिक संयमी, सदाचारी तथा अनुशासनशील मार्ग दिखाया। इस का श्रेय गोरखनाथ जी को जाता है।

संतों के लिए सदाचार धर्म की पृष्ठभूमि तैयार की तथा मूल भारतीय तत्वज्ञान का बीजोरोपन किया गया। परिणाम स्वरूप भारत में हजारों संत बने और भारत के पुर्ननिर्माण के लिए सहायता मिली।

संत परंपरा :

महाराष्ट्र में बाराहवीं शतकों में महानुभाव संप्रदाय, वारकरी संप्रदाय की शुरुआत हुई उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान से अधिक प्रेम को महत्ता दी। उसका रूप सगुण तथा निर्गुण था। संत नामदेव, संत तुकाराम, संत ज्ञानेश्वर, संत रविदास, कबीर आदि संतोंने मानवतावाद का प्रचार-प्रसार किया। जनसामान्य लोगों को सचेत कर मूल भारतीय तत्वज्ञान को पियोया। उन्होंने प्रेरित कर उन्हे आत्मविश्वास निर्माण किया। परकियों के विरोध में खड़े रहने के लिए सशक्त बनाया। उसी का परिणाम भारत में राजकिय क्रांती हुई, सामान्य जनता पराधिनता से मुक्त हुई। छत्रपती शिवाजी महाराज, राजा रंजित सिंह महाराज नैतो ने संतों के मार्गदर्शन से अपना साम्राज्य स्थापित किया।

संत रविदास :

वाराणसी, उ.प्र.में जन्में रवीदास जी सत्य, न्याय, समानता जैसे तत्वों को स्वीकृत कर छुआछूत, उँचनिच के विरोध में विद्रोह करनेवाले थे। उन्होंने तत्कालिन लोगों में बंधुभाव जाग्रत किया। वे कहते हैं-

“विद्वान मत जुजिए, जो हो गुण हिण
चरण छुवों चंडाल के जो हो गुणपरवीण”
‘समानता’ पर वे कहते हैं -
“ऐसा चाहूँ राज मैं जहाँ सबन को लिये अन्न
छोटा-बडा सब सम बसे रैदास रहे प्रसन्न”

गुरु नानकदेव :

सिख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक देव तत्कालिन ‘तलवंडी’ नामक गाँव के पटवारी थे। उन्हें ऐसा लगता कि उनका बेटा किसी बड़े ओहदे पर नौकरी करें। इसीलिए उन्होंने उसे पाठशाला में डाला परंतु नानक देव धर्मिक व्रत्ति के होने के कारण उनका पढाई में मन नहीं लगा। पिताजी ने उन्हें खेत में काम के लिए लगाया लेकिन वहीं पर भी नानक देव खेत में पक्षियों की सेवा में दिन गुजारते और कहते “राम की खेती राम का देश खाओं खाओं चिडिया भर पेट।” नानक देव यह खत्री हिंदू थे। उनपर नामदेव, रवीदास, कबीर जैसे संतों का प्रभाव था। तुर्की के शासन काल में हिंदू मुसलमान के बीच छिड़े संघर्षों के कारण हिंदू-मुसलमानों के बीच एकता प्रतिपादित करने का काम उन्होंने किया। उन्हें फारसी, संस्कृत तथा हिंदी भाषा का ज्ञान था। उन्होंने हिंदू तथा मुसलमान धर्मोंका अध्ययन किया था। पैरों पर चलकर उन्होंने पुरे देश में भ्रमण किया था। अफगान, मक्का, मदिना

जसैं स्थलोंपर भी वे गये थे। बाद में पंजाब में हिंदू-मुस्लिम तथा नामदेव, रविदास कबीर जैसे संतों के मार्गदर्शन से उन्होंने सिख धर्म की स्थापना की।

संत कबीरदास का योगदान :

संत कबीरदास का जन्म सन 1455 में वाराणसी में हुआ। उनके जन्म तथा मृत्यु के संदर्भ में विद्वानों में संभ्रम है। कबीर विधवा के पेट से जन्में माने जाते थे जिन्हे नीरू-नीमा नामक जूलाहा दाम्पत्य ने ‘लहरतारा’ नामक तलाब से उठाया था। उनके विचारों के अनुसार भगवान की भक्ति निर्गुण निराकार है। प्रार्थना, उपासना, मुक्तिकी आकांक्षा शरणागति, समर्पण जैसे मार्गसे वे निर्गुण भक्ति में विश्वास रखते हैं। उनका हमरा प्रमुख उद्देश्य तत्कालिण हिंदू-मुसलमान विरोध, धर्मिक पाखंड, कर्मकांड से लोगों को बाहर निकालना। डॉ. शिवकुमार वर्मा कहते हैं - “महात्मा कबीर परम संतोपी, उदार, स्वतंत्रचेता, निर्भिक, सत्यवादी, अहिंसा सत्य और प्रेम के समर्थक, सात्विक प्रकृती, बाह्यअडंबर विरोधी तथा क्रांतिकारी थे।” (डॉ.शिवकुमार वर्मा, हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ-1137)

ऐसा कहा जा सकता है कि वे जन्मजात विद्रोही थे उनमें अदम्य साहस, प्रचंड आत्मविश्वास, तथा विलक्षण प्रतिभा थी। वे मुस्लिम शसक सिकंदर लोधी के समान भी झुके नहीं थे। मौलाना तथा पंडितों को विरोध को उन्होंने माना नहीं।

ग्रंथ : ‘बीजक’ कबीरदास जी की प्रमाणित रचना मानी जाती है जिसमें उन्होंने दोहोंद्वारा उपदेश दिये है। उपकी भाषा साधुक्की थी इसी कारण उन्हें वाणी का डिकटेटर कहा जाता था।

कबीरजी की भक्तिभावना :

कबीरदास की भक्ति निर्गुण निराकार की थी। ज्ञान तथा भक्ति के संदर्भ में हमेशा चिंतनशील रहें। कबीरदास जी को जब गुरु की जरूरत महसूस हुई उसी काल में उन्हे महात्मा रामानंद मिले वे कहते हैं -

“भक्ति द्रविड उपजि लाये रामानंद,
प्रगट की कबीर ने दाह दिशा सप्तखंड”

कबीरजी निर्गुण थे। वे भगवान के अस्तित्व को स्वीकृत करते थे किंतु निर्गुण ईश्वर के प्रति वे भक्ति करते थे जिसका कोई रूप नहीं आकार नहीं। कबीर के दोहों में वह राम दशरथपुत्र राम न होकर घट-घट वासी राम है। उनके अनुसार -

“जाति-पाति पुछे न कोई
हरि को भजे सो हरि का होई”

कबीर मानवतावादी थे। भक्ति तथा धर्म के क्षेत्र में किसी प्रकार का आडम्बर भाव उन्हें मंजूर नहीं था। उनकी भक्ति सामान्य लोगोंतक पहुँची थी। उनकी गुरु के प्रति आगाह श्रद्धा थी, उन्होंने ईश्वरसे भी गुरु को महत्त्व दिया -

“गुरु गोविंद दोनों खड्या, काकु लागु पाय,
बलिहरी गुरु अपनौ, गोविंद दिय बताय।”

तिलक लगाना, मालों को परिधान करना आदियों को उन्होंने खुलकर विरोध किया है -

“हिंदू की हिन्दवाई देखी, तुरकन की तुरकाई,
अरे इन देऊन राहत पायी”

“काकर पात्थर जोरि कै, मजित रहे बनाई
तापर मुला बांग दे क्या बहिरा तेरा खुदाई”

विद्रोही व्यक्तिमत्त्व :

कबीरजी क्रांतीकारि स्वाभाव के थे । उनको
व्यवहारिक ज्ञान अधिक भाता था । इसीलिए वे कहते हैं -

“तु कहता कागज की लेखी
में कहता आखन देखी”
जाति पाति का विरोध करते हुए कहते हैं -
“जाति पाति पूछेन को हरि को
भजै से हरि होई”
“जातिन पूछों साधू की पूँछ लीजिए ज्ञान
मोल करो तलवार का पड़ा रहन दो म्यान”

समाज सुधारक :

उनके अनुसार समाज कल्याण करना हो तो समाज को
शोषण होना नहीं चाहिए । खुद स्वयं तब संसारिक मोह
माया से मुक्त होकर ही समाज प्रबोधन किया जा सकता है -

“कबीरा खड़ा बाजार, लिए लखेटी हात
जो घर फुँके अपना वो चले हमारे साथ
पोथि पढी पढे जग मुआ पंडित भया न कोई
ढाई अखर प्रेम का पढे सो पंडित होई ।”

अंधःश्रद्धा, रूढ़ियों का विरोध :

कबीरजीने हमेशा अंधःश्रद्धा गलत रूढ़ियों का
विरोध किया । समाज को अज्ञानता में ढकेलनेवालों के प्रति
वो विद्रोही थे । तत्कालिन साधुद्वारा समाज का होता शोषण
तथा अज्ञानी लोगों की लुट उन्हें स्वीकृत नहीं थी ।

“माटी का साप बनाके पूजे लोग लुगाई
जिंदा साप कोईन पुजै लाठी ले धमकाई
जत्रा में फत्रा बिठायी तीरथ बनाया पाणी
दुनिया हुई दिवानी भैया पैसा की धुलधानी
माला फेरी, तिलक लगाके, लंबा जटा बढ़ाता है
अंतर तेरे कुफर कटारी यौं नही साबह (देव)

मिलता है ।”

अहंकार का विरोध :

वे कहते हैं -

“माटी कहें कुंभार सें तु रौदे आज माही
एक दिन ऐसा आवै मैं रौदूंगी त्वाही
दंत कहे जीभ कोहम है बत्तीस तु अकेली माई
एकबार चभ जाऊतो फिर याद ना आई
उत्तर में -

जीभ कहें दंत को, तुम है बत्तीस मैं अकेली माई
एकबार तेढी चलू तो बत्तीसी गिरजाई”

मानव ने आपस में स्नेह, बंधुभाव तथा प्रेम से रहने
की सलाह देते हुए कहते हैं -

“पाणी जैसा बुद-बुदा है माणस की जाती
पलभर में छूपजाएँ जैसा तारा भरमाती”

मनुष्य के जीवन में संयम तथा कर्तव्य संपन्न होना
चाहिए मन को शांत रखकर कर्तव्य करना चाहिए । वे कहते
हैं -

“धीरे धीरे मना, धीरे सब कुछ होय
माली सींचे सौ घडा, ऋतु आये फल होय”

अच्छा कर्म हमेशा अच्छा फल देता है । इसीलिए
मनुष्य को अच्छे कर्म करते रहना चाहिए ।

कबीरदास का रहस्यवाद :

कबीरदास का रहस्यवाद उस काल में लोगों को
समझ आए ऐसी भाषा में दिखाई देता है । आत्मा,
परमात्मा, जन्म-मृत्यू इस के प्रति रहस्य वे अपनी भाषा में
कहते हैं -

“जल में कुंभ हैं, कुंभ में जल है बाहर भीतर पाणी
फुटे कुंभ जल जल ही समाये यही तथ्य है ज्ञाणी”
मनुष्य का शरिर नष्ट होने के बाद पंचतत्व में
विलिन होता है । सीधे शब्दों में वे कहते हैं ।

“मो को कहाँ ढूँडे बंदे मै तो तेरे पास में
ना मैं देवल, ना मैं मस्जित ना काबा कैलास में
ढूँडे हुए तो पलभर में मिल हो हर साँस की साँस में
।”

मनुष्य ने आत्मचिंतन कर अपनी वाणी, मन स्वच्छ रखकर
तथा निर्माँही होकर अपना जीवन व्यतित करें । इधर उधर
न जाकर मन शुद्ध रखकर सच्ची भक्ति करने का संदेश
कबीरदासजी अज्ञानी मनुष्य को देते हैं ।

स्त्री भ्रूण हत्या : एक सामाजिक समस्या

प्रा.डॉ.मधु प्रभाकर खोब्रागडे

सहयोगी प्राध्यापक, जालना समाजकार्य महाविद्यालय, जालना.

ई-मेल —prof.khobragade@rediffmail.com

DOI- 10.5281/zenodo.7053605

ऐतिहासिक पार्श्वभूमी :

कोणत्याही समाजाचे सम्यक आकलन होण्यासाठी त्या समाजातील स्त्रियांच्या दर्जाचा अभ्यास करणे आवश्यक आहे. वास्तविक समाजातील निम्मी लोकसंख्या स्त्रियांची असून समाजाच्या जडण-घडणीत तिचे योगदान महत्वाचे आहे. समाजशास्त्रीय दृष्टिने दर्जा म्हणजे एखाद्या विशिष्ट समाजव्यवस्थेत विशिष्ट काळी विशिष्ट व्यक्तीला समाजात असेलेले स्थान होय. समाजव्यवस्थेत व्यक्तीला जे स्थान असते त्यानुसार त्यांना काही कार्य करावे लागते. म्हणजेच भूमिका पार पाडाव्या लागतात. समाजातील सर्व व्यक्तींचा दर्जा समान मानला जात नाही. काहीचा दर्जा श्रेष्ठ तर काहींचा कनिष्ठ मानला जातो. हा भेदभाव विविध निकषांचा (वय, वर्ण, जात, वंश) आधार केला जातो. व्यक्तीच्या लिंगाच्या आधारे असा भेदभाव केला जातो. लिंगभेदच म्हणजेच स्त्री-पुरुष हा भेद हा दोघांचेही महत्व सारखेच आहे. त्यामुळे उभयतांच्या बाबतीतील श्रेष्ठ व कनिष्ठ असा भेद करणे ही वास्तववादी ठरत नाही.

काही मोजक्या समाजाचा अपवाद वगळता जगात सर्वत्रच पुरुषप्रधान संस्कृती किंवा जीवनपध्दती असून स्त्रियांना पुरुषांच्या बरोबरीने स्थान व दर्जा मिळालेला दिसत नाही. मात्र ऐतिहासिक कालखंडात जगात बहुतेक सर्वत्रच समाजात पुरुषप्रधान जीवनपध्दती प्रचलित झाली असून पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांचे स्थान व दर्जा निम्न मानलेला दिसून येतो. भारतीय समाज याला अपवाद नाही.

भारतात अगदी प्रारंभापासून पुरुषाने स्त्रीवर प्रभुत्व मिळवून कुटुंब व समाज जीवनात स्त्रीचे स्थान कनिष्ठ बनविले आहे. भारताच्या प्रदिर्घ इतिहासात सर्वकाळ स्त्रियांचा दर्जा सारखाच असणे संभव नाही. इतिहासाच्या विभिन्न कालखंडात स्त्रियांचा दर्जा विभिन्न स्वरूपाचा असल्याचे आढळते. काळानुसार भारतीय समाजाच्या सामाजिक, आर्थिक, राजकीय व मूल्यात्मक व्यवस्थेत बदल होत गेले असून त्या बदलांचा भारतीय स्त्रियांच्या दर्जावर परिणाम झालेला दिसून येतो. भारतीय स्त्रियांचा दर्जा व त्यामध्ये झालेले वेळोवेळी बदल यांच्या अभ्यास करण्यासाठी भारताच्या इतिहासाचे प्रचीन कालखंड, मध्ययुगीन कालखंड, ब्रिटिश

कालखंड व स्वातंत्रोत्तर कालखंड असे चार विभाग पडले आहे.

या काळात संयुक्त पध्दतीचा पितृसत्ताक कुटुंबपध्दतीत तुलनात्मकरीत्या पुरुषांचे महत्व अधिक वाढून स्त्रियांच्या कमी अधिकारात व सवलतीत घट होवून स्वातंत्र्यावर मर्यादा घालण्यात आल्या. उपनयन विधी व ब्रम्हचर्याश्रमात जास्त वेदाभ्यास करण्यात पूर्णतः बंधन आले नव्हते. पण त्याबाबत फारसा आग्रह व पसंती समाजाकडून दाखविली जात नव्हती. तरीही काही स्त्रिया उपनयन विधी करून अभ्यास करित. त्यात काही सद्योवध असत काही ब्रम्हवादीनी असता गागी, मैत्रेयी, अत्रेयी इ. विदुषींची या बाबतीत उदाहरणे देता येतील. या स्त्रिया पुरुष तत्ववेत्त्याशी वाद-विवाद करित. कोणालाही न जुमानता तर्कशुद्ध प्रश्नांची आपली ज्ञानपिपासूपणा करून घेत असत. अशा स्त्रिया आजन्म विवाहित राहत काही स्त्रिया ज्ञानदानाचे ही काम करित. काही गुरुपत्नीत विद्यादानाचे काम करित. त्यामुळे त्यांना गुरुपत्नी म्हणण्याऐवजी स्त्री गुरु किंवा उपाध्याय असे म्हटले जाई.

गृहास्थाश्रमीस धार्मिक विधी, पंच यज्ञ करण्यासाठी पत्नी ही सहधर्मचारीनी म्हणून महत्वाची भूमिका पार पाडावी लागत असे. बालविवाहाची पध्दती अद्यापी नव्हती. स्त्रियांना स्वतःच्या पसंती—नापसंतीचा हक्क होता. पण पूर्व वैदिक काळाच्या तुलनेत त्यावर मर्यादा होत्या. विवाहातील पाणीगृहन, सप्तपदी इ. विधी व शपथा महत्वाच्या ठरल्या. कौटुंबिक जीवनानात स्त्रियांचा पुरुषांची अर्धांगिणी म्हणून दर्जा मान्य केला जाई. पण तरीही स्त्रीला विधवा पुनर्विवाहाचा हक्क होताच. स्त्रियांना सार्वजनिक सण, उत्सवात भाग घेण्यासाठी मुक्त परवानगी असे. अर्थोत्पादन, मालमत्ता व संरक्षण यासाठी प्रामुख्याने शेती व्यवसाय असलेल्या समाजात पुत्राचे महत्व वाढत गेले. धर्माने पुत्राचे महत्व वाढवले. स्त्रियांचा दर्जा घसरू लागला. पुत्रप्राप्ती महत्वाची बनली. त्यामुळे पुरुषाचे महत्व वाढले व विवाहात कूलवान, वेदसंपन्न वर मिळला. म्हणजे वरदक्षिणा देण्याच्या प्रथेस सुरवात झाली. आर्थिकदृष्ट्या मालमत्ता समाईक असे. पित्याच्या निधनानंतर जेष्ठ पुत्राला वारसा हक्क मिळे. त्यामुळे स्त्रिला हक्क नाकारला होता. त्यातून आर्थिकदृष्ट्या तिचे परावलंबन वाढले.

मनुच्या मते स्त्रियांचा दर्जा :

मनु नावच्या राजाने मनुस्मृती नावाचा ग्रंथ लिहिला. यामध्ये स्त्रियांना एकदम हीन दर्जाची वागणूक दिली. मनुने स्त्रियांवर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्षरित्या असंख्य बंधने लादली. मनुने पुरुषांना अवास्तव महत्व दिले. मनुने त्यांच्या पुस्तकामध्ये अस नमूद केले की, पतीची सेवा करणेच हा स्त्रिचा धर्म आहे. पतीच्या पायाशीच स्वर्ग आहे. मनुने स्त्रिला तिच्या स्वतःच्याच बंदिनी बनण्यास भाग पाडले. ती स्वतःच्या घरामध्ये सतत नजरकैदेत राहू लागली. पण प्रबोधन युगात म्हणजे आधुनिक भारतीय इतिहासात स्त्रियांना शिक्षणाचे स्वातंत्र्य देण्यात आले. त्यांना पुरुषाच्या बरोबरीचे स्थान देण्यात आले. स्त्रीचा जन्म चुल आणि मुल सांभाळण्यासाठी झालाय हा गैरसमज दूर करण्यात

आला. सावित्रीबाई फुलेंनी मुलींना शिक्षणाची द्वारे खुली करुन दिली. त्यानंतरच्या प्रबोधनकारांनी मग स्त्रीला स्वतःची जाणीव करून दिली. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांनी मनुस्मृती ग्रंथाची होळी केली. या पुस्काच्या दहनाद्वारे त्यांनी स्त्रियांच्या श्रृंखला व त्यांच्यावर लादलेली बंधने यांनाही मुठमाती दिली. अशाप्रकारे मुनुने स्त्रीला हीन दर्जाची वागणूक देण्यास त्याच्या प्रजाजनास भाग पाडले व स्त्री अधःपतनाचा पाया रोवला. त्यामुळे स्त्रियांना शेकडो वर्षे प्रस्थापित रुढी, परंपराविरुद्ध लढा द्यावा लागला. सनातनी लोकांचा त्रास सहन करावा लागला. स्त्रीला स्वतःची जाणीव कधीच झाली नाही. मनुच्या मनुस्मृती या ग्रंथाचा उद्देश तोच होता, पण तरीही या कठिण परीस्थितीला भारतीय स्त्रीने ठामपणे व संघर्षपूर्ण लढा दिला. मगच स्त्रियांची परीस्थिती बदलली. स्त्रियांना आजच्या युगात मानाचे स्थान प्राप्त करुन दिले.

आज काल स्त्री :

स्वावलंबी सुशिक्षित, स्वतंत्र आहे असे चित्र रंगवले जात, पण प्रत्यक्षात स्त्रियांचा विकास किती प्रमाणात साधला, आजही प्रत्येक दिवशी वर्तमानापत्रामध्ये स्त्रियांवार होणाऱ्या अत्याचाराचे मथळेच मथळे येतात. स्त्रियांना ५० टक्के आरक्षण देण्यास विरोध करणारे सर्रास दिसतात. मग प्रश्न पडतो नियम, कायदे, विविध योजना स्त्रियांना या मानसिक, शारीरिक, नैतिक अत्याचारापासून कितपत दूर करू शकल्या, जोपर्यंत स्त्रीला आपल्या मनामध्ये असणारे गैरसमज दूर होत नाहीत. तोपर्यंत तरी हे कायदे व नियम कागदी घोडेच ठरतील.

स्त्रियांना सरकारने बनवलेल्या कायद्यांनी संरक्षण दिले, पण त्या कायद्यांची संरक्षण दिले पण त्या कायद्याची अंमलबजावणी पाहीजे. तितक्या प्रभावीपणे होतांना दिसत नाही. यासाठी काही अंशी आपली पुरुषप्रधान संस्कृतीही जबाबदार असल्याने दिसून येते. स्त्रियांना दुय्यम स्थान देण्यात ही संस्कृती जबाबदार आहे. यामुळे स्त्रीला चार भिंतीच्या आत जीवन कंठावे लागते. त्यामुळेच स्त्रीची चुल आणि मुल अशी प्रतिमा

निर्माण झाली, पण सावित्रीच्या या लेकी आता आधुनिक युगामध्ये पुरुषांच्या खांद्याला खांदा लावतांना दिसून येतात. कोणत्याही क्षेत्रात आपण कमी नाहीत हे त्यांनी सिद्ध केलेले आहे. त्यांच्यामध्ये कोणतीही गोष्ट करण्याची अद्भूत अशी क्षमता आहे.

स्त्रियांशिवाय आपण आजही कोणत्याच घराची कल्पना करू शकत नाही. आपली संस्कृती खऱ्या अर्थाने जोपासली ती स्त्रियांनीच, त्यांनीच जोपासला खरा वारसा. स्त्रियांनी या होणाऱ्या अत्याचारामध्ये आपण संरक्षण द्यायला हवे. समाज जागृत झाल्यास अशा कायद्याची गरज भासणार नाही व आपोआपच स्त्रियांचा होणारा मानसिक, शारीरिक छळ टाळला जावू शकतो. आपण जोवर ठामपणे त्यांच्या पाठीशी उभे राहू शकत नाही व मनामध्ये त्यांच्याविषयी असणारा दुराव बाजूला करत नाही, तोपर्यंत खरा बदल होणार नाही. आजही मुलगी झाल्यावर नाक मुरडले जाते. घरातील वातावरण गंभीर बनतो, स्त्री भ्रूण हत्या होतच आहे. शेकडो वर्षांपासून स्त्रियांचा हा चालणारा छळ आजही सुरू आहे. फक्त आता त्याचे स्वरूप बदलत आहे. शिक्षणामुळे त्यांच्यामध्ये खूप मोठ्या प्रमाणात बदल होत आहे व स्त्रिया स्वतःच त्यांच्या परीस्थितीमध्ये मोठा बदल घडू शकतो.

स्त्रियांना घटनेने दिलेले स्व संरक्षणाचे कायदे हे स्त्री मुक्तीच्या चळवळीमध्ये प्रभावी असू शकते. फक्त या कायद्यांना प्रभावीपणे राबवले जायला हवेत. कायद्यामुळे व शिक्षणामुळे १० वर्षांपूर्वी स्त्रीची असणारी परीस्थिती यामध्ये खूप मोठा फरक आहे. या कायद्याद्वारे स्त्रीला आज पुरुषांच्या बरोबरीने चालण्याची शक्ती मिळाली. स्त्रिया या आत्मनिर्भर बनल्या, स्त्रियांची दुबळी, आबला ही प्रतिमा आता हळुहळू बदलत आहे. स्वजागृत व शिक्षित स्त्री स्वतःच्या हक्काबद्दल जागृत झाली. आजही मुलींचा निकाल हा मुलांच्या निकालापेक्षा कितीतरी पटीने जास्त असतो.

विषय संशोधनाचे उद्देश :

१. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांच्या कौटुंबिक, आर्थिक, सामाजिक जीवनाचा अभ्यास करणे.
२. समाजात अजमनही मुलगा, मुलगी यांच्यात भेद केला जातो काय याचा अभ्यास करणे.
३. स्त्री भ्रूण हत्या करण्याचा निर्णय सर्वस्वी स्त्रीचा असतो कि पतीचा याचा अभ्यास करणे.
४. मुलगा असावाच असे प्रत्येक स्त्रीला का वाटते याचा अभ्यास करणे.
५. स्त्रीभ्रूण हत्या करण्यामागे कोणती कारणे आहेत याचा अभ्यास करणे. ^

संशोधनाचे गृहितकृत्य :

१. स्त्री भ्रूण हत्या करण्यामागे विशिष्ट धर्मातील स्त्रियांचा जास्त सहभाग असतो.
२. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रिया या निरक्षर असतात.
३. स्त्री भ्रूण हत्या करण्याचा निर्णय स्वतःचा नसून पतीचा असतो.
४. मुलाच्या बाबतीतल्या धार्मिक समजुतीमुळे स्त्रीभ्रूण हत्या केली जाते.

निष्कर्ष :

१. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये २६ ते ३० वयोगटातील स्त्रियांची संख्या जास्त आढळून आली.
२. हिंदू धर्मातील स्त्रियांची संख्या ही स्त्रीभ्रूण हत्या करण्यामागे सर्वाधिक आहेत.
३. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये गृहीणीचे म्हणजे घरकाम करणाऱ्या स्त्रियांचे प्रमाण हे सर्वात जास्त आहे.
४. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये माध्यमिक शिक्षण घेतलेल्या स्त्रियांचे प्रमाण अधिक आहे.
५. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांचे लग्न होवून ६ ते १० वर्ष झालेल्या स्त्रियांचे प्रमाण सर्वाधिक आहे.

६. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांचे महिलांमध्ये मुलगा आवडतो असे म्हणण्याचे प्रमाण सर्वाधिक आहेत.
७. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये आधीच्या मुली असणाऱ्या स्त्रियांचे प्रमाण अधिक आहे.
८. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये दोघांचा निर्णय असणाऱ्यांचे प्रमाण जास्त आहे.
९. स्त्री भ्रूण हत्या करणाऱ्या स्त्रियांमध्ये दबावाखाली न येता स्त्री हत्या करणाऱ्या स्त्रियांची संख्या जास्त आहे.
१०. स्त्री भ्रूण हत्या डॉक्टरांच्या सल्याने केली असे म्हणणाऱ्या स्त्रियांची संख्या सर्वाधिक आहेत.
६. के.सागर, मानवी हक्क
७. माणिक माने, भारतातील समकालीन सामाजिक समस्या

सुचना व उपाय :

१. गर्भपात करण्यास शासनाने संमती दिली म्हणून त्याचा दुरुपयोग करून किंवा त्याचे गैरफायदे करून घेवू नये.
२. स्त्री भ्रूण हत्या विरुद्धच्या कायद्याची अंमलबजावणी कडक करण्यात यावी यांची जाणीव प्रत्येकाला करून देण्यात यावी.
३. सोनोग्राफी तंत्राचा उपयोग स्त्री भ्रूण हत्या करण्यासाठी करण्यात येवू नये.
४. गर्भपात केल्यामुळे स्त्रियांच्या आरोग्यास धोका निर्माण होवू शकतो यांची जाणीव प्रत्येकाला करून देण्यात यावी.
५. स्त्री भ्रूण हत्या या सामाजिक समस्येचे गांभीर्य सर्व सामान्यांच्या लक्षात आणून देण्यासाठी शासनाने व्यापक प्रमाणात जनजागृती मोहिम हाती घ्यावी. ^

संदर्भ सूची :

१. अर्चना मेढेकर, महिलांचे कायदे
२. आशा परुळेकर, आशा परुळेकर
३. प्रा.प्रदिपकुमार, प्रा.प्रदिपकुमार
४. वृत्तपत्रे, प्रकाशित प्रमुख दैनिके उदा. लोकमत, सकाळ, सामना
५. विजय नाराणय जोशी, कायदे, स्त्रिया व मुलांचे मानवी हक्क

शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन

डॉ रीना मेश्राम

विभागाध्यक्ष गृह विज्ञान शासकीय महाविद्यालय जुन्नारदेव जिला छिंदवाड़ा

DOI- 10.5281/zenodo.7053644

सार

शोध पत्र में शासकीय शालाओं के नवी कक्षा के किशोरों की सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन मापनी का प्रशासन कर ५० बालक एवं ५० बालिकाओं के क्रमशः उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन समूह बनाए गए। सामाजिक व्यवहार के रूप में उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के रूप में लिया गया है प्राप्त परिणामों के अनुसार किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तावना

शिक्षा वह साधन है जो बालक को अपने समाज से मिले अधिकारों एवं उसके प्रति कर्तव्य से अवगत कराती है उसे परिवर्तनशील युग में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों को स्वीकार करना सिखाती है एवं उसे आगे बढ़ाने के लिए गतिशील बनाती है प्रतिष्ठित व्यक्तियों का अनुसरण करना सिखाती है जिससे वह समाज में एक सक्रिय व्यक्ति के रूप में अपनी अलग पहचान बनाता है और समाज में एक उच्च सामाजिक स्तर प्राप्त करता है शिशु जन्म के समय असामाजिक प्राणी होता है जैसे जैसे उसका शारीरिक और मानसिक विकास होता है वैसे वैसे उसका सामाजिक विकास भी होता है परिवार के सदस्यों, समूह के साथियों, समाज की संस्थाओं और परम्पराओं एवं स्वयं के रूचियों और इच्छाओं से प्रभावित होकर वह अपने सामाजिक व्यवहार का निर्माण करता है। सामाजिक व्यवहार में स्थिरता न होकर परिवर्तनशीलता होती है अतः समय और परिस्थितियों के अनुसार उसमें परिवर्तन होता है।

चर

स्वतंत्र चर अभिभावकीय प्रोत्साहन
परतंत्र चर सामाजिक व्यवहार

उद्देश्य

१) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन।

अभिभावकीय प्रोत्साहन	किशोर	किशोरियाँ	योग
उच्च	०५	०५	१०
निम्न	०५	०५	१०
योग	१०	१०	२०

विधि — उपरोक्त शोध में प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु निम्नलिखित प्रविधि का उपयोग किया गया है

१) मध्यमान २) मानक विचलन ३) क्रांतिक अनुपात

२) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन।

३) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन।

परिकल्पना

१) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

२) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

३) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध अध्ययन में चयनित शासकीय शालाओं के नवी कक्षा में अध्ययनरत १५० किशोर बालक एवं १५० किशोर बालिकाओं का चयन किया गया। चयन का आधार अभीभावकीय प्रोत्साहन उच्च एवं निम्न था। जिसके निर्धारण हेतु अभीभावकीय प्रोत्साहन मापनी (डॉ आर आर शर्मा) का प्रशासन किया गया।

परिणामो का विश्लेषण एवं व्याख्या –

शासकीय शालाओ में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव संबंधी तुलनात्मक परिणाम

समूह	अभिभावकीय प्रोत्साहन	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	पी मान
किशोर	उच्च	६१	१५७.२५	१६.८६	५.८८	६०.०१
	निम्न	७३	१३५.६७	२६.७१		
किशोरियाँ	उच्च	४९	१५६.३५	२४.९९	२.६६	६०.०१
	निम्न	७२	१४४.१५	२४.३६		
किशोर एवं किशोरियाँ	उच्च	११०	१५६.८५	२०.७८	५.८१	६०.०१
	निम्न	१४५	१३९.८८	२५.८३		

स्वतंत्रता के अंश — १३२, ११९, २५३०.०५ स्तर पर सार्थकता हेतु मान — १.९७

०.०१ स्तर पर सार्थकता हेतु मान — २.६०

उपरोक्त सारणी के परिणामों से प्रदर्शित होता है कि शासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों, किशोरियों एवं उनके सम्मिलित समूह के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सार्थक प्रभाव पड़ता है, तीनों समूहों में क्रांतिक अनुपातो के मान क्रमशः ५.६८, २.६६ एवं ५.८१ आए हैं, जो ०.०१ स्तर पर सार्थकता के न्यूनतम निर्धारित मान की अपेक्षा अधिक है उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन समूह का सामाजिक व्यवहार निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन की अपेक्षा अधिक है। शासकीय शालाओ के विद्यार्थियों में वैयक्तिक भिन्नता अधिक रहती है क्योंकि अशासकीय शाला की तुलना में यहां सभी प्रकार के सामाजिक आर्थिक स्तर के विद्यार्थी अध्ययन हेतु आते हैं प्रत्येक अभिभावक चाहता है कि शिक्षा के माध्यम से उनके बच्चे का सर्वोत्तम विकास हो ऐसी स्थिति में वे अपने बच्चों को यथासंभव वह सब देने का प्रयास करते हैं, जो उनके सामर्थ्य में होता है ऐसे में उनके उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के बच्चों का सामाजिक उच्च होना स्वभाविक प्रतीत होता है विभिन्न पारिवारिक दायित्वों के कारण कुछ अभिभावक अपने बच्चों को उतना अधिक प्रोत्साहन नहीं दे पाते जितना कि बच्चों को आवश्यक होता है, ऐसी स्थिति में बच्चों का सामाजिक व्यवहार प्रभावित होता है। अतः उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के बच्चों का सामाजिक व्यवहार निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन की अपेक्षा अच्छा होता है।

निष्कर्ष

१) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत् निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन की अपेक्षा उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन किशोर बालकों के सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करता है।

२) शासकीय शालाओं में अध्ययनरत् निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन की अपेक्षा उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन का किशोर बालिकाओं के सामाजिक व्यवहार को प्रभावित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१) बघेल डॉ डी.एस (१९९५) "सामाजिक मनोविज्ञान" प्रकाशक मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी रविंद्र नाथ ठाकुर मार्ग भोपाल मध्य प्रदेश ४६२००३ संस्करण प्रथम पृष्ठ संख्या १४४-१५१

२) बर्मन, श्रीमती गायत्री एवं जैन डॉ शशि प्रभा (२०१०) "किशोरावस्था" श्री एस एल सिंघल द्वारा शिवा प्रकाशन श्री गणेश मार्केट खजूरी बाजार इंदौर ४५२००२ चतुर्थ पूर्णत संशोधित संस्करण पृष्ठ संख्या ६२ — १३७

३) भार्गव, उषा १९९३ 'किशोर मनोविज्ञान' हिंदी ग्रंथ अकादमी जयपुर प. संख्या .११४ — १३०

४) कपिल.एच.के. (१९८४) 'सांख्यिकी के मूलतत्व' प्रकाशक विनोद पुस्तक मंदिर कार्यालय रागेय राघव मार्ग आगरा दो बिक्री केंद्र हॉस्पिटल रोड आगरा तृतीय संशोधित एवं परिवर्तित संस्करण पृष्ठ संख्या ६२५ — ६३२

eurojournal-com

<http://www-wkipidia-org>

कोविड-19 काल में ऑनलाइन शिक्षण एक चुनौती : उच्च शिक्षा उत्तराखण्ड के दुर्गम पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों के संदर्भ में एक तुलनात्मक अध्ययन डॉ निर्मला लोहनी¹ डॉ नमिता मिश्रा²

¹सहायक प्रोफेसर भूगोल, इ. प्रि. रा. स्ना. महा हल्द्वानी (नैनीताल)

²सहायक प्रोफेसर अर्थशास्त्र रा. स्ना. महा रानीखेत(अल्मोड़ा)

DOI- 10.5281/zenodo.7069619

सारांश

कोविड-19 ने जहाँ एक ओर सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया वहीं शिक्षा पर भी इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। सरकार द्वारा लॉकडाउन में सारे स्कूल व कालेज बंद कर दिए गये। उस समय कक्षा शिक्षण ऑनलाइन शिक्षण में परिवर्तित हो गया। ऑनलाइन शिक्षा के माध्यम से पूरे देश में शिक्षण कार्य हुआ। कोरोना के कारण ऑनलाइन शिक्षा के प्रयोग से विद्यार्थी अपनी शिक्षा को जारी रख पाए। डिजिटल शिक्षा जहाँ एक ओर विद्यार्थियों के लिए चुनौती पूर्ण थी वहीं शिक्षकों के लिए ऑनलाइन शिक्षण करना आसान ना था। ऑफलाइन शिक्षा से अचानक ऑनलाइन शिक्षा में परिवर्तित होने से शिक्षा का रूप ही बदल गया। लॉकडाउन के दौरान swayam तथा नेशनल डिजिटल लाइब्रेरी द्वारा छात्रों को मुफ्त में शिक्षा प्रदान की गई।

उत्तराखण्ड में भी विद्यार्थियों ने ऑनलाइन शिक्षण को अपनाया पर उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में छात्रों के पास ऑनलाइन पढ़ाई के लिए स्मार्टफोन, लैपटॉप नहीं हैं क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकांश क्षेत्र दुर्गम हैं जहाँ पर इन्टरनेट व मोबाइल नेटवर्क की सुविधा नहीं है, वहीं मैदानी क्षेत्रों में यह समस्या कम है। प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तराखण्ड के पहाड़ी तथा मैदानी क्षेत्रों में कोविड-19 का उच्च शिक्षा की चुनौतियों का तुलनात्मक अध्ययन एवं निवारण हेतु सुझाव की रूप रेखा दी गयी है।

मुख्य बिन्दु - कोविड-19, लॉकडाउन, ऑनलाइन शिक्षण, उत्तराखण्ड, पहाड़ी क्षेत्र, मैदानी क्षेत्र

प्रस्तावना

कोविड-19 विश्व की एक बड़ी विध्वंसकारी घटना है। इस आपदा ने दुनिया को त्रस्त कर दिया। दुनिया भर में जीवन और आजीविका को बहुत अधिक प्रभावित किया है। इस महामारी के कारण सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। चीन के वुहान शहर से इस महामारी का सबसे पहले पता चला जिसकी सूचना 31 दिसम्बर 2019 को WHO द्वारा दी गयी। WHO द्वारा इसे कोविड-19 महामारी घोषित किया गया। धीरे-धीरे यह महामारी अन्य देशों में फैल गई। इस महामारी ने लोगों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाला तथा विश्व में कई लोगों ने अपनी जान गवा दी। लोगों के रोजगार छिन गए जिससे उनकी आर्थिकी में बहुत बुरा प्रभाव पड़ा और लोग गरीबी रेखा से नीचे आ गए। आर्थिकी बुरी होने के कारण लोगों को पोषणयुक्त भोजन प्राप्त नहीं हुआ जिससे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ा। भारत के शहरों में कई लोग रोजगार न होने से अपने गाँवों को वापस लौटे जिससे उन्हें व उनके परिवार को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जैसे सामाजिक भेदभाव, असुरक्षा। एनुअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट में 2018 में उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में 47.9% बच्चे स्मार्ट फोन का इस्तेमाल करते थे वहीं 2021 में यह आँकड़ा 75.6% हो गया। पर ऑनलाइन शिक्षा के लिए मात्र 34.3% बच्चे ही स्मार्टफोन का इस्तेमाल कर पा रहे थे। पर्वतीय क्षेत्रों में लोगो के पास स्मार्टफोन की सुविधा का अभाव होता है और जिन लोगो के पास स्मार्टफोन होता भी है नेटवर्क व कनेक्टिविटी के कारण ऑनलाइन कक्षा लेने में

असमर्थ होते हैं। उत्तराखण्ड एक पहाड़ी राज्य है जिसमें 13 जिले हैं, जिसमें से 9 जिले पूर्ण रूप से पर्वतीय है तथा 4 जिले जिसमें नैनीताल, देहरादून, उधमसिंगर, तथा हरिद्वार मैदानी है। इन जिलों में भी कुछ भाग पर्वतीय है। इस भौगोलिक असमानता के कारण दुर्गम पर्वतीय क्षेत्रों का विकास नहीं हो पाया है, जहाँ की जनसंख्या अनेक सुविधाओं जैसे- बिजली, पानी, स्वास्थ्य, तकनीकी, दूरसंचार से वंचित है। शिक्षा के लिए यहाँ के बच्चों को कई किमी० से पैदल यात्रा करके स्कूल जाना पड़ता है। ऑनलाइन शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थी घर बैठे मोबाइल, लैपटॉप व कम्प्यूटर के माध्यम से ग्रहण कर सकता है परंतु बेहतर इन्टरनेट सुविधा, डाटा व बिजली की सुविधा भी इसके लिए आवश्यक है। इन तत्वों के अभाव में ऑनलाइन शिक्षा की कल्पना भी नहीं की जा सकती। कोविड-19 से ऑनलाइन शिक्षा का डिजिटल शिक्षा में बदल जाना वस्तुतः एक चुनौती है लेकिन शिक्षा में डिजिटल युग की शुरुवात हो चुकी है।

उद्देश्य

- 1- अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत पहाड़ी तथा मैदानी क्षेत्रों में कोविड-19 का शिक्षा पर प्रभाव का अध्ययन करना।
 - 2- अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में ऑनलाइन शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन करना।
 - 3- अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत ऑनलाइन शिक्षा की समस्याओं का अध्ययन व निवारण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।
- परिकल्पना**

- 1- पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों के आर्थिक स्तर में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
- 2- पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्रों में नेटवर्क का उपस्थिति के प्रभाव में कोई अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र समस्या के अध्ययन हेतु प्राथमिक समंको का प्रयोग किया गया है जिसके लिए व्यक्तिगत साक्षात्कार के माध्यम से साक्षात्कार अनुसूची की सहायता से किया गया है। इसके अन्तर्गत 50 उत्तरदाता पहाड़ी क्षेत्रों व 50 उत्तरदाताओं का चयन मैदानी क्षेत्रों से दैव निर्वेशन को लाटरी पद्धति द्वारा किया गया है। द्वितीय आकड़ों के लिए स्थानीय स्वशासन से संबंधित विभिन्न पुस्तकों, उपलब्ध लेख एवं शोध पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं एवं विभिन्न वेबसाइट का प्रयोग किया गया

आँकड़ों का विश्लेषण:

तालिका-1

पर्वतीय व मैदानी क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति

क्षेत्र	विद्यार्थी N	M (माध्य)	प्रमाप विचलन SD	Df	T मान
मैदानी	50	23.1	8.5	98	3.73
पर्वतीय	50	16.8	8.36		

स्रोत- सर्वे के आधार पर

Degree of freedom $N_1+N_2- 2= 50+50-2= 98$ पर 0-05 स्तर पर t का मू 1-984 है। जबकि गणना से प्राप्त ज का मान 3-73 है। जो कि सारणी मान में अधिक है अतः परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है अर्थात् पर्वतीय व मैदानी

तालिका-2

पर्वतीय व मैदानी क्षेत्रों के उत्तरदाताओं के पास स्मार्ट फोन की उपलब्धता

मैदानी			पर्वतीय		
प्रत्युत्तर का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत	प्रत्युत्तर का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	47	94	हाँ	32	64
नहीं	03	6	नहीं	18	36
योग	50	100	योग	50	100

स्रोत- सर्वे के आधार पर

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि मैदानी क्षेत्रों में 94% उत्तरदाता व पर्वतीय क्षेत्रों में 64% उत्तरदाता के पास स्मार्ट फोन हैं जबकि मैदानी क्षेत्र मात्र 6% व पर्वतीय क्षेत्र में 36% उत्तरदाताओं के पास स्मार्टफोन नहीं हैं। स्पष्ट है कि,

तालिका-3

पर्वतीय व मैदानी क्षेत्र में डाटा उपलब्धता

मैदानी			पर्वतीय		
प्रत्युत्तर का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत	प्रत्युत्तर का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	34	68	हाँ	14	28

अध्ययन क्षेत्र
रा. स्ना.महा. रानीखेत पर्वतीय क्षेत्र में स्थित है व इ.प्रि.रा.स्ना.महा. हल्द्वानी मैदानी क्षेत्र में स्थित है। रानीखेत महाविद्यालय में 2293 विद्यार्थी का नामांकन है तथा हल्द्वानी में 2145 छात्राएं नामांकित है। प्रस्तुत शोध पत्र हेतु सर्वेक्षण इकाई के रूप में केवल उच्च शिक्षा विद्यार्थियों का चयन किया गया है जिसमें 50 छात्र रा.स्ना.महा.रानीखेत व 50 छात्राएँ इ.प्रि.रा.स्ना.महा. हल्द्वानी से चुनी गयी हैं, प्रस्तुत शोध पत्र हेतु सर्वेक्षण इकाई के रूप में केवल उच्च शिक्षा विद्यार्थियों का चयन किया गया है जिसमें 50 छात्र रा.स्ना.महा.रानीखेत व 50 छात्राएँ इ.प्रि.रा.स्ना.महा.हल्द्वानी से चुना गया है।

क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति में अन्तर पाया जाता है जोकि ऑनलाइन शिक्षण में बाधक है पर्वतीय क्षेत्र मान में आर्थिक स्थिति ठीक ना होने पर ऑनलाइन शिक्षा के लिए स्मार्टफोन व डाटा उपलब्ध करवाना बहुत बड़ी चुनौती है।

स्मार्टफोन वर्तमान समय की आवश्यकता है, जो कि पर्वतीय व मैदानी क्षेत्रों के अधिकांश उत्तरदाताओं के पास हैं पर मात्र स्मार्टफोन से ही ऑनलाइन शिक्षण सम्भव नहीं है।

नहीं	11	22	नहीं	30	60
कभी-कभी	05	10	कभी-कभी	06	12
कुलयोग	50	100	कुलयोग	50	100

स्रोत- सर्वे के आधार पर

तालिका 3 से स्पष्ट होता है कि मैदानी क्षेत्रों में जहाँ 68% उत्तरदाताओं को डाटा उपलब्ध होता है वहीं पर्वतीय क्षेत्र में मात्र 28% उत्तरदाताओं को ही डाटा उपलब्ध होता है, मैदानी क्षेत्र में 22% ने व पर्वतीय क्षेत्र के 60% उत्तरदाताओं ने डाटा उपलब्धता की कठिनाई बताई वहीं मैदानी क्षेत्र में 10% व पर्वतीय क्षेत्र में 12% उत्तरदाताओं

ने कभी-कभी डाटा उपलब्धता को स्वीकार किया। पर्वतीय क्षेत्र में डाटा उपलब्धता की कमी के कारण ऑनलाइन शिक्षण में एक बाधा है। उत्तरदाताओं का मानना है कि 1 दिन में उपलब्ध डाटा कक्षा शिक्षण व शिक्षण सामग्री को डाउनलोड करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

तालिका-4

मैदानी व पर्वतीय क्षेत्रों में नेटवर्क कनेक्टिविटी का उपस्थिति पर प्रभाव

क्षेत्र	डेटा कनेक्टिविटी/उपस्थिति प्रत्युत्तर का स्वरूप कनेक्टिविटी		
	हाँ	नहीं	योग
मैदानी	42	08	50
पर्वतीय	17	33	50
योग	59	41	100

स्रोत- सर्वे के आधार पर

मैदानी तथा पर्वतीय क्षेत्रों के बीच नेटवर्क कनेक्टिविटी का उपस्थिति पर प्रभाव ज्ञात करने के लिए χ^2 (काई) का परिकल्पित 25.82 प्राप्त हुआ। जो कि 5% सार्थकता स्तर पर i.d.f. के लिए सारणी मू0 3.841 से काफी अधिक है।

अतः शून्य परिकल्पना असत्य है। निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मैदानी क्षेत्र की तुलना में पर्वतीय क्षेत्र में **निष्कर्ष एवं सुझाव**

निष्कर्ष

1. पहाड़ी व मैदानी क्षेत्रों में ऑनलाइन शिक्षा के मार्ग में बहुत सी बाधाएँ हैं परन्तु पर्वतीय क्षेत्रों का विषय भौगोलिक व आर्थिक परिस्थितियों को देखते हुए वहीं पर ऑनलाइन शिक्षण मैदानी क्षेत्रों की तुलना में अधिक चुनौती पूर्ण है।
2. निःसंदेह ऑनलाइन शिक्षण शिक्षा में नवाचार है। मैदानी क्षेत्र में सुविधाएँ पर्वतीय क्षेत्रों की तुलना में अधिक हैं अतः मैदानी क्षेत्र के विद्यार्थी इस नवाचार से लाभान्वित हो रहे हैं वहीं पर पर्वतीय क्षेत्रों की विषम परिस्थितियों (बिजली, स्मार्टफोन, डाटा उपलब्धता, तीव्र इन्टरनेट) के कारण वहाँ के उत्तरदाता शिक्षा क्षेत्र के इस सुधार से वंचित हो रहे हैं।
3. मैदानी क्षेत्रों की तुलना में पर्वतीय क्षेत्र में ऑनलाइन शिक्षण में, अभिभावकों में आर्थिक पिछड़ापन तथा कम्प्यूटर या ऑनलाइन शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव सबसे बड़ी समस्या है, वहीं पर मैदानी क्षेत्रों के अभिभावकों में नई तकनीक के प्रति जागरूकता पाई गई है।
4. पर्वतीय क्षेत्र में डेटा पैक शिक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि सभी विषयों की कक्षाएँ पढ़ने व विषय सामग्री को

नेटवर्क कनेक्टिविटी की समस्या है। जिसके कारण वहाँ पर छात्रों की उपस्थिति ऑनलाइन कक्षा में कम रहती है, जबकी मैदानी क्षेत्रों में बेहतर नेटवर्क होने से यहाँ पर उपस्थिति पर्वतीय क्षेत्रों से अधिक है। नेटवर्क समस्या पर्वतीय क्षेत्रों में ऑनलाइन शिक्षण में बाधक है।

डाउनलोड करने के लिए यह पर्याप्त नहीं है, वहीं मैदानी क्षेत्र में भी यह डाटा पैक पर्याप्त नहीं है। पर अन्य नेटवर्क या तरीकों से उत्तरदाताओं द्वारा ऑनलाइन शिक्षण को जारी रखा गया

सुझाव

ऑनलाइन शिक्षण हेतु रेडियो तथा टेलिविजन पर प्रसारण किया जाना चाहिए तथा इन कार्यक्रमों के माध्यम से अभिभावकों तथा विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के लिए जागरूक किया जाना चाहिए तथा इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि ऑनलाइन शिक्षण वर्तमान समय की आवश्यकता है। वर्तमान समय में सरकार द्वारा प्रत्येक महाविद्यालय में छात्रों को टेबलेट वितरण किए गए हैं जोकि ऑनलाइन शिक्षण को जारी करने के लिए सराहनीय कदम है पर बिना डाटा व नेटवर्क के ऑनलाइन शिक्षण संभव नहीं है, अतः सरकार को विशेषकर पहाड़ी क्षेत्रों में बेहतर नेट कनेक्टिविटी व विद्यार्थियों को मोबाइल डाटा कम कीमत में उपलब्ध करवाया जाना चाहिए।

ऑनलाइन शिक्षण को बेहतर बनाने के लिए सरकार द्वारा शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिससे छात्र व शिक्षक ऑनलाइन शिक्षण में असहजता महसूस ना करे।

ऑनलाइन शिक्षण को छात्रों द्वारा एक ही स्थान पर कई घण्टे बैठकर किया जाता है जिससे युवा छात्र मानसिक अवसाद का शिकार हो रहे हैं। अतः शिक्षकों को छात्रों की सकारात्मक प्रतिभाएँ निकालकर सामने लानी चाहिए जिससे छात्र पढ़ाई के साथ रचनात्मक कार्य भी कर सके। सरकार को इन्टरनेट व विद्युतीकरण का तेजी से विकास व विस्तार करना चाहिए जिससे कि मैदानी क्षेत्रों के साथ-साथ पर्वतीय क्षेत्रों के विद्यार्थी भी ऑनलाइन शिक्षा का लाभ उठा सके। इस प्रकार निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि मैदानी क्षेत्र की उपेक्षा पर्वतीय क्षेत्रों में ऑनलाइन शिक्षण बड़ी समस्या है। सुविधाएँ बिजली, पानी, दूरसंचार तथा आर्थिक पिछड़ापन हैं। कोरोना महामारी जिसने पूरी दुनिया को बदल दिया तथा शिक्षा भी इससे अछूता नहीं रहा। इन समस्याओं का तत्काल समाधान तो नहीं खोजा जा सकता है पर शिक्षा क्षेत्र में ऑनलाइन शिक्षण को अपना ही होगा, क्योंकि यह महामारी कब तक रहेगी यह कहना संभव नहीं है अतः शिक्षा में आए इस नए परिवर्तन को हमें हल ढूँढना होगा जिससे कि शिक्षा को जारी रखा जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ

1. Aguilera-Hermida, A. P. (2020). *College students' use and acceptance of emergency online learning due to COVID-19*. International Journal of Educational Research Open, 1, 100011.
2. Bao, W. (2020). *COVID-19 and online teaching in higher education: A case study of Peking University*. Human Behaviour and Emerging Technologies, 2(2), 113–
3. Goswami M.P, Thanvi J, & Padhi S.R(2021) *Impact of offline learning in India A survey of university students during the covid-19 crisis*-Asian Journal for Public Opinion Research,9(4),331-351
4. Lederman, D. (2020). *Will shift to remote teaching be boon or bane for online learning? Inside Higher Education*
5. Manash Prahm Mishra, L., Gupta, T., & Shree, A. (2020). *Online teaching-learning in higher education during lockdown period of COVID-19 pandemic*. International Journal of Educational Research Open, 1, 100012.
6. Namita Misra (2020) *उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में कोरोना महामारी का शिक्षा में प्रभाव* ** covid-19 changing paradigm of Education and society (i`B la0& 66&71)
7. Pravat Kumar Jeena (2020) *Online learning during lockdown period for Covid-19 in India* International Journal of Multidisciplinary Education Research vol- 9,issue- 5
8. Suhas Anil Funde, Kiran Pandurang Khot(2021) *भारतीय शिक्षा प्रणाली पर COVID-19 का प्रभाव*, International Journal of Humanities and Social

Science Research 27-11- Volume 7, Issue 6, 2021, Page No. 28-34

9. दैनिक जागरण 30-07-2020

Web sides

1. www.thehindu.com
2. www.amarujala.com
3. <https://www.sciencedirect.com>
4. www.socialsciencejournal.com
5. <https://doi.org/10.1016/j.crbeha.2020.100011>
6. <https://link.springer.com>
7. <https://pib.gov.in>

"मुलगी झाली हो" इस नाट्य द्वारा नारीमुक्ती का परामर्श

डॉ. वैशाली केशव बोदेले

नाट्यशास्त्र विभाग, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यापीठ, औरंगाबाद

DOI- 10.5281/zenodo.7057014

सार

साहित्य एवं समाज दोनों का अटूट नाता है ! समाज का प्रतिबिंब जिस तरह साहित्यधारा से उजागर होता है, उसी तरह नाटक भी समाज का आईना है ! साहित्य के गर्भ से ही नाट्यसंहिता का जन्म होता है ! कला के तीन रूप याने कि, साहित्य कला, ललित कला एवं प्रदर्शनकारी कला सारी कलाएँ आपस में जुडी है ! नाट्यसंहिता जब तक प्रदर्शित ना हो तब तक उसका मूल्ये निखर कर नहि आ पाता; इसलिये प्रदर्शन के माध्यम से ही संहिता को अर्थ प्राप्त होता है ! स्वतंत्रता के पश्चात साहित्य एवं नाट्यधारा मे बदलाव आये, इन सारी कलाओं के जरीए स्त्री प्रतिमाओं का विचार आविष्कृत हुवा है ! समाज दो स्तंभों के साथ साथ चलता है स्त्री और पुरुष ! आधुनिक समाज व्यवस्था में पुरुषों के साथ साथ सारि कलाओं के जरीए महिलाएँ भी आगे आ पायी ! यह वह समय था, जब फुले, शाहू, आंबेडकर, म. गांधी जैसे महापुरुषों के विचारों से समाज प्रभावित हो रहा था ! समाज मे शैक्षिक क्रांती महिलाओं के लिए नयी प्रेरणाओं से भरा पडा था !

स्वतंत्रता के पश्चात समाज में नई-नई क्रांतीयाँ हो रही थी ! जिसका गहरा प्रभाव साहित्य एवं प्रदर्शनकारी कलाओं पर हुआ ! महायुद्ध से जुडा परिणाम, वैज्ञानिक परिकल्पना, सामाजिक एवं राजनैतिक बदलती परिस्थितियाँ साथ ही मार्क्सवाद, गांधीवाद, दलित विचारधारा तथा अम्बेडकरवाद ! महिलाओं के आत्मविश्वास को बढावा देने वाले साहित्य कि रचना स्त्रिवादी साहित्य के रूप मे आगे आने लगी ! देश को स्वतंत्रता प्राप्त हुवे कई अरसे बिते, किन्तु क्या सही मायने में महिलाएँ आज भी स्वतंत्र हो पाई है ? परंपरा एवं आधुनिकता के चक्रव्युह से क्या वह कभी निकल पायेगी? ऐसे कठू सवाल आज कि स्थिति में उपस्थित होते है ! साहित्य, भाषा प्रयोग कि कला है ! और भाषिक अभिव्यक्ती का विशिष्ट ढंग याने कि शैली ! मूलरूप से विषय प्रतिपादन कि प्रविधी शैली ही है ! जो साहित्य के संपूर्ण आस्तित्व को उजागर करती है ! कई नारिवादी लेखिकाओं ने साहित्य कि पहले से चली आ रही परंपरा को तोड भाषा शैली के क्षेत्र में नई क्रांती लायी ! आम जीवन से जुडे आम पात्रों को इन महिलाओं ने विशेष स्थान दिया ! एक सामान्य स्त्री, मजदूर, किसान सभी पात्र विशेषता से आगे आने लगे, एवं असामान्य बन गये !

रंगमंच के विधा से जुडी नाट्य संहिता लिखनेवाली अनेक महिलाएँ नई विचारधारा से प्रेरित थी; जिस में मालती दांडेकर, मीना देशपांडे, शिल्पा मुंन्त्रिस्कर जैसी कई दिग्गज महिलाएँ लिखती रही ! इसी शृंखला मे एक महत्वपूर्ण नाम है लेखिका ज्योती म्हापसेकर ! १९७५ यह वर्ष आंतराष्ट्रीय महिला पर्व

के रूप में आगे आया ! इस संदर्भ में नारी मुक्ती कि कई गाथाएँ, कथाएँ नाट्यद्वारा लिखे जाने लगे ! रूढी परंपराओं कि बेडीओं से महिलाओं को मुक्ती दिलाना, मनुष्य कि तरह उसे देखा जाना, पुरुषों कि तरह समान दर्जा प्राप्त होना, यह सारी बाते नारी मुक्ती कि संदर्भ में आगे आने लगी ! जिस समाज के जरीए स्त्रियोंपर अन्याय, अत्याचार चले आ रहे थे, उसी समाज में नारी चेतना, नारी मुक्ती, नारी क्रांती का नगाडा बज चुका था ! सुपरिचित लेखिका सानिया कहेती है,^१ "नारी को इन्सान के रूप में स्वीकारा जाए, उसे उसका मुलभूत अधिकार प्राप्त हो, यही स्त्रिवाद कि प्रेरणा है !" (भारतीय दलित साहित्य पृ. क्र. ४०, मराठी दलित साहित्याची वैश्विकता) नारी उपभोग कि वस्तु नही, जिसका केवल उपयोग मात्र हो ! उस पर होनेवाले अत्यचार कि शृंखला अगर तोडनी हो तो सब से पहिले एक स्त्री दुसरे स्त्री को समज पाये ये बेहतर होगा ! ऐसे अच्छे अच्छे विचार नाट्यसंहिता के जरीए आगे आने लगे ! इसी प्रवाह मे ज्योती म्हापसेकर इन कि 'मुलगी झाली हो !' यह नाट्य नारी मुक्ती के संदर्भ में आगे आया ! रंगमंच कि ताकत को पहचान कर लेखिकाने आधुनिक विचारधारा से जुडा विषय लोगो के समक्ष लाया ! महिलाओं कि समस्याओं को एक नारी ही लोगो के सामने ला सकती है ! कई पुरुषों ने भी नाट्यसंहिता के संदर्भ मे नारीवादी विचार प्रस्तुत करने का प्रयास किया, किन्तु पुरुषप्रधान विचारधारा, तथा संस्कृती एवं परंपरा के इर्द-गर्द वह महिलाओं को न्याय दिलाने में असमर्थ पाये गये ! महिलाएँ जो लिखती है, वे खुद कि

अनुभूतियों से सांझा कराती है ! 'मुलगी झाली हो' ! इस नारीवादी नाटक के जरीए लोग गितों कि मुखज परंपरा अर्थात मंगला गौरी, भोंडला, काव्य जैसी गीतों का वास्तविक अविष्कार इस नाटक के जरीए किया है ! इस नाटक के जरीए भारतीय समाज में परंपराओं से चली आ रही महिलाओं कि गुलामी, तथा वह कीस प्रकार उस पर प्रहार करती है. अपनी पिडा, अपनी संवेदना सकारात्मक रूप से लोगो के समक्ष लाने में इस नाटक कि नायिका बहोत सक्षम है ! इस नाटक के बारे में स्वयं लेखिका कहेती है, २ "महिलाओं कि समस्या महिलाओं के प्रश्न किसी एक स्त्री से सीमित नहि, बल्की समस्त नारी जाति से जुडा यह सवाल है ! जिस के लिये सामाजिक तौर पर महिलाओं ने संघटीत रूप से संघर्ष करना अनिवार्य है ! किन्तु अन्य माध्यमों के द्वारा इस बात को दबाया जाता है ! फिल्म, नाटक, साहित्य, सारे माध्यम समाज में बदलाव लाने के लिये बने है ! किन्तु साहित्य कि विधा हो या अन्य माध्यम 'महिला' को केवल मजाक का विषय बनाया जाता है ! इस बात पर अगर हल्ला-बोल किया जाये तो नारी उत्थान हेतू यह बात कारीगीर साबित हो सकती है ! इसी नयी चेतना से इस नाटक का जन्म हो रहा है !" (स्त्री नाटककारांची नाटके मधुरा कोरात्रे पृ. क्र. ८३, स्नेहवर्धन प्रकाशन)

नारी मुक्ती का उद्देश ध्यान मे रख कर लेखिका इस विचारधारा को नाट्य कृतीद्वारा आगे ला पायी है ! इस नाटक के प्रसंग हम सभी वास्तविक जीवन के इर्द-गिर्द घुमते है ! यह नाटक पूरी तरह से मुक्त नाटक के रूप से आगे आता है ! लोक संगित के आधार पर नृत्य के ताल पर वास्तविक रूप से उसमे लोकनाट्य का भाव भी प्रदर्शित होता है !

इसके पात्र अनेक चरीत्रों कि निर्मिती एक-एक कर सामने लाते है ! गीत गाते-गाते मंच पर स्थित महिला कार्यकर्ता लोगो को आपने साथ सम्मिलित करती है ! मानो, मंच और दर्शक इन मे कोई भेद ना हो ! दर्शकों में से ही एक स्त्री अपने मन में उत्पन्न हुवे सवालों कि कडी महिला कार्यकर्ता के समक्ष प्रस्तुत करती है ! वही इस नाटक कि एक नायिका 'कमल' है ! सही मायने में देखा जाये तो सर्वसामान्य दर्शक, कलाकार के रूप में मंच पर आता है, तब वह साधारण इन्सान ही होता है ! यही बात लोगो का मन जीत लेती है ! इस कि सारी कथाएँ एवं दृश्य लोगोको अपने लगने लगते है ! इसी तरह एक-एक महिला किरदार रंग मंच पर आने लगते है !

कभी बेटी, कभी बहु, कभी पती-पत्नी एवं माँ इन पात्रों के जरीए रोज-मर्रा कि जीवन से जुडा सवाल प्रस्तुत करते है ! इसलिये इस नाटक का स्वरूप अन्य नाटक से अलग पाया गया है ! यह नाटक केवल मनोरंजन ही नहि, बल्की जनजागृती भी करता है ! एक ही कडी में बहोत सारे संदेश नाट्यकृती द्वारा आगे आये है ! जन्म से ही समाज में महिलाओं से जुडे कई भेद किये जाते है ! जैसे कि, बेटी के जन्म उपरांत बर्फी या जलेबी बाँटी जाती है, और बेटा हुआ तो पेडा ! भारतीय समाज कि यही विशेषता पूर्ण रूप से सटीकता से इस नाटकद्वारा आई है ! बेटा हुआ या बेटी विज्ञानिक रूप से सारी बाते पुरुष बीजाणू से उत्पन्न होनेवाली बाते है ! फिर भी सारा दोष महिलाओं के सिर पर मढ दिया जाता है ! इसी धारणा पर ज्योतीजी ने कठोर प्रहार इस नाट्यद्वारा किया है ! अब क्या करूं, इतनी मन्त्रते मांगी, उपवास रखे, पूजा-अर्चना कि, फिर भी बेटी हुई? ! यही बात इस नाटक में महिला पात्र दोहराते है ! महिला कार्यकर्ता उस पर उत्तर देती है ! बुढापे का सहारा, तथा वंश को आगे बढाने हेतू लडका ही होना चाहिए, इस विचारधारा के चलते पुरुष प्रधान संस्कृती का महत्व बढता आ रहा है ! जल्द ही यह भेद समाज से दूर होना चाहिए ! ऐसा आधुनिक विचार इस नाटक के जरीए आगे आया है !

उसी तरह पुरुषों को घुमने कि आजादी होती है, किन्तु स्त्रियों को नहि ! घर के काम करना, चुल्हा-चौका तथा बच्चों को संभालना यही सारी बाते बेटीयों कि मन में बचपन से ही डाला जाता है ! किन्तु आत्मसंरक्षण, आत्मविश्वास, सन्मान, शिक्षा का महत्व यह सारी बातें स्त्रियों को क्यों नहि बताई जाती? यह सवाल भी लेखिका इस नाटक द्वारा उठाती है ! अखबार के पन्नों पर बलात्कार, जिंदा जलाया, दहेज पिडीता या फिर तलाख बस ऐसी ही घटना महिलाओं के संदर्भ में पढने को मिलती है ! सिर्फ शारीरिक ही नहि बल्की मानसिक रूप से भी महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों कि कडी बढती ही जा रही है ! घर संसार चलाते हुऐं जब वह नोकरी भी कर रही हो हर क्षेत्र में उसे केवल सहना ही पडता है ! पिढी दर पिढी महिलाओं पर होनेवाले अत्याचारों का स्वरूप बदला है, किन्तु होने वाले अन्याय खत्म नहि हुऐं ! नाटक इस माध्यम से जुडी समस्याओं पर सवाल धुंडा जा सकता है, क्योंकि वह जनजागृती का प्रभावी माध्यम भी है, इसलिये इस निबंध के जरीऐं मैं कुछ बातों को सामने ला रही हुं !

नाटक एक जीवित कला है, जिसके माध्यम से मृत पड़े शरीर पर औषधी का कार्य होता है ! 'स्वातंत्र्याची कबर' के जरिए लेखिका छया दातार कहती है,^३ "विवाह संस्था में सुरक्षितता के लिये, महिलाओं को अपने स्वतंत्रता कि किमत चुकानी पडती है, इसके बावजूद सुरक्षितता यह शब्द भी उन्हे फसाता ही है ! जैसे कि प्रतीत हो रहा हो कि महिलाओं कि जिंदगी का एकमात्र उद्देश ही विवाह से जुडा हो ! (विवाह भ्रमातून भानावर- मंगला सामंत)

पुरुष प्रधान संस्कृती में स्त्री-पुरुष विवाह संबंध से जुडे कही बाते आगे आती है ! जिसमे पुरुषों कि गलतियों पर पर्दा डाला जाता है किंतु महिलाओं कि गलतियाँ मान्य नहि कि जा सकती ! ऐसी कही नाट्यकृतीयाँ है, जो केवल पुरुष प्रधान संस्कृती को ही उजागर करती है, जैसे कि कमला घराबाहेर, उंबरठा, दुभंग किनारा जो कि स्त्री पात्रों को आगे रखकर पुरुष विचार से ही आगे आती है ! इन नाट्यकृती द्वारा, स्त्री चरित्र का सन्मान तो हो पाया है, किंतु परम्परा एवं संस्कृती कि बन्धनो में जखड कर रख दिया गया ! 'मुलगी झाली हो' इस नाटक कि जरिए ज्योति म्हापसेकर इन्होने परम्परा एवं संस्कृती पर ही कडा प्रहार किया है ! साथ ही विवाह संस्था एक साथ दो परिवारों को जोडने का कैसे कार्य करती है, यह भी बताया ! विवाह से जुडे विचार प्रस्तुत करते समय उन्होंने आधुनिकता का मूलमंत्र लोगों के सक्षम रखा ! साडीयों का सेल लगने के बाद जिस तरह अच्छी साडी चुनने कि दौड में महिलाएं आगे आती है, उसी तरह शादी के लिये पती चुनते समय कैसी सेल लगती है, इसका दृश्य सामने आता है, जितना दहेज ज्यादा उतना महंगा पती, उसी तरह डॉक्टर, इंजिनियर, वकील सब का मुल्य इस शादी कि दौड में पहले से ही तय हो चुका है ! इस परम्परा पर प्रहार करते हुवे, लेखिका बताना चाहती है कि, शादी कोई सौदा नही जो केवल मुल्य चुका कर किया जायें, सोच, समज तथा विमर्श के साथ ही शादी तय हो यह जरुरी है !

उसी तरह बेटी को ससुराल भेजते वक्त माताएँ उन्हे काफी समझाती थी,^४ 'तुझे कितनी भी तकलीफ हो, चाहे मार ही क्यों ना पडे मैके वापस नही आना बेटी ! वही तेरा घर है !' किंतु इस नाटक कि माँ जो कि, आधुनिक विचारधारा से प्रेरित है और स्त्री मुक्ती को समझती है, वह कहती है कि, 'बेटी अगर तुझे थोडी ही तकलीफ क्यों ना हो, कोई

हाथ भी उठाये खामोशी से सहना मत ! तुम लौटकर कभी भी घर आ सकती हो ! मैं हमेशा तुम्हारा साथ दुंगी !' (ज्योति म्हापसेकर- 'मुलगी झाली हो' पृ. क्र. ३३)

इस तरह का आधुनिक विचार लेखिका इस नाट्य द्वारा प्रस्तुत कर पायी है ! एक माँ के रूप में स्त्री सक्षम है, वह स्वयं बेटा या बेटी में भेद नहि करती ! इस बात का सक्षम उदाहरण इस नाटक में देखने को मिलता है ! नोकरी करनेवाली महिलाओं को सुविधाएँ प्राप्त हो इसीलिये हॉस्टेल्स तथा बाल संगोपन केंद्र स्थापित हो यह बात भी इस नाटकद्वारा प्रस्तुत हो पाया है ! 'मनुस्मृती' ग्रंथद्वारा सदियों से महिलाओं को गुलाम किया गया था, किंतु २५ दिसंबर १९५६ को डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर इन्होने मनुस्मृती जलाकर महिलाओं को उनके हक्क के प्रती जागरूक किया ! आंबेडकरवादी विचारधारा नारी मुक्ती के पर्व में महत्वपूर्ण माना जाती है !^५ जो छबी पुरुष प्रधान व्यवस्था कि वजह से महिलाओं कि आगे आयी है ! उसका स्वरूप शुरुवात कि दौर से कुछ अलग ही था ! बुद्ध काल में स्त्रियों को भी सन्मान हुवा करता था ! बुद्ध संघ में महिलाएँ बडी मात्रा में शामिल थी ! इसी संदर्भ में 'शेरीगाथा' यह ग्रंथ नारी मुक्ती के गाथा स्वरूप माना जाता है ! उसी तरह अश्वघोष कि नाट्य छटाएँ भी इसी भावना को उजागर करती है ! भारतीय संस्कृती में कुछ बांते महिलाओं के प्रती सकारात्मक रूप से आगे आयी है, जैसे कि ऋग्वेद में पती को पत्नी का अर्धांग मना गया है ! (ऋग्वेद ५.६, १.६)^६ उसी तरह भारतीय संस्कृती कि धरोहर याने कि आदिम संस्कृती !, इस संस्कृतीद्वारा कई परंपराएँ स्त्रियों के हक से संबंधित थी जैसे कि, मातृसत्ताक पद्धती 'धन संचय करने का हक, पती चुनने का हक इससे यह प्रतीत होता है कि, कुछ विचारधारा आधुनिकता के नाम पर पारंपारिक रूप से महिलाओं पर लादी गई है ! संत साहित्य कि बात हो तो महिला संतोद्वारा स्त्री मिक्ती का विचार कई वर्षों पूर्व ही आगे आया था ! और निडर हो कर आपनी बात कविता एवं साहित्य के रूप में यह संत महिलाएँ बेझिजक कर रख पायी ! जिसमे मुख्य रूप से महदायीसा, मुक्ताबाई, जनाबाई, बहिणाबाई, वेणाबाई इनके उदाहरण श्रेष्ठतम है ! (१०१ कर्तुत्ववान स्त्रियाँ, उत्कर्ष प्रकाशन, स्वाती कर्वे)

२००१ यह वर्ष महिला सबलीकरण के रूप में आगे आया है ! महिलाओं से जुडी समस्या तथा उनका दर्जा कैसे उंचा उठाया जाये यह विचार इस

नाटक द्वारा प्रकट हुवा था ! किंतु रूढी परंपरा, अंधश्रद्धा, अज्ञान इन सारी बातों कि वजह से कई महिलाएँ आज भी आगे नहीं आ रही ! यह सचमुच खेदजनक बात है ! 'मुलगी झाली हो' इस नाट्यद्वारा ज्योतीजी ने महिलाओं के मुलभूत समस्याओं का चित्रण बिना रोखठोक आगे लाया है ! जन्म से लेकर मृत्यु तक तथा मृत्यु के उपरांत जिन सामाजिक बांतों से महिलाओं को जूझना पडता है, उन सारी पैलूओं पर लेखिका विचार प्रस्तुत कर पायी है, संघर्ष का दौर सदियों से महिलाओं के लिये था, है और पता नहीं कब तक रहेगा ! जनजागृती मे माध्यम से महिलाएँ नाट्यधारा को समझे तथा बडी मात्रा में महिला नाट्यलेखिकाओं के रूप में वह आगे आये, अपनी संवेदना स्वयं लिखे, दटकर समाज कि प्रथाओं पर प्रहार करे, यही अपेक्षा करती हूं !

संदर्भ ग्रंथ सूची

- 1) भारतीय दलित साहित्य, पृ. क्र. ४० मराठी साहित्याची वैश्विकता
- 2) स्त्री नाटककरांची नाटके, डॉ. मधुरा कोरान्ने, पृ. क्र. ८३, स्नेहवर्धन प्रकाशन
- 3) विवाह भ्रमातून भानावर- मंगला सामंत
- 4) ज्योती म्हापसेकर – मुलगी झाली हो ! पृ. क्र. ३३
- 5) १०१ कर्तृत्वान स्त्रियाँ, उत्कर्ष प्रकाशन, स्वाती कर्वे
- 6) ऋग्वेद ५.६, १.६

भारतातील सामुदायिक आरोग्य विकास

डॉ. राजू के. माटे

जोतिराव फुले समाजकार्य माहाविद्यालय उमरेड जि. नागपूर

DOI- 10.5281/zenodo.7073302

सारांश

भारतातील ग्रामीण आरोग्याच्या विकासासाठी अनेक उपक्रम राबविले जातात. भारतात सामुदायिक विकासाचे एक अंग म्हणजे ग्रामीण आरोग्य त्यामधील एक आहे. ग्रामीण भागातील आरोग्य विकासाकरीता एकात्मिक आरोग्य सेवेची संकल्पना मांडण्यात आली असून प्रत्यक्षात कार्यान्वित आहे. एकात्मिक ग्रामीण आरोग्य सेवेचा एक भाग म्हणजे प्राथमिक आरोग्य केंद्र व उपकेंद्र इत्यादींची अमलबजावणी होय. सामुदायिक आरोग्याच्या दृष्टिने स्वच्छता असणे हि आरोग्याच्या दृष्टिने महत्वाचे आहे. समुदायाचे आरोग्य उत्तम राहण्यासाठी योग्य प्रमाणात सकस आहार व पौष्टिक आहार समुदायातील लोकांना मिळणे आवश्यक आहे. सामुदायिक आरोग्य संकल्पना हि महायुद्धाच्या पहिल्या किंवा दुसऱ्या काळात प्रचलित झाली. तसेच त्या काळापासून सामुदायिक आरोग्याचे महत्व वाढले आहे. तसेच वैद्यकिय क्षेत्रातील तज्ञ मंडळीच्या मतानुसार समुदायामध्ये अनेक प्रकारचे रोग हे अस्वच्छता, घाण, लोकांमधील अज्ञान, अंधश्रद्धा आणि पुरेश्या वैद्यकिय सेवांचा अभाव इत्यादीमुळे रोगराई पसरते. त्यामुळे समुदायाचे आरोग्य धोक्यांमध्ये येते. वैद्यकिय सेवांचा विकास हा फक्त खाजगी सेवा पुरताच राहिलेला नाही. तर सामुदायिक आरोग्य हि संकल्पना सार्वजनिक आरोग्य या प्रमाण वापरली जात आहे. त्याचप्रमाणे सार्वजनिक आरोग्याच्या दृष्टिकोणातून विचार केल्यास सरकारी दवाखान्याद्वारे वैद्यकीय सेवा हि खेडोपाडी व दुर्गम अतिदुर्गम भागात पोहचलेली आहे.

भारतातील सामुदायिक आरोग्याचा विचार केल्यास इ.स. १९४८ साली स्वातंत्र्यानंतर सुमारे १ वर्षांनी "कामगार राज्य विमा योजना" इ.स. १९५४ झाली. केंद्र सरकारच्या माध्यमातून आरोग्य योजना सुरू करण्यात आली. या योजनेच्या माध्यमातून सार्वजनिकरणासाठी आरोग्य सेवा देण्यात येत आहे. मनुष्याच्या मुलभूत गरजा म्हणजे अन्न, वस्त्र, निवारा यासोबत आरोग्य आणि शिक्षण ह्या गरजा सुद्धा महत्वाच्या आहेत. व्यक्तीला जर चांगले जिवन जगायचे असेल तर त्याचा वरिल सर्व गरजा पूर्ण होणे महत्वाचे आहे. स्वतःच्या आरोग्याची काळजी घेणे व्यक्तीचे कार्य आहे. सामुदायिक आरोग्य सुदृढ ठेवण्यासाठी पोषक आहार व आरोग्यसेवा उपलब्ध करून देण्यासाठी शासनामार्फत योजना राबविण्यात येतात. आरोग्यविषयक सेवांमध्ये वेळोवेळी सुधारणा कार्य शासनामार्फत करण्यात येतात.

सामुदायिक आरोग्य संकल्पना :-

सामुदायिक आरोग्य हे कोणत्याही एका घटकावर अवलंबून राहत नाही. त्याकरिता पोषण आहार, स्वच्छता, पर्यावरण, आरोग्य सेवा, शिक्षण व माहिती, रोगांवरील प्रतिबंधक उपाययोजना, अनुवंशिकता, आर्थिक-सामाजिक दर्जा, ग्रामीण-शहरी व आदिवासी भागातील परिस्थिती इत्यादी अनेक बाबींचा परस्पर संबंध हा आरोग्याशी आहे. त्या करिता सामुदायिक आरोग्याची काळजी घेणे महत्वाचे आहे. समुदायाचे उत्तम आरोग्य राहण्याकरीता योग्य उपाययोजनांची अंमलबजावणी करणे महत्वाचे आहे. सामुदायिक आरोग्यांत विविध आजारांवर सेवा-सुविधा पुरविणे, वेळेवर रोगनिदान, वेळेवर उपचार आणि रोग्यांचे पूर्वसन इत्यादी अनेक बाबींनुसार शासन आपली जबाबदारी पार पाडीत असते. आरोग्य सेवेच्या बाबतीत जागतीक आरोग्य संघटनेची मदत होत असतो. या संघटनेच्या धोरणाचा अवलंब भारतात सुद्धा करण्यात येतो. भारतांमध्ये विविध आजारावर उपाययोजना नियोजित करण्याचे कार्य धोरणानुसार करण्यात येते. तसेच देशातील विविध आरोग्य प्रश्न व त्यावरील उपचाराकरीता जनतेमध्ये जागृती निर्माण केल्या जाते. माता व बालसंगोपनावर आणि कुटुंब कल्याणाकरीता विविध कार्यक्रम राबविण्यात येत आहे.

सामुदायिक आरोग्याचा अर्थ आणि स्वरूप :-

समुदाय आरोग्य ही संकल्पना पूर्वीच्या त्या काळात सार्वजनिक आरोग्य, सामाजिक औषध, उपचार, प्रतिबंधात्मक व उपचार पध्दती या शब्दांना पर्याय म्हणून वापरली जात होती. समुदायाला स्थानिक पातळीवर आधारभूत आरोग्य सुविधा उपलब्ध करून देणे. त्या सर्व सेवा-सुविधा स्थानिक पातळी वर उपलब्ध करून दिल्या जातात. ग्रामीण समुदायत सेवा पोहचवितांना जबाबदारीची भावना पृढे ठेऊन कार्य केले जाते. समुदायांत एकाच ठिकाणी एका विशिष्ट भुभागावर समान उद्देश ठेऊन लहान-लहान समुह मिळून, मोठा समुदाय वास्तव्य करीत असतो. अशावेळी सामुदायिक भावना डोळ्यापूढे ठेऊन कार्य करण्यात येते. सार्वजनिकरित्या समुदायाचे व आरोग्याचे संरक्षण करण्यासाठी ज्ञान मिळविणे आवश्यक आहे. सामाजिक दृष्टिकोनानुसार सार्वजनिक आरोग्य या संकल्पनेत आरोग्याची काळजीविषयी उपयुक्त असलेल्या सर्व सेवा-सुविधा उपलब्ध करून देण्याची क्रिया समाविष्ट आहे.

समुदायाचा अर्थ :- "डोनाल्ड ई मॉटिस्की" यांच्यामते, "समुदाय आरोग्य हे सार्वजनिक आरोग्य क्षेत्राचा अंतर्भूत घटक असून खाजगी वा सार्वजनिक व्यक्ती, गट किंवा संघटना या सर्वांचे आरोग्य सवर्धन, संरक्षण आणि बढावा देण्याचे कार्य करण्याचा समावेश होतो. सोप्या शब्दात सर्व

सरकारी व निमसरकारी प्रयत्नांची गोळा बेरीज म्हणजे समुदाय आरोग्य होय.”

समुदाय आरोग्य कार्यात समुदायाचे किंवा समुदायातील सर्व सदस्यांचे आरोग्यात्मक संरक्षण करण्याकरिता व त्यामध्ये सुधारणा करण्याच्या उद्देशाने केले जाणारे कार्य, तसेच त्यात सर्वांचा समावेश करणे होय.

सामुदायिक आरोग्याचा कार्यक्रम हा योजनाबद्ध पध्दतीने नियोजित केली जातो. यात समुदायातील सर्व लोकांची काळजी व संरक्षण करणे होय. त्यामध्ये आरोग्याच्या सर्व सेवा जनतेला उपलब्ध करून देणे होय. समुदायातील लोकांना (विशेषतः आदिवासी व ग्रामीण) आरोग्य शिक्षण देणे होय. तसेच रोगांवरील प्रतिबंधात्मक करणारे कार्यक्रम आखणे व रोगांवर योग्य निदान करून त्यावर उपाययोजना करणे होय.

कुटुंब आणि आरोग्य :-

जगामध्ये प्रत्येक समाजातील लोक कुटुंबातच राहतात. कुटुंबाचा विचार केल्यास माता-पिता व मुले तसेच काही कुटुंबामध्ये आजही संयुक्त कुटुंब पध्दतीचा अवलंब करून वास्तव करीत आहेत. आरोग्य रक्षणासाठी कुटुंबातील सदस्यांच्या भूमिका महत्त्वाची आहे. कुटुंबातील एखादा व्यक्ती आजारी पडल्यास इतर सदस्य त्याला औषधोपचार करण्यासाठी दवाखान्यात तपासणी करीता घेऊन जातात. भारतात आजही संयुक्त कुटुंब पध्दतीचे अस्तित्व टिकून आहे. बदलत्या परिस्थितीनुसार कुटुंबाची कार्ये, संरचना यात काही बदल झाले आहेत. परंतु आजही कुटुंब हे अनौपचारिकपणे आरोग्य कार्यात महत्त्वाची भूमिका पार पाडत असून एक सामाजिक संस्था म्हणून कार्यरत आहे. कुटुंबात महिलांचे, मुलांचे, किशोरी मुली व प्रौढ महिला संगोपनाची जबाबदारी कुटुंबातील सदस्य योग्य पध्दतीने पार पाडीत आहेत. कुटुंब की एक गुंतागुंतीचा सामाजिक संस्था म्हणून कार्यरत आहे. एकीकडे व्यक्तीच्या खाजगी जीवनाचे संरक्षण करते तर दुसरीकडे कुटुंब हे सार्वजनिक जीवनाचे एक लक्ष असल्याचे मानले जाते. व्यक्तीच्या खाजगी व सार्वजनिक जीवनातील अनेक उद्दिष्टांच्या पूर्ततेसाठी कुटुंबाची भूमिका महत्त्वाची मानली जाते.

आरोग्याचे कार्य आणि कुटुंब :-

कुटुंबाच्या माध्यमातून बहुसंख्य आरोग्याची कार्ये ही प्रामुख्याने कुटुंबामार्फत पार पाडली जातात. एकविसाव्या शतकात कुटुंबाच्या अनेक कार्यात मोठया प्रमाणात बदल झालेला आहे. कौटुंबिक जीवनाला योग्य आकार देण्यासाठी कुटुंबातील सदस्यांना अधिकाधिक प्रमाणात आर्थिक आणि व्यावसायिक कार्यात स्वतःला सहभागी करून घ्यावे लागते. कुटुंबावर अवलंबून असणाऱ्या सर्व सभासदांच्या आरोग्याची काळजी घेणे आवश्यक आहे. विशेषतः स्त्री सभासदाना बाळाची व इतर सदस्यांच्या आरोग्य संवर्धनाची जबाबदारी कुटुंब प्रमुख सदस्य म्हणून महिलांना करावी लागते. तसेच सर्वांची काळजी घेण्याचे कार्य आजही कुटुंबातच केले जाते.

कुटुंबावर अवलंबून असणाऱ्या सभासदांच्या आरोग्याचे संरक्षण करण्याचे व आजारग्रस्तांना मदत करण्याचे कार्य मातावर सोपविले जाते. म्हणून मातांना सकस आहार व आरोग्याच्या सर्व सेवा पोहचविणे महत्त्वाचे आहे. कुटुंबातील सभासदांच्या किंवा सदस्यांच्या आरोग्याची काळजी घेणे हे प्रत्येक कुटुंबाचे सामान्य कार्य आहे. घरातील बालकासहित, महिला व सर्व सदस्यांच्या आरोग्याची काळजी घेणे ही कुटुंबातल्या महिला हया योग्य पध्दतीने पार पाडत असतात. भारतासारख्या विस्तारीत व वाढत्या लोकसंख्येच्या देशात आरोग्य सेवा पूर्विने महत्त्वाचे मानले जाते. भारतामध्ये महिला व बालकांना एकत्रितपणे सेवा पोहचविण्याकरीता तसेच महिला व बालकांचे आरोग्य सुदृढ ठेवण्यासाठी एकात्मिक बालविकास सेवा योजना कार्यान्वीत करण्यात आली. योजनेमुळे स्त्रियांना व बालकांना सकस आहार व पोषणा करीता आरोग्य इत्यादी अनेक बाबींचा समावेश करण्यात आला. कुटुंबाचे आरोग्य सुदृढ ठेवण्यासाठी व सर्वांचा सामुदायिक विकास साधण्यासाठी सार्वजनिक आरोग्य सेवा पुरविण्यात येत आहे. आणि सर्वांगीण विकास साधण्याचे कार्य पार पाडले जात आहे.

कुटुंबाचे आरोग्य व शिक्षण :-

बालकांच्या व महिलांच्या आरोग्याचे संवर्धन व संरक्षण करण्यासाठी भारत सरकारने २ ऑक्टोबर १९७५ रोजी महात्मा गांधीच्या जन्मदिनी “एकात्मिक बालविकास सेवा योजना” प्रारंभ करण्यात आली. या योजनेचे मुख्य उद्दिष्टे ०-६ वयोगटातील मुलांचा सकस आहार व आरोग्याची काळजी व त्यामध्ये सुधारणा करणे मुलांच्या मानसशास्त्रीय, शारीरिक व सामाजिक विकासाकरीता योग्य स्वरूपात योजनेद्वारे सेवा सुविधा पोहचविणे, बालमृत्युच्या प्रमाणात घट घडवून आणणे. कुपोषणापासून बालकांचे संरक्षण करणे, गरोदर मातांना व स्तनदा माता किशोरवयीन मुली, प्रौढ महिलांच्या पोषक आहार व आरोग्य शिक्षण व सकस आहाराचा पुरवठा करणे. तसेच विविध लसीकरणाच्या कार्यक्रमांचे आयोजन करणे. या संपूर्ण योजनेची जबाबदारी ही राज्य सरकारवर सोपविलेली आहे. मुलांना पूर्व प्राथमिक शिक्षण व सकस आहार पोहचविण्याचे कार्य आयसिडिएस या योजने मार्फत करण्यात येत आहे.

कुटुंबात आरोग्य शिक्षणाची सुरुवात प्रथमतः स्त्रियांमार्फत मुलांना दिली जाते. कुटुंबाकडून आरोग्याचे संरक्षण करण्याचे पहिले पाऊल टाकण्यात येते. मनुष्याच्या आरोग्याचे संरक्षण करण्यासाठी सर्वांच्या मते प्राधान्य देणे महत्त्वाचे आहे. मुख्यत्वे करून कुटुंबाच्या आरोग्याची जबाबदारी स्त्रियांनी स्विकारावी अशी धारणा झालेली आहे. कमी जास्त प्रमाणात महिला अश्याप्रकारची जबाबदारी स्वीकारीत असते. उदा. पतिला व्यायाम करण्यास प्रवृत्त करावे. पतिच्या ताण-तणावाची पातळी कमी करावी. पतिना धुम्रपानापासून, तंबाखु, सेवनापासून दुर ठेवावे. कुटुंबातील मुलांच्या संरक्षणाकरीता 'स्त्रिया' या आरोग्य रक्षणाची प्रमुख भूमिका

पार पाडतात. मुलांच्या प्रकृतीप्रसंगी दवाखान्यात घेऊन जाते. इत्यादी संपूर्ण जबाबदारी प्रामुख्याने महिला सांभाळत असतात. कुटुंबात स्त्रियांना आरोग्य रक्षणाचे प्रमुख मार्गदर्शक म्हणून ओळखले जाते. या करीता कुटुंबातील महिलांना विकसीत व सक्षम करण्याकरीता त्यांचे आरोग्य सुदृढ ठेवणे महत्वाचे आहे. एकात्मिक बालविकास सेवा योजनांच्या माध्यमातून महिलांना सकस आहार व आरोग्य शिक्षण देऊन कुटुंब प्रमुख म्हणून महत्वाचे स्थान दिले जात आहे. बदलत्या औद्योगिक विकासासोबत महिला व पुरुषांच्या, दोघांच्याही कर्तव्य, भूमिकेमध्ये बदल दिसून येत आहेत. अर्थाजनाच्या कार्यामध्ये स्त्रियांचाही महत्वाचा वाटा आहे. पुरुषांच्या बरोबरीत महिला सुध्दा कार्यामध्ये प्रगती करीत आहे. एकंदरीत सर्व जबाबदाऱ्या सांभाळण्यासोबतच महिला मुलांना, चांगल्या सवयी रूजविण्याचे कार्य करावे लागते. मुलांना वेळेवर जेवन देणे तसेच झोपण्यास प्रवृत्त करण्याचे कार्य महिलांकडून केले जाते. महिलांना कुटुंबात आरोग्याच्या काळजीसोबतच इतर कार्य सुध्दा पार पाडीत असतात. आयसिडिएस माध्यमातून महिलांचा विकास व सक्षमीकरण करण्याचे कार्य योग्य रितीने प्रगतीवर आहे. कुटुंबातील महिलांना आरोग्य शिक्षण दिल्यामुळे सर्वांना आरोग्य शिक्षणाचे धडे शिकविण्याचे कार्य महिलांकडून पार पाडण्यात येत आहे.

निष्कर्ष :-

1. ग्रामीण महिलांनी अंगणवाडी केंद्रांतर्गत आरोग्य व पूरक पोषक आहारविषयक शिक्षणाची सेवा व सुविधा उपलब्ध करून दिली जाते.
2. ग्रामीण महिलांनी गर्भवती व स्तनदा माता यांना वेळोवेळी पूरक पोषक आहार दिला जातो.
3. ग्रामीण महिलांनी पूरक पोषक आहारामुळे आरोग्य सुदृढ होते.
4. ग्रामीण महिलांनी महिलांना पूरक पोषक आहार व आरोग्यविषयक सेवा एकत्रितपणे दिली जात असल्यामुळे महिला समाधानी आहेत.
5. ग्रामीण महिलांनी संभाव्य धोका असलेल्या गर्भवती महिलांची विशेष काळजी घेतली जाते.
6. ग्रामीण महिलांनी गंभीर धोका पातळीवरील गर्भवती महिला व नवजात बाळाला वैद्यकीय उपचारासाठी अंगणवाडी केंद्रांतर्गत रेफर केले जाते.
7. अधिकाधिक ग्रामीण महिलांनी अंगणवाडी केंद्रांतर्गत आरोग्यशिक्षणाच्या माध्यमातून कुटुंब नियोजनाची माहिती दिली जाते.
8. ग्रामीण महिलांनी अंगणवाडी केंद्रांमार्फत गरोदर महिलांना प्रसूतीच्या पूर्वी ३ ते ४ वेळा आरोग्य तपासणीची सेवा उपलब्ध करून दिली जाते.
9. ग्रामीण महिलांनी पूरक पोषक आहार व आरोग्य सेवांची जनजागृती केली जाते.

संदर्भ ग्रंथ :-

1. बल्लाळ प्रभा (१९९६), आरोग्य आणि आजार, डायमंड पब्लिकेशन, सदाशिव पेठ, लेले संकुल, पूणे
2. घाटोळे रा. ना., समाजशास्त्रीय संशोधन तत्वे व पद्धती, मंगेश प्रकाशन, नागपूर
3. कुलहरी सुशिल, पोषण एवं आहार विज्ञान, नेहा पब्लिकेशन अॅण्ड डिस्ट्रिब्युटर, न्यु दिल्ली
4. महाजणी स्नेहा (२०१४), आहार शास्त्राची मुलतत्वे, मंगेश प्रकाशन, नागपूर,
5. स्वामिनाथन एम (२००३), आहार एवं पोषण, एन. आर. ब्रदर्स, इन्दौर

बदलत्या हवामानाचा भारतातील तांदूळ उत्पादनावरील परिणाम

प्रा. सुकुमार दत्ता पाटील¹ डॉ. एल.एच.पाटील²

¹डॉ. सी. डी. देशमुख वाणिज्य आणि सौ. के. जी. ताम्हाणे कला महाविद्यालय रोहा, रायगड .

²उपप्राचार्य आणि संशोधन मार्गदर्शक, शिवाजी महाविद्यालय,(अर्थशास्त्र विभाग) उदगीर, जिल्हा- लातूर.

मेल. patilsdeco@gmail.com

DOI- 10.5281/zenodo.7073310

गोषवारा :-

पर्यावरण आणि सजीव सृष्टी यांचा अगदी जवळचा संबंध आहे. अगदी विश्वाच्या निर्मितीपासून हा संबंध अगदी अबाधित राहिला आहे. सजीव सृष्टीमध्ये मानव सजीव, प्राणी सजीव आणि वनस्पती सजीव यांचा समावेश होतो. पण औद्योगिक क्रांती झाल्यापासून ते आजपर्यंत संपूर्ण जगात औद्योगिकीकरणाचा वेग वाढत गेला आणि पृथ्वीवरील पर्यावरणाचे मोठ्या प्रमाणावर प्रदूषण झाले. या प्रदूषणाचा परिणाम हवामान बदलात झाला आणि त्यामुळे मोठ्या प्रमाणावर शेती उत्पादनावर त्याचा परिणाम झाला. तांदूळ हे पीक म्हणजे जगातील जवळ-जवळ अर्ध्या लोकांचे प्रमुख अन्न आहे. हवामान बदलांमुळे तांदूळ उत्पादनावरही अनिष्ट परिणाम झाला. भारत हा जगातील तांदूळ उत्पादन करणारा प्रमुख देश आहे. जगातील एकूण तांदूळ उत्पादनाच्या जवळ जवळ २०% तांदूळ उत्पादन हे भारतात होते. त्यामुळे हवामान बदलाचा तांदूळ उत्पादनावर कसा परिणाम होतो याचा अभ्यास होणे महत्त्वाचे आहे.

प्रस्तावना :-

हवामान बदल म्हणजे हवामानाची अशी अवस्था की त्या अवस्थेमध्ये मोठ्या प्रमाणावर औद्योगिकीकरण, इंधनाचा अतिरिक्त वापर, दररोज वाढणारी वाहनांची वाढती संख्या आणि विविध मानवी क्रिया या सर्वांचा एकत्रित परिणाम होऊन एका पर्याप्त स्थितीच्या पलीकडे हवामानाची स्थिती जाते ती अवस्था होय. या प्रदूषणामुळे हवेमध्ये विविध विषारी वायूंचे प्रमाण वाढते तसेच जागतिक तापमानात मोठ्या प्रमाणात वाढ होते आणि त्याचा अनिष्ट परिणाम हा संपूर्ण सजीव सृष्टीवर होतो. कधी- कधी या हवामान बदलामुळे आम्ल पर्जन्य आणि कृष्ण पर्जन्याचा धोका निर्माण होऊन त्याचा अनिष्ट परिणाम हा अन्नधान्य उत्पादनावर होतो. आज संपूर्ण जग हे हवामान बदलाच्या समस्येला तोंड देत असून या हवामान बदलाचा अनिष्ट परिणाम हा विविध शेती उत्पादनावर होत आहे. २०१५ च्या संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या कृषी विभागाच्या अहवालानुसार बदलत्या हवामानाचा विविध शेती उत्पादनावर तसेच उत्पादकतेवर आणि उत्पादीत मालाच्या गुणवत्तेवर अनिष्ट परिणाम होत आहे. आज जगातील मोठ्या प्रमाणावरील औद्योगिकीकरण आणि त्यामुळे होणाऱ्या प्रदूषणामुळे येणाऱ्या १०० वर्षांत संपूर्ण जगाचे तापमान हे साधारणपणे १.५ ते ४.५ अंश सेल्सिअस इतके वाढेल असा हवामान तज्ञांचा अंदाज आहे. म्हणजेच येणाऱ्या भविष्यात संपूर्ण जगाला ' जागतिक तापमान वाढीची समस्या' भेडसावेल आणि असे झाल्यास उत्तर ध्रुवावरील बर्फ वितळून समुद्राच्या पाण्याची पातळी वाढेल आणि त्यामुळे समुद्र किनाऱ्यावर असणारे देश आणि शहरे यांना धोका निर्माण होईल आणि जगात जिथे समुद्र किनाऱ्यावर भातशेती केली जाते त्या भातशेतीत जर समुद्राचे पाणी शिरले तर तेथील भातशेती उध्वस्त होईल. उदा. महाराष्ट्राला ७२० कि. मी. लांबीचा समुद्र किनारा लाभला असून या संपूर्ण पट्ट्यात जागतिक तापमान वाढीचा परिणाम जाणवून तेथील भातशेती उध्वस्त होईल अशी भीती निर्माण झाली आहे.

अभ्यासाची उद्दिष्टे :-

१) पर्यावरण आणि सजीव सृष्टी यातील संबंध अभ्यासणे

२) हवामान बदलाची संकल्पना जाणून घेणे

३) हवामान बदलाचा भारतातील तांदूळ उत्पादनावरील परिणाम अभ्यासणे

हवामान बदलाचा भारतीय शेतीवरील परिणाम :-

भारत हा शेतीप्रधान देश आहे. भारतातील ५८.२% लोक शेती व्यवसायात गुंतलेले असून भारतातील ग्रामीण भागात रोजगार पुरविणारे शेती हे एक मोठे साधन मानले जाते. भारतातील हवामानात प्रादेशिक विविधता असून भारतातील २/३ भाग हा कमी पावसाच्या विभागात येतो. भारतातील पीक पद्धतीत विविधता असून यामध्ये खरीप हंगाम आणि रब्बी हंगाम अशा दोन हंगामातील विविध पिकांचा समावेश होतो. त्याचप्रमाणे भारतातील बहुतांश शेती ही पावसावर अवलंबून आहे. त्यामुळे भारतातील पावसाच्या प्रमाणाचाही परिणाम भारतातील पीक रचनेवर होतो. भारतातील पावसाचे प्रमाण आणि तापमान हे भारतातील पीकरचना दर्शविते. भारतात सर्वसाधारणपणे पावसाळ्यात तापमान थोडे कमी असते तर हिवाळ्यात ते जास्त असते. पावसाळ्यात प्रामुख्याने भारतात खरीप पिकांची लागवड केली जाते तर हिवाळ्यात रब्बी पिकांची लागवड केली जाते. असा अंदाज आहे की भारतात २१ व्या शतकाच्या शेवटी पावसाचे प्रमाण हे १० ते १२ % नी वाढेल तर वार्षिक तापमान हे ३ ते ५ अंश सेल्सिअसनी वाढेल. भारताचा प्रमुख व्यवसाय हा शेती असून स्थूल देशांतर्गत उत्पादनात भारतीय शेतीचा वाटा हा १५.७ % इतका असून निर्यातीमधील वाटा हा १०.२३% इतका आहे. आणि भारतातील ५८.२% लोकसंख्येला शेती व्यवसायात रोजगार मिळाला आहे. भारतातील शेती ही प्रामुख्याने दक्षिण पश्चिमी मोसमी पावसावर अवलंबून आहे. भारतातील एकूण १४०.३ दशलक्ष लागवडीखालील क्षेत्रापैकी ६०.९ दशलक्ष हेक्टर क्षेत्र सिंचनाखाली असून बाकी सर्व जमीन ही पावसावर अवलंबून आहे.

भारतीय कृषी विज्ञान अभ्यासानुसार जर तापमान ४ °C नी वाढले तर अन्नधान्य उत्पादन २५ ते ४० %नी कमी होते. विकसनशील देशात पीकरचनेत बदल करणे किंवा

जलसिंचन सुविधा मोठ्या प्रमाणावर निर्माण करणे शक्य नसते. क्लाइन यांच्या मतानुसार भारतातील शेती उत्पादन हे मोठ्या प्रमाणावर घटत चालले आहे. २००३ ते २०८० या कालावधीत दक्षिण भारतातील अन्नधान्य उत्पादन हे सर्वसाधारणपणे १५ ते २५ % पर्यंत घटेल तर उत्तर भारतात हेच उत्पादन २५% पर्यंत घटेल असा अंदाज आहे. त्यामुळे येणाऱ्या भविष्यकाळात भारतातील वाढत्या तापमानामुळे शेती उत्पादनात घट होईल. कृषी तज्ञांच्या अंदाजानुसार २१ व्या शतकाच्या अखेरीस वाढत्या तापमानामुळे भारतातील शेती उत्पादकता ही ४८.६३ % नी कमी होईल आणि शेतकऱ्यांचे उत्पन्न कमी होईल. विकसनशील देशांत हवामान बदलाचा शेती उत्पादनावर तसेच उत्पादकतेवर आणि उत्पादनाच्या गुणवत्तेवर अनिष्ट परिणाम होतो व हवामान बदलामुळे भारतातील गरीब आणि श्रीमंत शेतकरी यांचे मोठे नुकसान होणार आहे . तसे पाहिले तर हवामान बदलामुळे भारतातील तांदूळ उत्पादनात बदल होणार याच्या अभ्यासाला १९९० पासूनच सुरुवात झाली.

भारतातील तांदूळ उत्पादन :-

जगातील तांदूळ उत्पादन करणाऱ्या देशांपैकी भारत हा एक प्रमुख देश मानला जातो. जगातील एकूण तांदूळ उत्पादनापैकी २०% तांदळाचे उत्पादन हे भारतात होते. दक्षिण आणि उत्तर भारतातील लोकांचे प्रमुख अन्न हे तांदूळ आहे. १९६० मध्ये भारतातील तांदळाचे उत्पादन हे ५३.६ दशलक्ष टन इतके होते ते १९९० पर्यंत ७४.६ दशलक्ष टनांपर्यंत वाढले. २००८-०९ मध्ये भारतातील तांदूळ उत्पादन हे ९९.१८ दशलक्ष टन इतके होते . हेच उत्पादन २००९-१० मध्ये ८९.१४ दशलक्ष टनांपर्यंत खाली आले. कारण २००९ - १० मध्ये भारताच्या कांही भागात दुष्काळ पडला आणि तांदळाचे उत्पादन कमी झाले . २०१०- ११ मध्ये भारतातील तांदळाचे उत्पादन हे १०० दशलक्ष मेट्रिक टन इतके होते. तर हेच उत्पादन २०११ - १२ मध्ये १०४.३२ दशलक्ष टनांपर्यंत पोहोचले. १९५० ते २०१५ या कालावधीत भारतातील तांदळाच्या लागवडीखालील क्षेत्र व उत्पादन हे वाढत गेले. तांदूळ पिकासाठी २५°C पर्यंत तापमान आणि १०० से. मी . इतक्या पावसाची आवश्यकता असते.

हवामान बदलाचा तांदूळ उत्पादनावर होणारा परिणाम :-

येणाऱ्या भविष्यकाळात भारतातील बदलत्या हवामानाचा तांदूळ उत्पादनावर कोणता अनिष्ट परिणाम होईल हे पाहणे महत्त्वाचे ठरणार आहे. भारतातील हवामान बदलाचा भारतातील तांदूळ उत्पादनावर नेमका काय परिणाम होईल याचा अभ्यास अनेक कृषी संशोधन संस्थांनी वेळोवेळी केला आहे. भारत हा एक खंडप्राय देश असून भारतातील हवामानात प्रादेशिक स्तरावर भिन्नता दिसून येते. त्यामुळे या हवामान बदलाचा तांदूळ उत्पादनावर वेळोवेळी परिणाम होतो. १९९१ ते २०१६ या कालावधीत भारतातील हवामान बदलाचा भारतातील तांदूळ उत्पादनावर भविष्यात कोणते परिणाम होतील यासंबंधी संशोधन करण्यात आले आणि त्या संशोधनातून अंदाजही

व्यक्त करण्यात आले त्याचा आढावा पुढीलप्रमाणे घेता येईल.

१९९१ ते २००० मधील अंदाज

सिन्हा आणि स्वामिनाथन यांनी भविष्यातील हवामान बदलामुळे तांदूळ उत्पादनावर होऊ शकणाऱ्या परिणामांचा अभ्यास करून आपले मत मांडले आहे तसेच तापमान वाढीचा तांदूळ उत्पादनावर काय परिणाम होईल हे सांगितले आहे . त्यांच्या मतानुसार जर तापमान २ °C नी वाढले तर तांदूळ उत्पादनात ०.७५ मे. टन दर प्रति हेक्टरी घट होईल. आणि ही घट प्रामुख्याने पंजाब आणि हरियाणा या दोन राज्यांत होईल. याउलट समुद्रकिनारी जिथे तांदळाची लागवड होते तेथे तांदूळ उत्पादनाचे प्रमाण हे फक्त ०.०४ ते ०.०८ मे. टन दर हेक्टरी इतकेच कमी होईल.

२००१ ते २०१० मधील अंदाज

२००१ मध्ये श्री राठोड यांनी CERES जातीच्या भाताच्या वाणाच्या अभ्यासावरून हवामान बदलाचा भात उत्पादनावर काय परिणाम होईल याचा अभ्यास केला आणि त्यावरून निष्कर्ष काढला की २०४० - २०४९ कालावधीसाठी होणाऱ्या तापमान बदलाच्या अनुमानावरून जिथे पर्जन्यमान आणि कार्बनडाय ऑक्साईड यांचे प्रमाण स्थिर राहिल तेथे म्हणजे उत्तर पश्चिम भारतात तांदूळ उत्पादनात ५ ते ८ % , दक्षिण भारतात ३ ते १७% ,आणि मध्य भारतात २ % इतकी तांदूळ उत्पादनात घट होईल. २०३० पर्यंत संपूर्ण भारतात सरासरी तापमान ०.५ °C नी वाढणार आहे आणि हे तापमान उन्हाळा आणि हिवाळा या दोन्ही ऋतूत वाढणार आहे . उत्तर भारत आणि उत्तर पश्चिम भारतात हे तापमान सर्वसाधारणपणे १ °C नी वाढणार आहे. २०५० सालापर्यंत हेच तापमान १ ते १.५ °C पर्यंत वाढणार आहे. परंतु पंजाब आणि उत्तर प्रदेश तसेच तांदूळ पिकाविनाऱ्या उत्तरेकडील राज्यांमध्ये २०८० सालापर्यंत सरासरी तापमान हे २°C पर्यंत वाढेल असा अंदाज आहे. या वाढणाऱ्या तापमानामुळे पावसाचे प्रमाण कमी होईल आणि पर्जन्यमानात विषमता निर्माण होईल. यामुळे कांही भागात दुष्काळ तर कांही भागात महापुरासारखी परिस्थिती निर्माण होईल आणि तांदूळ उत्पादनात घट होईल.

निष्कर्ष :-

येणाऱ्या भविष्यकाळात बदलत्या हवामानाचा तांदूळ उत्पादनावर होणारा परिणाम हा भारतासहित जगातील इतर देशांनाही सहन करावा लागणार आहे. कारण आज जगातील अर्ध्यापेक्षा अधिक लोकसंख्येचे तांदूळ हे मुख्य अन्नधान्य पिक आहे. त्यामुळे हवामान बदलाचा हा परिणाम फारच गंभीर आहे. हवामान बदलाचा तांदूळ उत्पादनावर भविष्यात काय परिणाम होईल याचा अभ्यास आज अनेक कृषीविषयक संस्थांनी केला आहे. त्या सर्वांनी एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष काढला आहे आणि तो म्हणजे भविष्यात हवामान बदलाचा तांदूळ उत्पादनावर अनिष्ट परिणाम होईल. जर तापमानात मोठी वाढ झाली आणि कार्बनडाय ऑक्साईडचे प्रमाण कमी झाले तर तांदूळ उत्पादनात घट होईल आणि जर याउलट तापमानात कमी

वाढ झाली आणि कार्बनडाय ऑक्साईडचे प्रमाण वाढले तर तांदूळ उत्पादनात वाढ होईल.

यामुळेच येणाऱ्या भविष्यात तांदूळ उत्पादनात वाढ घडवून आणण्यासाठी तापमानात सततची होणारी वाढ थांबवली पाहिजे यासाठी साधनसंपत्तीचा योग्य वापर , वृक्ष संवर्धन इ . कार्यक्रम हाती घेतले पाहिजेत.

संदर्भ -

1. Achanta AN 1993 – An assessment of the potential impact of global warming on Indian rice production
2. पर्यावरण शिक्षण -सेठ प्रकाशन मुंबई.
3. भात शेती - श्री.शिवाजी ठोंबरे
4. Aggrawal PK and Mall R.K. 2002 – Climate change and Rice yield in diverse agro environment of India
5. <https://www.marathimati.net/raigad-district/>
6. Acharya, S. S. and Jogi, R. L (2004) Farm input subsidies in Indian agriculture. *Agricultural Economics Research Review*, 17 (1):11-41.

AERC (2008) Factors affecting fertilizer consumption in India.

7. *Agricultural Situation in India*, (August): 353-356. Chopra, Kanchan (1984) Distribution of agricultural assets in Punjab: Some aspects of inequality.
8. *Economic and Political Weekly*, 19 (13): A29 - A38.
9. RBI (2008) Handbook of Statistics on Indian Economy. Report published by Reserve Bank of India, Bombay.
10. Singh, Richa (2004) Equity in fertilizer subsidy distribution. *Economic and Political Weekly*, (January 17): 295-300.
11. Vollrath, Dietrich (2007) Land distribution and international agricultural Productivity.
12. *American Journal of Agricultural Economics*, 89 (1): 202-216. Wheeler, Rachel Sabates (2004)

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Email- rbhole1965@gmail.com

Visit-www.jrdrvb.com

Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102
